सिं घी जै न ग्र न्थ मा ला

[ग्रन्थांक ४२]

श्री जिनपालोपाध्यादि-सङ्कलित

खरतरगच्छ बृहद्गुर्वावलि



SINGHI JAIN SERIES

[NUMBER 42]

KHARATARA GACCHA BRIHAD GURVAVALI

(A COLLECTION OF WORKS OF JINAPALA UPADHYAYA AND OTHERS RELATING TO THE SPIRITUAL LINEAGE OF THE EMINENT ACARYAS OF THE KHARATARA GACCHA)

SINGHI JAIN SERIES

A COLLECTION OF CRITICAL EDITIONS OF IMPORTANT JAIN CANONICAL, PHILOSOPHICAL HISTORICAL LITERARY, NARRATIVE AND OTHER WORKS IN PRAKRIT, SANSKRIT, APABHRAMŚA AND OLD RAJASTHANI GUJARATI LANGUAGES, AND OF NEW STUDIES BY COMPETENT RESEARCH SCHOLARS

•

ESTABLISHED

IN THE SACRED MEMORY OF THE SAINT LIKE LATE SETH

ŚRĪ DĀLCHANDJĪ SINGHĪ

OF CALCUTTA

BY

HIS LATE DEVOTED SON

DANASILA - SAHITYARASIKA - SANSKRITIPRIYA

SRI BAHADUR SINGH SINGHI

•

DIRECTOR AND GENERAL EDITOR

ACHĀRYA JINA VIJAYA MUNI

•

PUBLISHED

UNDER THE EXCLUSIVE PATRONAGE OF

SRI RAJENDRA SINGH SINGHI

AND

SRI NARENDRA SINGH SINGHI

BY THE DIRECTOR OF

SINGHI JAIN SHASTRA SHIKSHAPITH

BHARATIYA VIDYA BHAVAN

BOMBAY

KHARATARA GACCHA BRIHAD GURVĀVALI

(A COLLECTION OF WORKS OF JINAPALA UPADHYAYA AND OTHERS RELATING TO THE SPIRITUAL LINEAGE OF THE EMINENT ACARYAS OF THE KHARATARA GACCHA)

•

COLLECTED AND EDITED FROM VARIOUS OLD MANUSCRIPTS

BY

ACHARYA, JINA VIJAYA MUNI

(Honorary Member of the German Oriental Society, Germany; Bhāndārkar Oriental Research Institute, Poona; Vishveshvranand Vaidic Research Institute, Hosiyarpur; and Gujarat Sāhitya Sabhā, Ahmedabad.)
Honorary Director, Rajasthan Oriental Research Institute, Jaipur.
General Editor, Rajasthan Puratan Granthamala; etc.



PUBLISHED BY THE ADHIṢṬHĀTĀ

Singhi Jain Shastra Shikshapith

BHARATIYA VIDYA BHAVAN

BOMBAY

V. E. 2012] (First Edition) [1956 A. D.



Vol. 42] [Price Rs. 7-0-0

कलकत्तानिवासी

साधुचरित-श्रेष्ठिवर्य श्रीमद् डालचन्दजी सिंघी पुण्यस्मृतिनिमित्त

प्रतिष्ठापित एवं प्रकाशित

सिंघी जैन ग्रन्थमाला

[जैन आगमिक, दार्शनिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, कथात्मक – इत्यादि विविधविषयगुम्फित प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, प्राचीनगूर्जर-राजस्थानी आदि नानाभाषानिबद्ध सार्वजनीन पुरातन वाङ्मय तथा नूतन संशोधनात्मक साहित्य प्रकाशिनी सर्वश्रेष्ठ जैन ग्रन्थावलि]

प्रतिष्ठाता

श्रीमद्-डालचन्दजी-सिंघीसत्पुत्र

स्व० दानशील-साहित्यरसिक-संस्कृतिप्रिय

श्रीमद् बहादुर सिंहजी सिंघी



प्रधान सम्पादक तथा संचालक

आचार्य, जिनविजय मुनि

अधिष्ठाता–सिंघी जैन शास्त्र शिक्षापीठ

*

संरक्षक

श्री राजेन्द्र सिंह सिंघी तथा श्री नरेन्द्र सिंह सिंघी

प्रकाशनकर्ता – अधिष्ठाता

सिंघी जैन शास्त्र शिक्षापीठ

भारतीय विद्या भवन, बम्बई

प्रकाशक – जयन्तकृष्ण, ह. दवे, ऑनररी डॉयरेक्टर भारतीय विद्या भवन, चौपाटी रोड, बम्बई, नं. ७
मुद्रक – लक्ष्मीबाई नारायण चौधरी, निर्णयसागर प्रेस, २६-२८ कोलभाट स्ट्रीट, बम्बई, नं. २

श्री जिनपालोपाध्यायादि-विद्वत्कर्तृक

खरतरगच्छबृहद्गुर्वावलि

सङ्ग्राहक एवं संपादक

आचार्य, जिनविजय मुनि

ऑनररी मेंबर

जर्मन ओरिएण्टल सोसाईटी, जर्मनी; भाण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, (दक्षिण); गुजरात साहित्यसभा, अहमदाबाद (गुजरात); विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध प्रतिष्ठान, होशियारपुर (पंजाब)

ऑनररी डायरेक्टर

राजस्थान ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जयपुर (राजस्थान)

निवृत्त सम्मान्य नियामक भारतीय विद्या भवन, बम्बई



प्रकाशनकर्ता-अधिष्ठाता

सिंघी जैन शास्त्र शिक्षापीठ

भारतीय विद्या भवन, बम्बई

विक्रमाब्द २०१२] प्रथमावृत्ति [खिस्ताब्द १९५६

ग्रन्थांक ४२] [मूल्य रू. ७-०-०

॥ सिंघीजैनग्रन्थमालासम्पादकप्रशस्तिः ॥

स्वस्ति श्रीमेदपाटाख्यो देशो भारतविश्रुतः । रूपाहेलीति सन्नाम्नी पुरिका तत्र सुस्थिता ॥ १

सदाचार-विचाराभ्यां प्राचीननृपतेः समः । श्रीमच्चतुरसिंहोऽत्र राठोडान्वयभूमिपः ॥ २

तत्र श्रीवृद्धिसिंहोऽभूद् राजपुत्रः प्रसिद्धिभाक् । क्षात्रधर्मधनो यश्च परमारकुलाग्रणीः ॥ ३

मुञ्ज-भोजमुखा भूपा जाता यस्मिन् महाकुले । किं वर्ण्यते कुलीनत्वं तत्कुलजातजन्मनः ॥ ४

पत्नी राजकुमारीति तस्याभूद् गुणसंहिता । चातुर्य-रूप-लावण्य-सुवाक् सौजन्यभूषिता ॥ ५

क्षत्रियाणीप्रभापूर्णां शौर्योद्दीप्तमुखाकृतिम् । यां दृष्ट्वैव जनो मेने राजन्यकुलजा त्वियम् ॥ ६

पुत्रः किसनसिंहाख्यो जातस्तयोरतिप्रियः । रणमल्ल इति चान्यद् यन्नाम जननीकृतम् ॥ ७

श्रीदेवीहंसनामाऽत्र राजपूज्यो यतीश्वरः । ज्योतिर्भैषज्यविद्यानां पारगामी जनप्रियः ॥ ८

आगतो मरुदेशाद् यो भ्रमन् जनपदान् बहून् । जातः श्रीवृद्धिसिंहस्य प्रीति-श्रद्धास्पदं परम् ॥ ९

तेनाथाप्रतिमप्रेम्णा स तत्सूनुः स्वसन्निधौ । रक्षितः शिक्षितः सम्यक्, कृतो जैनमतानुगः ॥ १०

दौर्भाग्यात् तच्छिशोर्बाल्ये गुरु-तातौ दिवंगतौ । विमूढः स्वगृहात् सोऽथ यदृच्छया विनिर्गतः ॥ ११

तथा च–

भ्रान्त्वा नैकेषु देशेषु संसेव्य च बहून् नरान् । दीक्षितो मुण्डितो भूत्वा जातो जैनमुनिस्ततः ॥ १२

ज्ञातान्यनेकशास्त्राणि नानाधर्ममतानि च । मध्यस्थवृत्तिना तेन तत्त्वातत्त्वगवेषिणा ॥ १३

अधीता विविधा भाषा भारतीया युरोपजाः । अनेका लिपयोऽप्येवं प्रत्न-नूतनकालिकाः ॥ १४

येन प्रकाशिता नैके ग्रन्था विद्वत्प्रशंसिताः । लिखिता बहवो लेखा ऐतिह्यतथ्यगुम्फिताः ॥ १५

बहुभिः सुविद्वद्भिस्तन्मण्डलैश्च स सत्कृतः । जिनविजयनाम्नाऽयं विख्यात सर्वत्राभवद् ॥ १६

तस्य तां विश्रुतिं ज्ञात्वा श्रीमद्गान्धीमहात्मना । आहूतः सादरं पुण्यपत्तनात् स्वयमन्यदा ॥ १७

पुरे चाहम्मदाबादे राष्ट्रीयः शिक्षणालयः । विद्यापीठ इति ख्यात्या प्रतिष्ठितो यदाऽभवत् ॥ १८

आचार्यत्वेन तत्रोच्चैर्नियुक्तः स महात्मना । रस-मुनि-निधीन्द्वब्दे पुरातत्त्वाख्यमन्दिरे ॥ १९

वर्षाणामष्टकं यावत् सम्भूष्य तत् पदं ततः । गत्वा जर्मनराष्ट्रे स तत्संस्कृतिमधीतवान् ॥ २०

तत आगत्य सँल्लग्नो राष्ट्रकार्ये च सक्रियम् । कारावासोऽपि सम्प्राप्तो येन स्वातन्त्र्यसङ्गरे ॥ २१

क्रमात् ततो विनिर्मुक्तः स्थितः शान्तिनिकेतने । विश्ववन्द्यकवीन्द्रश्रीरवीन्द्रनाथभूषिते ॥ २२

सिंघीपदयुतं जैनज्ञानपीठं तदाश्रितम् । स्थापितं तत्र सिंघीश्रीडालचन्दस्य सूनुना ॥ २३

श्रीबहादुरसिंहेन दानवीरेण धीमता । स्मृत्यर्थं निजतातस्य जैनज्ञानप्रसारकम् ॥ २४

प्रतिष्ठितश्च तस्यासौ पदेऽधिष्ठातृसञ्ज्ञके । अध्यापयन् वरान् शिष्यान् ग्रन्थयन् जैनवाङ्मयम् ॥ २५

तस्यैव प्रेरणां प्राप्य श्रीसिंघीकुलकेतुना । स्वपितृश्रेयसे ह्येषा प्रारब्धा ग्रन्थमालिका ॥ २६

अथैवं विगतं तस्य वर्षाणामष्टकं पुनः । ग्रन्थमालाविकासार्थिप्रवृत्तिषु प्रयस्यतः ॥ २७

बाणे-रत्न-नवेन्द्वब्दे मुंबाईनगरीस्थितः । मुंशीति बिरुदख्यातः कन्हैयालालधीसखः ॥ २८

प्रवृत्तो भारतीयानां विद्यानां पीठनिर्मितौ । कर्मनिष्ठस्य तस्याभूत् प्रयत्नः सफलोऽचिरात् ॥ २९

विदुषां श्रीमतां योगात् पीठो जातः प्रतिष्ठितः । भारतीयपदोपेत विद्याभवनसञ्ज्ञया ॥ ३०

आहूतः सहकार्यार्थं स मुनिस्तेन सुहृदा । ततःप्रभृति तत्रापि तत्कार्ये सुप्रवृत्तवान् ॥ ३१

तद्भवनेऽन्यदा तस्य सेवाऽधिका ह्यपेक्षिता । स्वीकृता च सद्भावेन साऽप्याचार्यपदाश्रिता ॥ ३२

नन्द-निध्यङ्क-चन्द्राब्दे वैक्रमे विहिता पुनः । एतद्ग्रन्थावलीस्थैर्यकृत् तेन नव्ययोजना ॥ ३३

परामर्शात् ततस्तस्य श्रीसिंघीकुलभास्वता । भाविद्याभवनायेयं ग्रन्थमाला समर्पिता ॥ ३४

प्रदत्ता दशसाहस्री पुनस्तस्योपदेशतः । स्वपितृस्मृतिमन्दिरकरणाय सुकीर्तिना ॥ ३५

दैवादल्पे गते काले सिंघीवर्यो दिवंगतः । यस्तस्य ज्ञानसेवायां साहाय्यमकरोत् महत् ॥ ३६

पितृकार्यप्रगत्यर्थं यत्नशीलैस्तदात्मजैः । राजेन्द्रसिंहमुख्यैश्च सत्कृतं तद्वचस्ततः ॥ ३७

पुण्यश्लोकपितुर्नाम्ना ग्रन्थागारकृते पुनः । बन्धुज्येष्ठो गुणश्रेष्ठो ह्यर्द्धलक्षं धनं ददौ ॥ ३८

ग्रन्थमालाप्रसिद्ध्यर्थं पितृवत् तस्य काङ्क्षितम् । श्रीसिंघीबन्धुभिः सर्वं तद्गिराऽनुविधीयते ॥ ३९

विद्वज्जनकृताह्लादा सच्चिदानन्ददा सदा । चिरं नन्दत्वियं लोके जिनविजयभारती ॥ ४०

*

खरतरगच्छ-बृहद्गुर्वावलि-विषयानुक्रम



वृद्धाचार्यप्रबन्धावलि

प्रास्ताविक वक्तव्य ।

सिंघी जैन ग्रन्थमालाके ४२ वें गुच्छकके रूपमें, प्रस्तुत होने वाली इस 'खरतर गच्छीय युगप्रधानाचार्य गुर्वावली' (संक्षेपमें – खरतर बृहद् गुर्वावली) की प्राचीन हस्तलिखित प्रति, मूलतः बीकानेर निवासी श्रीयुत अगरचन्दजी नाहटाको, वहांके सुप्रसिद्ध क्षमाकल्याणजीके ग्रन्थभंडारमें उपलब्ध हुई थी। कोई १९-२० वर्ष पहले, इनने उस प्रतिको हमें देखनेके लिए भेजा। ग्रन्थको देखनेसे, हमें ऐतिहासिक दृष्टिसे यह बहुत महत्त्वका मालूम दिया, अतः प्रस्तुत ग्रन्थमालामें इसे प्रकाशित करनेका हमने निश्चय किया। तदनुसार प्रेसमें देने योग्य ग्रन्थकी प्रतिलिपि (प्रेसकॉपी) कर वाई गई। प्रतिलिपिके पढने पर ज्ञात हुआ कि मूल प्रति बहुत ही अशुद्ध रूपमें लिखी गई है। प्रत्येक पंक्ति अशुद्धप्राय ज्ञात हुई। अतः इसका कोई प्रत्यन्तर कहींसे उपलब्ध हो तो उसे प्राप्त करनेका प्रयत्न किया गया पर उसमें हमें सफलता नहीं मिली। तब उसी प्रतिको वारंवार आद्योपान्त पढ पढ कर, उसकी अशुद्धियोंका तारण किया गया, तो ज्ञात हुआ कि, जिस लहिया (लिपिकारक) ने यह प्रति लिखी है, उसने अपने सन्मुखवाली मूलाधार प्रतिके कुछ अक्षरोंको, भ्रमसे कुछ अन्य ही अक्षर समझ समझ कर, उनके स्थान पर, अपने अक्षर ज्ञानके मुताबिक, अन्य अक्षर लिख डाले हैं; और इससे, ग्रन्थ बहुत ही अशुद्ध हो गया है। ग्रन्थगत विषय हमारे लिये सुपरिचित था और इस प्रकारकी अन्यान्य अनेक छोटी-बडी गुर्वावलियां – पट्टावलियां भी हमारे संग्रहमें उपलब्ध थीं; अतः तदनुसार हमने सारे ग्रन्थके पाठको शुद्ध करनेका यथाशक्य प्रयत्न किया। कई महिनोंके परिश्रमके बाद हम इस ग्रन्थकी शुद्ध प्रतिलिपि करनेमें सफल हुए। बादमें हमें इस गुर्वावलिकी एक अन्य त्रुटित और अपूर्ण प्रति प्राप्त हुई, जिसके साथ मिलान करने पर हमें ज्ञात हुआ कि हमने जो पाठकी शुद्धि की है वह ठीक उस प्रतिमें उसी तरह मिल रहा है। उस अपूर्ण प्रतिमें, कुछ पाठभेद भी दृष्टिगोचर हुए, जिनको हमने इस मुद्रित पाठके नीचे, पाद-टिप्पनीमें दे दिये हैं। वह अपूर्ण प्रति केवल ५ पत्रेकी थी, जो प्रस्तुत ग्रन्थके २३ वें पृष्ठ पर छपी हुई १२ वीं पंक्तिके 'श्री जिनपतिसूरिरिति नाम कृतम्।' इस वाक्यके साथ खण्डित हो जाती है।

इस गुर्वावलिकी उक्त मूल प्रतिके दो पृष्ठोंका ब्लॉक बनवा कर, उनका प्रतिचित्र साथ दिया जा रहा है, जिससे मूल प्रतिके आकार-प्रकारका एवं लिपिके स्वरूपका तादृश ज्ञान हो सकेगा।

इस ग्रन्थका मुद्रण कार्य बहुत समयसे समाप्त हुआ पडा है पर विधिके किसी अज्ञात संकेतानुसार हम अभी तक इसको प्रसिद्धिमें रख नहीं सके। हमारी इच्छा रही कि इस विशिष्ट प्रकारकी ऐतिहासिक गुर्वावलिसे संबद्ध, तत्कालीन जैन श्वेताम्बर संप्रदायों और गच्छोंके बारेमें भी, विस्तृत ऊहापोहात्मक निबन्ध लिखा जाय और यथाज्ञात सब प्रकारकी ऐतिहासिक सामग्रीका संकलन कर दिया जाय। इस विषयकी बहुत सी सामग्री हमने संचित कर रखी है; और इसी लिये कई वर्षों तक इसकी प्रसिद्धि रुकी रही। पर हमारे लिये वैसा करना अब संभव नहीं रहा, अतः इसको इसी मूल रूपमें ही प्रसिद्धिमें रख देना उचित समझा है।

प्रस्तुत 'गुर्वावलिका ऐतिहासिक महत्त्व' बतलाने वाला श्री अगरचन्दजी नाहटाका एक लेख, हमारी संपादित 'भारतीय विद्या' नामक त्रैमासिकी शोधपत्रिकाके, प्रथम वर्षके ४ थे अंकमें प्रकाशित हुआ है। इस लेखके प्रारंभमें, गुर्वावलिकी परिचायक एक छोटी-सी नोंध (नोट) हमने लिखी थी जिसको यहां उद्धृत करते हैं। साथमें आगेके पृष्ठोंमें नाहटाजीका यह लेख भी मुद्रित किया जाता है, जिससे पाठकोंको प्रस्तुत ग्रन्थके ऐतिहासिक तथ्योंके बारेमें योग्य जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

*

["सिंघी जैन ग्रन्थमालामें खरतरगच्छ-युगप्रधानाचार्य-गुर्वावली नामक एक संस्कृत गद्य ग्रन्थ छप रहा है जो शीघ्र ही प्रकाशित होगा। इस ग्रन्थमें विक्रमकी ११ वीं शताब्दीके प्रारंभमें होने वाले आचार्य वर्द्धमान सूरिसे ले कर १४ वीं शताब्दीके अन्तमें होने वाले जिनपद्म सूरि तकके खरतर गच्छके मुख्य आचार्योंका विस्तृत चरितवर्णन है। गुर्वाव-

खरतरगच्छ-पट्टावलि संग्रह

संग्राहक एवं संपादक मुनि जिनविजय, अधिष्ठाता-सिंघी जैन ज्ञानपीठ, शान्तिनिकेतन।

(प्रकाशक-बाबूपूरण चन्दजी नाहार, इण्डियन मिरर स्ट्रीट, कलकत्ता।)

*

संपादकीय किञ्चित् वक्तव्य।

लगभग १०७ वर्षसे खरतरगच्छीय पट्टावलियोंका यह छोटा सा संग्रह छप कर तैयार हुआ था, लेकिन विधिके किसी अज्ञेय संकेतानुसार आज तक यह यों ही पड़ा रहा और यदि विद्वद्वर बाबू पूरणचन्द्रजी नाहारकी उपालंभ भरी हुई मीठी चुटकियोंकी लगातार भरमार न होती तो शायद कुछ समय बाद यह संग्रह साराका सारा ही दीमकके पेटमें जा कर विलीन हो जाता।

पूनामें रह कर जब हम 'जैनसाहित्य-संशोधक' का प्रकाशन करते थे उस समय अहमदाबाद-निवासी साहित्य-रसिक विद्वान् श्रावक श्री.केशवलाल प्रे० मोदी B. A. LL. B. ने खरतरगच्छ की एक पुरानी पट्टावलीकी लिखित प्रति हमें ला कर दी–जिसमें इस संग्रहमें की प्रथम ही छपी 'खरतरगच्छ-सूरिपरंपरा-प्रशस्ति' लिखी हुई थी। उस समय तक खरतरगच्छ की जितनी पट्टावलियां हमारे देखने अथवा संग्रह करनेमें आई उन सबमें यह प्रशस्ति हमें प्राचीन दिखाई पड़ी इसलिये हमने इसकी तुरंत नकल कर, 'जैन सा० सं०' के परिशिष्ट रूपमें छपवा देनेके विचारसे प्रेसमें दे दी। कुछ समय बाद मोदीजीने एक और पट्टावली भेजी जो गद्यमें थी और साथमें उन्होंने यह भी इच्छा प्रदर्शित की कि इसे भी यदि उसी प्रशस्तिके साथ छपवा दिया जाय तो अच्छा होगा। हमने उसकी भी नकल कर प्रेसमें छपनेको दे दी। जब ये प्रेससे कंपोज हो कर आई तो पूरे फार्म होनेमें कुछ पृष्ठ खाली रहते दिखाई दिये, तब हमने सोचा कि यदि इसके साथ ही साथ उपाध्याय श्री क्षमाकल्याणजी की बनाई हुई बृहत्पट्टावलि भी दे दी जाय तो खरतरगच्छके आचार्योंकी परंपराका १९ वीं शताब्दि पर्यंतका वृत्तान्त, प्रकट हो जायगा और इतिहास प्रेमियोंको उससे अधिक लाभ होगा। इस पट्टावलीकी प्रेस कापी की हुई हमारे संग्रहमें बहुत पहले ही से पड़ी हुई थी; अतः हमने उसे भी प्रेसमें दे दिया। इसी तरह की, लेकिन इससे प्राचीन एक और पट्टावली हमारे पास थी उसे भी, प्रत्यंतर होनेसे विशेष उपयोगी समझ कर, इसी संग्रहमें प्रकट करनेका हमें लोभ हो आया और उसे भी छपने दे दिया। इस प्रकार चार पट्टावलियोंका यह छोटा सा संग्रह जब तैयार हो गया, तब हमने इसे 'जैन सा० स०' के परिशिष्ट रूपमें न दे कर स्वतंत्र पुस्तकाकार प्रकट करनेका विचार किया और यह स्वतंत्र पुस्तकका विचार मनमें घुसते ही हमारे दिलमें एक नया भूत आ घुसा। हम सोचने लगे कि जब पुस्तक ही बनाना है तब फिर क्यों नहीं विशेष रूपसे एक संकलित ऐतिहासिक ग्रंथके आकारमें इसे तैयार कर दिया जाय और खरतर गच्छके इतिहासके जितने मुख्य मुख्य और महत्वके साधन हों उन्हें एकत्र रूपमें संग्रहीत कर दिया जाय। क्यों कि हमारे संग्रहमें इस विषयकी कितनी ही सामग्री–इन पट्टावलियोंके अतिरिक्त कई अन्य भाषाकी पट्टावलियां, ग्रंथप्रशस्तियां तथा ख्यात आदि विविध प्रकारकी ऐतिहासिक सामग्री–इकट्ठी हुई पड़ी थी। उस सब सामग्रीको संकलित कर ऐतिहासिक ऊहापोह करनेवाली विस्तृत भूमिका और टीका टिप्पणी आदि साथमें लगा कर इस संग्रहको परिपूर्ण बना दिया जाय तो श्वेताम्बर जैन संघके एक बड़े भारी शाखा-समुदायका अच्छा और प्रामाणिक इतिहास तैयार हो जाय। इस भूतके आवेशानुसार हमने उस सब सामग्रीका संकलन करना शुरू किया। ऐसा करनेमें हमें कुछ अधिक समय लग गया और अहमदाबादके पुरातत्त्व मंदिरके आचार्यपदके भारने हमारी पूनाकी विशेष स्थितिको अस्थिर बना दिया। इसलिये इस संग्रहके विस्तृत-संकलनका जो विचार हुआ था वह शिथिल होने लगा और चिरकाल तक कुछ कार्य न हो सका। इधर जिस प्रेसमें यह संग्रह छपा उसके मालिकने छपाईके खर्च आदिका तकाजा करना शुरू किया। जिस विस्तृत रूपमें इसे प्रकाशित करनेका सोचा था उसमें बहुत कुछ समय और अर्थव्ययकी आवश्यकता अनुभूत हुई और शीघ्र ही इस कार्यको परिपूर्ण करने जैसे संयोग दिखाई न दिये, अतः हमने उस विचारको स्थगित किया और यह संग्रह जो इस रूपमें छप गया था, इसे ही प्रकाशित कर देना उचित समझा।

इसी बीचमें बाबूवर्य श्री पूरणचंदजी नाहारके अवलोकनमें यह छपा हुआ संग्रह आया और आपने इसे अपने खर्चसे प्रकाशित कर अपनी धर्मपत्नी श्रीमती इंद्रकुमारीजीके ज्ञान पंचमी तपके उद्यापन निमित्त वितीर्ण कर देनेका अभिप्राय प्रकट किया। तदनुसार पूनासे यह छपा हुआ ग्रंथ-भाग कलकत्ते मंगवा लिया गया और प्रेसका बिल इत्यादि चुकता किया गया। इस संग्रहके साथमें हम कुछ दो शब्द लिख दें तो इसे प्रकाशित कर दिया जाय ऐसी बाबूजीकी इच्छाको हमने सादर स्वीकार कर, हम इस विषयमें कुछ सोचते ही थे कि कुछ ऐसे प्रसंग, एकके बाद एक, उपस्थित होते गये जिससे वर्षों तक हम उनकी उस आज्ञाका पालन नहीं कर सके और २४ घंटेके कामको २४ वर्ष तक ठेलते रहना पड़ा।

*

सन् १९२८ के प्रारम्भमें महात्माजीने गुजरात-विद्यापीठकी पुनर्घटना की, और विद्यापीठका ध्येय 'विद्या' नहीं 'सेवा' निश्चित किया और साथमें कई प्रतिज्ञाओंका बन्धन भी लगाया। हमारा उसमें कुछ विशेष मतभेद रहा और हमने अपने विचारोंको स्थिर करनेके लिए कुछ समय तक, विद्यापीठके वातावरणसे दूर रहना चाहा। इसीके बाद तुरंत हमारा इरादा युरोप जानेका हुआ। युरोपमें सामाजिक और औद्योगिक तंत्रोंका विशेषावलोकन करनेका हमें अधिक मौका मिला और उसमें हमें अत्यधिक रुचि उत्पन्न हुई। हमारा जो आजीवन अभ्यस्त-विषय संशोधनका है, उसमें तो हमें वहां कोई नवीन सीखनेकी बात नहीं दिखाई दी, क्यों कि जिस पद्धति और दृष्टिसे युरोपियन पण्डितगण संशोधन कार्य करते हैं, वह हमें यथेष्ट ज्ञात थी और उसी पद्धति तथा दृष्टिसे हम बहुत समयसे अपना संशोधन-कार्य करते भी आते थे,

केवल वहाके विद्वानोंका उत्साह और एकाग्रभाव विशेष अनुकरणीय मालूम हुआ। हमें जो खास अध्ययन करनेके विशेष विचार मालूम दिये, वे वहाके समाजवाद विषयक थे। इन विचारोंका अध्ययन करते हुए हमारी जीवनाभ्यस्त जो संशोधन रुचि है, वह शिथिल हो चली। समान-जीवनके साथ सम्बन्ध रखने वाली बातोंने मस्तिष्कमें अड्डा जमाना शुरू किया। इन बातोंका विशिष्ट अध्ययन करनेके लिये हमारी इच्छा वहा पर कुछ अधिक काल तक ठहरनेकी थी, लेकिन संयोगवश हमको जल्दी ही भारत लौट आना पड़ा। इधर आने पर नाहारजीने इस संग्रहकी सर्वप्रथम ही याद दिलाई, लेकिन सत्याग्रहके नूतन युद्धमें जुड जानेके कारण और फिर जेलखाने जैसे एकान्तवासके विलक्षण अनुभवानन्दमें निमग्न हो जानेके कारण इन, पुरानी बातोंका स्मरण करना भी कब अच्छा लगता था। एक तो यों ही मस्तिष्कमें समाज-जीवनके विचारोंका आन्दोलन घुडदौड कर रहा था, और उसमें फिर भारतकी इस नूतन राष्ट्रक्रान्तिके आंदोलनने सहचार किया। ऐसी स्थितिमें हमारे जैसे नित्य परिवर्त्तनशील प्रकृति वाले और क्रान्तिमें ही जीवनका विकाश अनुभव करने वाले मनुष्यके मनमें, वर्षों तक पुराने विचारोंका संग्रह कर रखना, और फिर जब चाहें तब उन्हें अपने सम्मुख एकदम उपस्थित हो जानेकी आदत बनाये रखना दु साध्य सा है।

जेलमुक्ति होने पर विधाता हमें शान्तिनिकेतन खींच लाया। विश्वभारतीके ज्ञानमय वातावरणने हमारे मनको फिर ज्ञानोपासनाकी तरफ खींचना शुरु किया और हमारी जो स्वाभाविक संशोधन रुचि थी, उसको फिर सतेज बनाया। वर्षोंसे हमने २-४ ऐतिहासिक ग्रन्थोंके सम्पादन और संशोधनका सकल्प कर रखा था और उसका कुछ काम हो भी चुका था, इसलिये रह रह कर यह तो मनमें आया ही करता था कि यदि इस सकल्पके पूरा करनेका कोई मन पूत साधन सम्पन्न हो जाय, तो एक बार इसको पूरा कर लेना अच्छा है। बाबू श्री बहादुरसिंहजी सिंघीके उत्साह, औदार्य, सौजन्य और सौहार्दने हमारे इस सकल्पको एकदम मूर्तिमन्त बना दिया और हम जो सोचते थे, उससे भी कहीं अधिक मन पूत साधनकी सम्प्राप्ति देख कर, परिणामत हमने **सिंघी जैन ज्ञानपीठ और सिंघी जैन ग्रन्थमाला** का कार्यभार उठाना स्वीकार कर लिया।

जबसे हम यहा आये, तभीसे इस संग्रहके लिये श्री नाहारजीका बराबर स्मरण दिलाना चालू रहा। हम भी आज लिखते हैं, कल लिखते हैं, ऐसा जवाब दे कर उन्हें आशा दिलाते रहते थे। बहुत समय बीत जानेके कारण इस विषयमें जो कुछ हमारे पुराने विचार थे और जो कुछ हमने लिखना सोचा था, वह स्मृति पट परसे अस्पष्ट सा हो गया। जिन प्रतियों परसे यह संग्रह मुद्रित हुआ था, वे भी पासमें नहीं रहनेसे, इस विषयमें क्या लिखें, कुछ सूझ नहीं पड़ती थी। 'विज्ञप्ति त्रिवेणि', 'कृपारस कोष', 'शत्रुंजय तीर्थोद्धार प्रबन्ध' इत्यादि पुस्तकोंके सपादनके बाद हमारा हिन्दी-लेखन प्राय बन्द-सा ही है। पिछले कई वर्षोंसे निरन्तर गुजराती भाषा ही में चिंतन, मनन, लेखन, और वाग्व्यवहार चलते रहनेसे हिन्दी भाषाका एक तरहसे परिचय ही छूट गया। इस कारणसे कुछ हिन्दी लिखनेका ठीक ठीक चित्तैकाग्र्य न हो पाता था। लेकिन पिछले कुछ दिनोंमे हमारा साहित्य-संग्रह हमारे पास पहुच गया और वर्षोंसे संदूकोंमें बद पड़े हुए पुराने कागजों और टिप्पणोंको उथल पुथल करते समय, इस विषयके कुछ साधन भी हाथमें आ गये, जिससे ये पङ्क्तिया लिखनेका मनमें कुछ विचार हो आया। बस यही इस संग्रहके बारेमें हमारा किंचित् वक्तव्य है।

*

श्वेताम्बर जैन सघ जिस स्वरूपमें आज विद्यमान है, उस स्वरूपके निर्माणमें, खतरतर गच्छके आचार्य, यति और श्रावक-समूहका बहुत बड़ा हिस्सा है। एक तपागच्छको छोड कर दूसरा और कोई गच्छ इसके गौरवकी बराबरी नहीं कर सकता। कई बातोंमें तपागच्छसे भी इस गच्छका प्रभाव विशेष गौरवान्वित है। भारतके प्राचीन गौरवको अक्षुण्ण रखने वाली राजपूतानेकी वीर भूमिका, पिछले एक हजार वर्षका इतिहास, ओसवाल जातिके शौर्य, औदार्य, बुद्धि-चातुर्य और वाणिज्य-व्यवसाय-कौशल आदि महद् गुणोंसे प्रदीप्त है और उन गुणोंका जो विकाश इस जातिमें, इस प्रकार हुआ है, वह मुख्यतया खरतरगच्छके प्रभावान्वित मूल पुरुषोंके सदुपदेश तथा शुभाशीर्वादका फल है। इसलिये खरतरगच्छका उज्ज्वल इतिहास यह केवल जैन सघके इतिहासका ही एक महत्त्वपूर्ण प्रकरण नहीं है, बल्कि समग्र राजपूतानेके इतिहासका एक विशिष्ट प्रकरण है। इस इतिहासके सकलनमें सहायभूत होने वाली विपुल साधन-सामग्री इधर-उधर नष्ट हो रही है। जिस तरहकी पट्टावलिया इस संग्रहमें संगृहीत हुई हैं, वैसी कई पट्टावलियां और प्रशस्तियां संगृहीत की जा सकती हैं और उनसे विस्तृत और शृङ्खलाबद्ध इतिहास तैयार किया जा सकता है। यदि समय अनुकूल रहा, तो 'सिंघी जैन ग्रंथमाला' में एक-आध ऐसा बड़ा संग्रह जिज्ञासुओंको भविष्यमें देखनेको मिलेगा।

बाबू श्री पूरणचंदजी नाहारने बड़ा परिश्रम और बहुत द्रव्य व्यय करके जैसलमेरके जैन शिलालेखोंका एक अपूर्व संग्रह प्रकाशित कर इस विषयमें विद्वानों और जिज्ञासुओंके सम्मुख एक सुन्दर आदर्श उपस्थित कर दिया है। इसके अवलोकनसे, राजपूतानेके जूने पुराने स्थानोंमें जैनोंके गौरवके कितने स्मारक-स्तंभ बने हुए हैं तथा उनसे हमारे देशके ज्वलन्त इतिहासकी कितनी विशाल समृद्धि प्राप्त हो सकती है उसकी कुछ कल्पना आ सकती है। इस ग्रंथमें प्राय खरतरगच्छके ही इतिहासकी बहुत सामग्री संगृहीत है जो इस पट्टावलिवाले संग्रहकी बातोंको पुष्टि करती है तथा कई बातोंकी पूर्ति करती है। इन सब बातोंके दिग्दर्शनकी यह जगह नहीं है। ऐसे संग्रहोंके सकलन करनेमें कितना परिश्रम आवश्यक है वह इस विषयका विद्वान् ही जान सकता है 'विद्वानेव जानाति विद्वज्जनपरिश्रम'।

जैसलमेरके लेखोंका ऐसा सुन्दर संग्रह प्रकाशित कर तथा इस पट्टावली संग्रहको भी प्रकट करवा कर श्रीमान् नाहारजीने खरतरगच्छकी अनमोल सेवा की है। एतदर्थ आप अनेक धन्यवादके पात्र हैं। आपका इस प्रकार जो स्नेहपूर्ण अनुरोध हमसे न होता तो यह संग्रह यों ही नष्ट हो जाता और इसके तैयार करनेमें जो कुछ हमने परिश्रम किया था वह अकारण ही निष्फल जाता। अत हम भी विशेष रूपसे आपके कृतज्ञ हैं।

सिंघी जैन ज्ञान पीठ
शान्तिनिकेतन
पर्युषणा प्रथम दिन, सं. १९८७

मुनि जिनविजय

खरतरगच्छ-गुर्वावलिका ऐतिहासिक महत्त्व

[लेखक.-श्रीयुत अगरचन्दजी नाहटा – संपादक राजस्थानी]

ऐतिहासिक साहित्यकी दृष्टिसे खरतरगच्छ गुर्वावली एक अत्यन्त महत्त्वका और अपने ढंगका अद्वितीय ग्रन्थ है। कुछ वर्ष पूर्व, बीकानेरके प्राचीन जैन ज्ञान भंडारोंका अन्वेषण करते हुए हमें यह निधि उपलब्ध हुई थी। इसमें विक्रमकी ग्यारहवीं शताब्दीके उत्तरार्द्धसे ले कर वि० सं० १३९३ तकके खरतरगच्छीय जैनाचार्योंका विस्तृत और विश्वसनीय इतिवृत्त लिखा हुआ है। इस वृत्तान्तसे तत्कालीन भारतीय इतिहासकी ओर और बातों पर भी अच्छा प्रकाश पडता है। जो लोग कहते हैं कि भारतमें सनतानुक्रमसे शृङ्खलाबद्ध इतिहास लिखनेकी प्रणाली सर्वथा नहीं थी उन्हें निरुत्तर करनेके लिये यह ग्रन्थ एक पर्याप्त उदाहरणरूप है।

[—प्रस्तुत गुर्वावलीमें सं० १३०५ आषाढ सु० १० तकका वृत्तान्त तो श्रीजिनपति सूरिजीके विद्वान् शिष्य श्रीजिनपालोपाध्यायने दिल्ली निवासी सेठ साहुलीके पुत्र हेमचन्द्रकी अभ्यर्थनासे संकलित किया है। इसके पश्चात्का वर्णन भी पट्टधर आचार्योंके साथमें रहने वाले व दफ्तर रखनेवाले विद्वान् मुनियों द्वारा लिखा गया प्रतीत होता है। यह प्रति पत्र ८६ की है और प्रायः पन्द्रहवीं या सोलहवीं शताब्दीमें लिखी होकर बीकानेरस्थ श्रीक्षमाकल्याण ज्ञानभंडारमें विद्यमान है। इसमें सं० १३९३ तकका इतिवृत्त है। इसके पीछेका इतिहास जाननेके लिये हम कोई भी इस कोटिकी गुर्वावली उपलब्ध नहीं है, परन्तु शृङ्खलाबद्ध इतिहास लिखनेकी प्रणाली तो पीछे भी बराबर रही है। सं० १४९० की एक सूचीके अनुसार, जेसलमेरके सुप्रसिद्ध ज्ञानभंडारमें, उस समय ३१२ पत्र जितनी विस्तृत एक गुर्वावली वहां विद्यमान थी। यदि वह गुर्वावली प्राप्त हो जाय तो अनेकों नवीन ज्ञातव्य मिले। खेद है कि अतीतमें तो वर्तमान श्रीपूज्योंके पास प्राचीन दफ्तर भी नहीं मिलते। पाठकोंको यह जान कर प्रसन्नता होगी कि इसका सम्पादन पुरातत्त्वाचार्य श्री जिनविजयजी जैसे विद्वान् द्वारा हो रहा है।]

यह ग्रन्थ दो तरहकी शैलीमें संकलित किया हुआ है। श्री जिनेश्वर सूरिजीसे श्री जिनदत्त सूरिजीके स्वर्गवास सं० १२११ तकका वृत्तान्त तो, सं० १२९५ में सुमतिगणि द्वारा रचित 'गणधरसार्द्धशतक–बृहद्वृत्ति' के अनुसार ही प्राचीन शैलीका है। पर इसके पश्चात्की प्रत्येक घटना सनतानुक्रम और शृङ्खलाबद्ध रूपसे लिखी गई है, जो घटनाओंके साथ साथ लिखी हुई डायरी-सी प्रतीत होती है। जैनाचार्योंका विहारानुक्रम, मार्गवर्ती ग्राम-नगर, दीक्षाएं प्रतिष्ठाएं तत्तत् ग्रामवासी श्रावकोंके नाम, राजसभाओंमें किये गये शास्त्रार्थ, तीर्थयात्रा वर्णन – इत्यादि सभी बातें इतनी विशदताके साथ लिखी गई हैं कि तात्कालीन परिस्थिति आंखोंके सामने आ जाती है। भ्रमणशील जैनाचार्योंके प्रवास मार्गका वर्णन तो भारतीय साहित्यमें एक नवीन वस्तु है। क्यों कि भारतके साहित्यमें प्रायः इसका अभाव ही है। हमारे पास, जो कुछ विदेशी विद्वानोंने भ्रमणवृत्तान्त लिखे, वे ही उपलब्ध हैं, पर उनमें स्थानोंके नामादिमें कई भूलें हुई हैं; किन्तु इसमें विशुद्ध भौगोलिक वर्णन मिलता है।

प्रस्तुत निबन्धमें हम, इस गुर्वावलीमें उपलब्ध राजकीय इतिहास सामग्री और भौगोलिक बातोंका संक्षिप्त परिचय देना चाहते हैं। आशा है, विद्वानोंको इससे कुछ नवीन ज्ञातव्य मिलेगा।[1]

राजकीय इतिहास-सामग्री

पाटणके दुर्लभराज चौलुक्यका उल्लेख।

श्री वर्द्धमान सूरिके शिष्य श्री जिनेश्वर सूरिने अणहिल पत्तनमें गूर्जरेश्वर दुर्लभराजकी सभामें चैत्यवासियोंके साथ शास्त्रार्थ कर उनको पराजित किया जिसका विस्तृत वर्णन इस गुर्वावलीमें दिया गया है।

धारानरेश नरवर्मका निर्देश।

श्रीजिनवल्लभ सूरि [स्वर्ग सं० ११६७] जब चित्तौडमें थे तब, धाराधीश नरवर्माकी सभामें दो दाक्षिणी पण्डितोंने "कण्ठे कुठार कमठे ठकार" यह समस्यापद रखा। स्थानीय विद्वानों व राजपण्डितोंने अपनी अपनी

---

1 गुर्वावलीके आधार पर, पं० दशरथजी शर्मा एम्. ए. ने, इंडियन हिस्टोरिकल क्वार्टर्ली, वॉ० ११, नं० ४, और पूना ओरिएंटलिस्ट, वॉ० २, पृ० ७५ में, संक्षिप्त नोट लिखे थे जिनमें इसके ऐतिहासिक महत्त्वका अच्छा दिग्दर्शन कराया था। यहाँ पर हम इसका पूरा ज्ञातव्य प्रकाशित करते हैं।

बुद्धिके अनुसार समस्यापूर्ति की, पर उससे उन दक्षिणी विद्वानोंको सन्तोष नहीं हुआ। तब किसीसे श्रीजिनवल्लभ सूरिजीकी प्रतिभाका परिचय पा कर राजाने यह समस्यापद उनके पास भेजा। सूरिजीने तत्काल ही सुन्दरताके साथ उसकी पूर्ति कर दी, जिससे समग्र विद्वान सन्तुष्ट हुए। फिर जब सूरिजी चित्तौड़से विहार कर धारा पधारे, तब नृपतिने उन्हें अपने प्रासादोंमें बुला कर उनसे धर्मोपदेश श्रवण किया। राजा सूरिजीका भक्त हो गया और उसने ३ लाख रुपये और ३ ग्राम उन्हें भेंट किये। परन्तु सूरिजी निरीह थे। उन्होंने उस दानका ग्रहण करना अस्वीकार किया, तब उनके उपदेशानुसार उसने चित्तौड़के दो जैन मन्दिरोंमें २ लाख रूपयोंसे पूजाके लिये मण्डपिकाएं बनवा दीं।

अजमेरके अर्णोराजका उल्लेख।

श्री जिनदत्त सूरिजी जब अजमेरमें पधारे तो वहांका राजा अर्णोराज स्वयं दर्शनार्थ आया और उनके उपदेशसे अतीव प्रसन्न हो कर उन्हें सर्वदा अजमेरमें ही रहनेकी विज्ञप्ति की। परन्तु सूरिजीने साध्वाचारका स्वरूप बतलाया और समय समय पर यहां आते रहनेका कह कर राजाको सन्तुष्ट किया। इस नृपतिने अजमेरके दक्षिणी भागमें पहाड़ीके नीचे श्रावकोंको मन्दिर व निवासगृह बनानेके लिये यथेच्छ भूमि दी।

त्रिभुवनगिरिका राजा कुमारपाल।

श्री जिनदत्त सूरिजीने त्रिभुवनगिरि पधार कर वहांके महाराजा कुमारपालको प्रतिबोध दिया। श्रीशान्तिनाथ मन्दिरकी प्रतिष्ठा की और उधरके प्रदेशमें प्रचुरताके साथ अपने शिष्योंको विहार कराया।

दिल्लीके महाराजा मदनपाल।

सं० १२२३ में श्री जिनदत्त सूरिजीके शिष्य श्री जिनचन्द्र सूरिजी दिल्लीके निकटवर्ती ग्राममें पधारे। उनको वन्दनार्थ जाते हुए श्रावक समुदायको राजप्रासादस्थित महाराजा मदनपालने देखा और मन्त्रियोंसे सूरिजीके पधारनेकी खबर पा कर महाराजाने समस्त मुसाहिबों और सेनाको एकत्र किया और बड़े समारोह पूर्वक सूरिजीके पास गया। उनसे धर्मोपदेश श्रवण कर महाराजा अत्यन्त प्रमुदित हुआ और उनको अपने नगरमें पधारनेकी अत्यन्त आग्रहपूर्वक विनति की। सूरिजी अनिच्छाके होते हुए भी राजाके आग्रहसे दिल्ली पधारे। बड़े भारी समारोहसे उनका प्रवेशोत्सव हुआ। महाराजा मदनपाल स्वयं सूरिजीका हाथ पकड़े हुए उनकी पेशवाईमें चल रहा था। राजाकी प्रार्थनासे उन्होंने वहीं चातुर्मास किया पर दुर्भाग्यवश उनका वहीं स्वर्गवास हो गया।

आशिका नरेश भीमसिंह।

श्री जिनपति सूरिजी सं० १२२८ में बब्बेर नगरको पधारे। सवाद पा कर आशिकाके श्रावक लोग राजा भीमसिंहके साथ सूरिजीके दर्शनार्थ आए। सूरिजीके उपदेशसे प्रसन्न हो कर उन्हें आशिका पधारनेकी वीनति की। राजाके विशेष अनुरोधसे श्री पूज्य आशिका आए। भूपति भीमसिंहके साथ पूर्वोक्त दिल्लीके प्रवेशकी भांति आशिकामें प्रवेशोत्सव हुआ। सूरिजीने स्थानीय दिगम्बराचार्यके साथ शास्त्रार्थ किया और उसमें सूरिजीका विजय हुआ। इससे आशिका (हांसी) नरेश बहुत प्रसन्न हो कर सूरिजीके प्रति श्रद्धालु बना।

सं० १२३२ में मन्दिरकी प्रतिष्ठा करनेके हेतु सूरिजी फिर आशिका पधारे। उस समय आशिकाका वैभव दर्शनीय था। नगरके बाहर राजा भीमसिंहके आज्ञावर्ती राजाओंके तबू-डेरे लगे हुए थे, राजकीय फौज-पल्टनका जमघट लगा हुआ था। राजप्रासादों और बाग-बगीचोंके मनोहर दृश्यसे आशिका नगरी चक्रवर्तीकी राजधानी सी प्रतीत होती थी।

अजमेरका महाराजा पृथ्वीराज चौहान।

श्री जिनपति सूरिजी सं० १२३९ में अजमेर पधारे। राजसभामें चैत्यवासी उपकेशगच्छीय प० पद्मप्रभके साथ उनका शास्त्रार्थ हुआ, जिसमें सूरिजीकी विजय हुई। महाराजा पृथ्वीराजने स्वयं नरायणके राजप्रासादोंमें अजमेर आ

कर सूरिजीको "जयपत्र" समर्पण किया। इस वर्णनमें यह भी बताया गया है कि उसी वर्षमें महाराजाने भादानक देशको जीता था। इस शास्त्रार्थका वृत्तान्त बड़े विस्तारके साथ इस गुर्वावलीमें दिया गया है जिसमें बहुत सी अन्य ऐतिहासिक बातें भी हैं। विशेष जाननेके लिये 'हिन्दुस्तानी' नामक त्रैमासिक पत्रिकामें प्रकाशित "पृथ्वीराजकी सभामें जैनाचार्योंका शास्त्रार्थ" नामक हमारा विस्तृत निबन्ध पढ़ना चाहिये।

अणहिल्लपुर (पाटण) का राजा भीमदेव।

सं० १२४४ में, अणहिल्लपुरका कोट्याधिपति श्रावक अभयकुमार तीर्थयात्राके हेतु संघ निकालनेकी इच्छासे महाराजाधिराज भीमदेव और प्रधान मंत्री जगदेव पड़िहारके पास गया और उनसे अरज करके स्वयं राजाके हाथसे अजमेर निवासी खरतर संघके नामका आज्ञापत्र लिखवा लाया। फिर एक विनंतिपत्र अपनी ओरसे श्री जिनपति सूरिजीको लिख कर अजमेर भेजा। सूरिजीने निमन्त्रण पा कर अजमेरी संघके साथ विहार कर दिया। तीर्थयात्राके अनन्तर वापस लौटते हुए सूरिजी आशापल्ली पधारे। यहां चैत्यवासी प्रद्युम्नाचार्यसे उनका शास्त्रार्थ हुआ जिसमें विजयलक्ष्मी सूरिजीको मिली। इससे प्रतिपक्षीके भक्त अभयड दण्डनायकने कुटिलतासे संघको यह कह कर अटका लिया कि—'महाराजाधिराज भीमदेवकी आज्ञा है कि आप लोग हमारी आज्ञा बिना यहाँसे नहीं जा सकेंगे।' इतना ही नहीं उसने संघकी चौकीके लिये १०० सैनिकोंकी गारद डाल दी। इस प्रकार १४ दिन संघ अटके रहा।

इधर अपने बचावके लिये अभयड दंडनायकने प्रतिहार जगदेवके पास, (जो उस समय गूर्जर कटकके साथ मालव देशमें गया हुआ था) पत्रके साथ, अपना सेवक भेज कर कहलाया—'यहां सपादलक्ष—अजमेरका एक विशाल और वैभवशाली संघ आया हुआ है; यदि आपकी आज्ञा हो तो सरकारी घोड़ोंके लिये दाल-दानेका प्रबन्ध करदूं— अर्थात् लूट कर या तंग कर द्रव्य एकत्र करूं।' जगदेव अपने कर्मचारीसे पत्र सुन कर आगबबूला हो गया, और उसी क्षण अपने आज्ञाकारी व्यक्तिके हाथसे एक आज्ञापत्र लिखा भेजा कि—'मैंने बड़े कष्टसे अजमेर नरेश पृथ्वीराजके साथ सन्धि की है; यह संघ भी वहीं का है; अतः इस संघकी तनिक भी छेड़छाड़ मत करना। यदि करोगे तो तुम्हें गधेकी खालमें सिला दिया जायगा।' जब अभयडको यह आज्ञा मिली तो उसने फौरन संघसे क्षमा माग कर उसे रवाने किया।

लवणखेडाका राणा केल्हण।

सं० १२४९ में श्रीजिनपति सूरिजी लवणखेडासे विहार करके पुष्करिणी, विक्रमपुर आदिमें विचरते हुए स० १२५१ में अजमेर गये। दो मास वहा पर मुसलमानोंके उपद्रवके कारण बड़े कष्टसे बीते। फिर पाटण, भीमपल्ली, कुहियप हो कर पुनः राणा केल्हणके आग्रहसे लवणखेटक पधारे। वहां 'दक्षिणावर्त्तआरात्रिकावतारणोत्सव' बड़ी धूमधामसे मनाया।

नगरकोटका राजा पृथ्वीचन्द्र।

सं० १२७३ में (बृहद्वार) में गंगादशहरे पर गंगास्नानके लिये बहुतसे राणाओंके साथ महाराजाधिराज श्रीपृथ्वीचंद्र नगरकोटसे आया। उसके साथ प० मनोदानन्द नामक एक काश्मीरी पण्डित भी था। उसने श्री जिनपति सूरिके उपाश्रय पर शास्त्रार्थके चैलैञ्जका नोटिश लगा दिया। तब सूरिजीके शिष्य जिनपालोपाध्याय आदि शास्त्रार्थके लिये महाराजा पृथ्वीचन्द्रकी सभामें आये, और वाद विवादमें उक्त पण्डितको परास्त कर दिया। महाराजाने पण्डितके चैलैञ्जको फाड़ कर उपाध्यायजीको जयपत्र दिया।

पालनपुरका राजकुमार जगसिंह।

स० १२८८ में पाल्हनपुरके सेठ भुवनपालने, राजकुमार जगसिंहकी उपस्थितिमें ध्वजारोपणका उत्सव बड़े समारोहसे मनाया।

जावालिपुरका राजा उदयसिंह।

सं० १३१० वैशाख सुदि १३ शनिवार स्वाति नक्षत्रके दिन, श्रीमहावीर विधिचैत्यमें, राजा व प्रधान पुरुषोंकी उपस्थितिमें राजमान्य महामन्त्री जैत्रसिंहके तत्त्वावधानमें, पालनपुर, वागडदेश आदिके श्रावकोंके एकत्र होने पर श्रीचौवीस जिनालय आदिकी प्रतिष्ठा, दीक्षादि महामहोत्सवपूर्वक हुई।

सं० १३१४ में माघ शु० १३ को राजा उदयसिंहके प्रमोदपूर्ण सान्निध्यसे कनकगिरिके मुख्य मन्दिर पर ध्वजारोप हुआ।

स्वर्णगिरिका चाचिगदेव।

सं० १३१६ के माघ सुदि ६ को, राजा चाचिगदेवके राजत्वकालमें स्वर्णगिरिके शान्तिनाथ मन्दिर पर स्वर्णमय ध्वजदंड व कलश स्थापित किये गये।

भीमपल्लीका राजा माण्डलिक।

सं० १३१७ वैशाख सुदि १० सोमवारको, भीमपल्लीमें राजा माण्डलिकके राजत्वकालमें दण्डनायक श्रीमीलगण (?) के सान्निध्यसे महावीर जिनालय पर स्वर्णदण्ड-कलशादि चढाये गये।

चित्तौडका महाराजा समरसिंह।

सं० १३३५ फा० कृ० ५ को, महाराजा समरसिंहके रामराज्यमें, चित्तौडके चौरासी मुहल्लेमें जलयात्रापूर्वक स्थानीय ११ मन्दिरोंके ११ छत्र व मुनिसुव्रत, आदिनाथ, अजितनाथ, वासुपूज्य प्रमुखकी प्रतिमाएं स्थापित की गई।

चित्तौडके युवराज अरिसिंह।

सं० १३३५ फाल्गुन शुक्ल ५ को, सकल राज्यधुराको धारण करने वाले राजकुमार अरिसिंहके सान्निध्यसे आदिनाथ मन्दिर पर ध्वजारोप हुआ।

बीजापुर नरेश सारंगदेव।

सं० १३३७ ज्येष्ठ कृष्ण ४ शुक्रवारको, महाराजाधिराज सारंगदेवके रामराज्यमें, महामात्य मल्लदेव व उपमंत्री विन्ध्यादित्यके कार्यकालमें, बीजापुरमें श्रीजिनप्रबोध सूरिजीका नगरप्रवेश बडे समारोहसे हुआ। मं० विन्ध्यादित्य सूरिजीकी स्तुति करता था।

शम्यानयन (सिवाना) का राजा श्रीसोम।

श्रीजिनप्रबोध सूरिजीने (सं० १३४० में) सन्मुख आये हुए श्रीसोम महाराजाकी वीनति स्वीकार कर शम्यानयनमें चातुर्मास किया।

जेसलमेर नरेश कर्णदेव।

सं० १३४० के फाल्गुनमें श्रीजिनप्रबोध सूरिजी जेसलमेर पधारे। नगर प्रवेश बडे समारोहसे हुआ। राजा कर्ण ससैन्य दर्शनार्थ सामने आया। महाराजाके आग्रहसे चातुर्मास भी उन्होंने वहीं किया।

जावालिपुरका राजा सामन्तसिंह।

सं० १३४२ ज्येष्ट कृष्णा ९ को, जालौरमें सुप्रसन्न महाराजा सामन्तसिंहके सानिध्यसे अनेक जिन प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा और इन्द्रमहोत्सव सम्पन्न हुआ।

शम्यानयनका महाराजा सोमेश्वर चौहान।

सं० १३४६ फाल्गुन शुक्ल ८ को, महाराजा सोमेश्वरकारित विस्तृत प्रवेशोत्सवसे श्रीजिनचन्द्र सूरिजी शम्यानयन पधारे। सा० बाहड, भा० भीमा, जगसिंह, खेतसिंह सुश्रावकोंके बनाए हुए प्रासादमें उन्होंने शान्तिनाथ प्रभुकी स्थापना की।

जेसलमेर नरेश जैत्रसिंह।

सं० १३५६ में राजाधिराज जैत्रसिंहकी प्रार्थनाको मान दे कर, श्रीजिनचंद्र सूरिजी, मार्गशीर्ष शुक्ला ४ को जैसलमेर पधारे। पूज्यश्रीके स्वागतार्थ महाराजा ८ कोश सम्मुख गया था। सं० १३५७ मार्गशीर्ष कृष्णा ९ को, महाराजा जैत्रसिंहके भेजे हुए वाजित्रोंकी ध्वनिके साथ मालारोपण व दीक्षा महोत्सव संपन्न हुआ।

शम्यानयन नरेश शीतलदेव।

संवत् १३६० में महाराजा शीतलदेवकी वीनति और मंत्री नाणचन्द्र आदिकी अभ्यर्थनासे श्रीजिनचन्द्र सूरिजी शम्यानयन पधारे और शान्तिनाथ भगवानके दर्शन किये।

सुलतान कुतुबुद्दीन।

सं० १३७४ में, मंत्रिदलीय ठक्कुर अचलसिंहने बादशाह कुतुबुद्दीनसे सर्वत्र निर्विघ्नतया यात्रा करनेके लिये फरमान प्राप्त कर, नागौरसे संघ निकाला। जब मारवाड़ और वागड़ देशके नाना नगरोंको पार कर, संघ दिल्लीके समीपवर्त्ती तिलपथ नामक स्थानमें पहुंचा तो ईर्ष्यालु द्रमकपुरीय आचार्य (चैत्यवासी) ने यह कह कर उकसाया कि—'जिनचन्द्र सूरि नामक साधु स्वर्णका छत्र सिंहासन धारण करता है।' बादशाहने संघको रोक लिया और ठक्कुर अचलसिंहादिके साथ सूरिजीको अपने पास बुलाया। सूरिजीकी शान्त मुद्रा देख कर सम्राट् अत्यन्त प्रभावित हुआ और बातचीत होने पर उसे पूर्ण विश्वास हो गया कि द्रमकपुरी आचार्य मिथ्याभाषी है। अलाउद्दीनके पुत्र सुलतान कुतुबुद्दीन ने कहा—'इन श्वेताम्बर मुनियोंमें उसके कथनानुसार एक भी बात नहीं पाई जाती'—अतः दिवानको हुक्म दिया कि इनके आचार व्यवहारकी अच्छी तरह परीक्षा कर अन्यायीको दण्ड दिया जाय। राज्याधिकारियोंने सूरिजीको निर्दोष पा कर द्रमकपुरीय आचार्यको गिरफ्तार कर लिया। दयालु सूरिजीने श्रावकोंसे कह कर उसे छुड़वा दिया। सूरिजीने दिल्लीकी खण्डासरायमें चातुर्मास किया। पश्चात् सुलतान व संघके कथनसे प्राचीन तीर्थस्थान मथुराकी यात्रा करने पधारे।

मेडताका राणा मालदेव चौहान।

सं० १३७६ में राणा मालदेवकी प्रार्थनासे श्रीजिनचन्द्र सूरिजी मेड़ता पधारे और वहां राणा व संघकी प्रार्थनासे २४ दिन ठहरे।

दिल्लीपति गयासुद्दीन बादशाह।

सं० १३८० में दिल्लीनिवासी सेठ रयपतिके पुत्र सा० धर्मसिंहने प्रधान मंत्री नेब साहबकी सहायतासे सम्राट् गयासुद्दीन द्वारा तीर्थयात्राका फरमान निकलवाया, और श्रीजिनकुशल सूरिजीके नेतृत्वमें शत्रुंजयादि तीर्थोंका संघ निकाला।

सं० १३८१ में भीमपल्लीके सेठ वीरदेवने भी सम्राटसे तीर्थयात्राका फरमान प्राप्त कर श्रीजिनकुशल सूरिजीके उपदेशसे शत्रुंजयादि तीर्थोंके लिये संघ निकाला। विशेष जाननेके लिए हमारी **'दादा जिनकुशलसूरि'** नामका पुस्तक देखना चाहिये।

सौराष्ट्रनरेश महीपालदेव।

सं० १३८० में शत्रुंजय यात्राके प्रसंगमें, सेठ मोखदेवको, सौराष्ट्रमहीमंडनभूपाल महीपाल देवकी दूसरी देह सदृश अर्थात् अत्यत प्रभावशाली लिखा है।

वाहडमेरनरेश राणा शिखरसिंह।

स० १३९१ में श्रीजिनपद्म सूरिजी वाग्भटमेरु पधारे। उस समय चौहानकुलप्रदीप राणा शिखरसिंह, राजपुरुष व नागरिक जनोंके साथ, सूरिजीके सन्मुख गया और महोत्सवपूर्वक उनका नगरप्रवेश कराया।

साचोर (सत्यपुर) का राणा हरिपालदेव ।

सं० १३९१ में श्रीजिनपद्म सूरिजी वाहड़मेरसे सत्यपुर पधारे उस समय राणा हरिपालदेव आदि उनके स्वागतार्थ सन्मुख गये ।

आशोटाका राजा रुद्रनन्दन ।

सं० १३९३ में पाटणसे नारउद्र होते हुए श्रीजिनपद्म सूरिजी आशोटा पधारे । उस समय वहांका राजा रुद्रनन्दन, राज० गोधा सामन्तसिंहादिके साथ स्वागतार्थ पूज्यश्रीके सन्मुख आया ।

बूजद्रीका राजा उदयसिंह ।

सं० १३९३ में श्रीजिनपद्म सूरिजी बूजद्री पधारे । वहां सुश्रावक मोखदेवने राजा उदयसिंह एवं समस्त नागरिकोंके साथ सूरिजीका बड़े समारोहसे नगर प्रवेश कराया । इसके बाद अन्यत्र विहार करके सूरिजी फिर वहां पधारे तब भी राजा उदयसिंह प्रवेशोत्सवमें सम्मीलित हुआ था ।

त्रिशृङ्गम नरेश रामदेव ।

संवत् १३९३ में, श्रीजिनपद्म सूरिजी त्रिशृङ्गम पधारे । मन्त्रीश्वर सांगणके पुत्र मण्डलिकादिकने, महाराजा महीपालके अंगज महाराजा रामदेवकी आज्ञासे राजकीय वाजित्रोंके साथ बड़े समारोहपूर्वक प्रवेशोत्सव किया । सूरिजीको संघके साथ चैत्यपरिपाटी करते समय उनकी प्रशंसा सुन कर महाराजाके चित्तमें उनके दर्शनकी उत्कण्ठा जागृत हुई । महाराजाने सेठ मोखदेव और मन्त्री मण्डलिक आदिको कहा—'छोटी उम्रवाले होते हुए भी आपके गुरु बड़े चमत्कारी सुने जाते हैं, मुझे उनके दर्शनोंकी अभिलाषा है । आप कहें तो मैं उनके पास चलूं या वे कृपा कर मेरी सभामें पधारें !'

श्रावकोंकी प्रार्थनासे सूरिजी राजसभामें पधारे । नृपतिने उन्हें आते देख कर, राजसिंहासनसे नीचे उतर कर, उनकी चरणवन्दना की । पूज्यश्री आशीर्वाद दे कर चौकी पर विराजे । महाराजा सारंगदेवके व्यासने अपनी रचना पढ कर सुनाई, जिसमें श्री लब्धिनिधान उपाध्यायजीने कई त्रुटियां बतलाई । महाराजा रामदेव कहने लगे—'उपाध्यायजीका वचनचातुर्य और शास्त्रीय ज्ञान असाधारण है । इन्होंने तो हमारे व्यासजीकी भी त्रुटियां बतलाई !' इसी प्रकार अन्य सभासदोंने उपाध्यायजीकी भूरि भूरि प्रशंसा की ।

सूरिजीने तात्कालिक कवितामें राजा रामदेवका वर्णनात्मक श्लोक कहा । जिसे सुन कर राजसभामें उपस्थित सभ्यगण आश्चर्य निमग्न हो गये । राजा रामदेवने सिद्धसेन आदि पण्डितोंसे उस श्लोकको विकटाक्षरोंमें लिखवाया । सूरिजीने नानार्थक नाममाला कोषके बलसे उसके अनेक अर्थ कह सुनाये, जिससे सब लोग एक नजर हो कर पूज्य श्रीके मुखकमलकी ओर निहारने लगे । इसके बाद सूरिजीने लहियोंसे प्रत्येक श्लोकके एक एक अक्षरको भिन्न भिन्न लिखवा कर और उन्हें मिटा कर तीसरी बार तीन श्लोकोंको सम्पूर्ण करवा दिया । फिर उन तीनों श्लोकोंको एक पट्टी पर लिखवा कर नृपतिके मनोरञ्जनार्थ राजहंसमय चित्रकाव्यकी रचना की । सूरिजीकी इस प्रतिभा और बुद्धिवैभवको देख कर राजा और सभाके सारे लोगोंके चित्तमें चमत्कृति उत्पन्न हुई ।

महामन्त्री वस्तुपालका उल्लेख ।

सं० १२८९ में श्रीजिनेश्वर सूरिजीके खंभात पधारने पर महामात्य वस्तुपालने बड़े समारोहसे उनका नगर प्रवेशोत्सव किया था । गुर्वावलीमें, श्रीजिनकुशल सूरिजीके खंभात पधारने पर भी इस उत्सवकी याद दिलाई गई है ।

राजकीय हलचलें और उपद्रव ।

म्लेच्छोपद्रव होनेका उल्लेख ।

सं० १२२२ में श्रीजिनचन्द्र सूरिजीने रुद्रपल्लीसे विहार कर बोरसिदा ग्रामके पास संघके साथ पड़ाव डाला । सूरिजीने साथ वालोंको आकुल व्याकुल देख कर पूछा—' आप लोग भयभीत क्यों हो रहे हैं !' उन लोगोंने कहा—

'भगवन्! देखिये न इस ओर आकाश धूलिसे आच्छादित हो गया है—मालूम देता है समीप ही में कोई म्लेच्छ कटक है।' पूज्यश्रीने कहा—'महानुभावो! धैर्य्य रखो, अपने बैल आदि चतुष्पदोंको एकत्र कर लो; प्रभु श्रीजिनदत्त सूरिजी सबका भला करेंगे।' पूज्यश्रीने मन्त्र-ध्यान पूर्वक अपने दण्डेसे संघके पड़ावके चारों तरफ कोटके आकार वाली रेखा खींच दी। सब लोग उसमें छिप गये। संघके लोगोंने आस-पाससे जाते हुए हजारों म्लेच्छोंको देखा पर सूरिजीके प्रभावसे वे लोग संघको न देख सके; केवल कोटको देखते दूर चले गये, जिससे सब लोग निर्भय हुए।

सं० १२५१ में माण्डव्यपुरसे अजमेरके लिये श्रीजिनपति सूरिजीने विहार किया। वहां म्लेच्छोंका उपद्रव होनेसे २ मास बड़े कष्टसे बीते।

सं० १२५३ में मुसलमानोंने पाटणका भंग कर दिया। गुर्वावलीमें "पत्तनभंगानन्तरं धाटीग्रामे चतुर्मासी कृता" लिखा है।

सं० १३७१ ज्येष्ठ वदि १० को, जाबालिपुरमें कलिकाल-केवली श्रीजिनचन्द्र सूरिजीकी विद्यमानतामें दीक्षा, मालारोपणादि उत्सव हुए। फिर म्लेच्छोंने उस नगरका भंग कर दिया—"ततो म्लेच्छकृतो भंगः श्रीजाबालपुरे जातः।"

सं० १३७७ में, पाटणको 'म्लेच्छबहुलेऽपि समग्रजनपदे" लिखा है और सं० १३८० के वर्णनमें "प्रभूतम्लेच्छव्यवहारीसमूहसंकुले श्रीपत्तने श्रीमहाराजाधिराजसैन्यलीलायमान आवासितः" लिखा है।

सं० १३८४ में श्रीजिनकुशलसूरिजीने सिन्ध प्रांतमें विहार किया। उस समय सिन्ध देशको "महाम्लेच्छकुलाकुलगुरुतरश्रीसिन्धुमण्डलोपरि" लिखा है। उच्च नगरके प्रवेशोत्सवके समयमें "हिन्दूराज्यकालमें श्रीजिनपति सूरिजी पधारे थे" लिखा है, इससे निश्चित है कि उस समय वहां मुसलमानोंका शासन हो चुका था।

पाटणमें भीषण दुष्काल।

सं० १३७७ में श्रीजिनकुशल सूरिजीके महोत्सवके समय पाटणमें महादुर्भिक्ष था। लिखा है कि—"श्रीपत्तने समागताः, तत्र च विषमकाले महादुर्भिक्षप्रवर्त्तमानेऽपि"।

इस प्रकार इस पट्टावलिमें ऐतिहासिक दृष्टिसे अनेक महत्त्वकी बातोंका उल्लेख मिलता है जो अन्यत्र अज्ञात हैं। पट्टावलि-साहित्यमें यह एक बहुत ही विशिष्ट प्रकारकी रचना है।

*
* *

खरतरगच्छालंकार

युगप्रधानाचार्यगुर्वावली।

नमो युगप्रधानमुनीन्द्रेभ्यः।

वर्धमानं जिनं नत्वा, वर्धमानजिनेश्वराः। मुनीन्द्रजिनचन्द्राख्याऽभयदेवमुनीश्वराः ॥१॥

श्रीजिनवल्लभसूरिः, श्रीजिनदत्तसूरयः। यतीन्द्रजिनचन्द्राख्यः, श्रीजिनपतिसूरयः ॥२॥

एतेषां चरितं किञ्चिन्मन्दमत्या यदुच्यते। वृद्धेभ्यः श्रुत[वित्तृभ्य]स्तन्मे कथयतः शृणु ॥३॥

१. अ भो ह र दे शे[1] जिनचन्द्राचार्या देवगृहनिवासिनश्चतुरशीतिस्थावलकनायका आसन्। तेषां वर्धमाननामा शिष्यः। तस्य च सिद्धान्तवाचनां गृह्णतश्चतुरशीतिराशातनाः समायाताः। ताश्च परिभावयत इयं भावना मनसि समजनि-'यद्येता रक्ष्यन्ते तदा भद्रं भवति'। अतगुरोश्च निवेदितम्। गुरुणा चिन्तितम्-'अस्य मनो न मनोहरम्' इति ज्ञात्वा सूरिपदे स्थापितः। तथापि तस्य मनो न रमते चैत्यगृहवासे स्थातुम्। ततो गुरोः सम्मत्या निर्गत्य कतिचिन्मुनिसमेतो ढि ल्ली वा द ली प्रभृतिदेशेषु समायातः। तस्मिन् प्रस्तावे, तत्रैवोद्द्योतनाचार्यसूरिवर आसीत्। तस्य पार्श्वे सम्यगागमतत्त्वं बुद्ध्वा, उपसम्पदं गृहीतवान्। तदनन्तरं श्रीवर्धमानसूरेरियं चिन्ता जाता-'अस्य सूरिमन्त्रस्य कोऽधिष्ठाता'। तस्य ज्ञानायोपवासत्रयमकारि। तृतीयोपवासे धरणेन्द्रः समागतः[3]। तेनोक्तं सूरिमन्त्रस्याहमधिष्ठाता। ततश्च सर्वेषां सूरिमन्त्रपदानां प्रत्येकं फलं निवेदितम्। ततश्च संस्फुरं आचार्यमन्त्रो जातः। तेन च संस्फुराः सपरिवारा वर्धमानसूरयो जज्ञिरे।

२. अस्मिन् प्रस्तावे विज्ञप्तं पण्डितजिनेश्वरगणिना-'भगवन्! ज्ञातस्य जिनमतस्य किं फलम्, यदि कुत्रापि गत्वा न प्रकाश्यते। गूर्जरत्रादेशः प्रभूतो देवगृहवास्याचार्यव्याप्तः श्रूयते। अतस्तत्र गम्यते'। 'युक्तमुक्तं परं शकुननिमित्तादि परिभाव्यते, ततः सर्वं शुभम्'। ततो भामहवृहत्संघातसहिता आत्माष्टादशाश्चलिताः। *क्रमेण प ल्लीं प्राप्ताः। बहिर्भूमिगतस्य पण्डितजिनेश्वरगणिसहितवर्धमानसूरेः सोमध्वजो नाम जटाधरो मिलितः। तेन सहेष्टगोष्ठी जज्ञे। तन्मध्ये गुणं दृष्ट्वा प्रश्नोत्तरः कृतः-

> का दौर्गत्यविनाशिनी हरिविरञ्च्युग्रप्रवाची च को,
> वर्णः को व्यपनीयते च पथिकैरत्यादरेण श्रमः।
> चन्द्रः पृच्छति मन्दिरेषु मरुतां शोभाविधायी च को,
> दाक्षिण्येन नयेन विश्वविदितः को वा भुवि भ्राजते॥ [१]

---

१ प्रत्यन्तरे-आभोहर०। २ मतं। ३ आगतः। ४ सम्फुर। ५ वर्द्धमानाचार्याः। * एतद्द्विनारकान्तर्गतः पाठो नोपलभ्यते प्रत्यन्तरे।

"सो म ध्व जः"। स जटाधरस्तुष्टः। भक्तिर्बह्वी कृता। ततस्तेनैव संघातेन चलिताः क्रमेणा ने हि ल प च ने प्राप्ताः। उत्तरिता मण्डपिकायाम्। तस्मिन् प्रस्तावे तत्र श्राद्धो नास्ति, सुसाधुभक्तः श्रावकोऽपि नाऽस्ति यः स्थानादि याच्यते। तत्रोपविष्टानां घर्मो निकृष्टीभूतः। ततः पण्डितजिनेश्वरेणोक्तम्–'भगवन्नुपविष्टानां किमपि कार्यं न भविष्यति'। 'तर्हि सुशिष्य, किं क्रियते?'। 'यदि यूयं वदथ तदोच्चैर्गृहं दृश्यते तत्र व्रजामि'। व्रज। ततो वन्दित्वा सुगुरुपादपद्मान् गतस्तत्र। तच्च गृहं श्रीदुर्लभराज्ञः पुरोहितस्य। तस्मिन् प्रस्तावे स उपरोहितः शरीराभ्यङ्गं कारयंस्तिष्ठति, तस्याऽग्रे स्थित्वा

श्रिये कृतनतानन्दा विशेषवृषसङ्गताः। भवन्तु तव विप्रेन्द्र! ब्रह्म–श्रीधर–शङ्कराः॥ [२]

इत्याशिर्वादं पठितवान्। ततस्तेन तुष्टो चर्कि। विचक्षणो व्रती कश्चित्। तस्यैव गृहमध्यप्रदेशे छात्रान् वेदपाठपरिचिन्तनं कुर्वतः श्रुत्वा 'इत्थं मा भणत वेदपाठान्'। 'किं तर्हि?' 'इत्थम्'। ततः पुरोहितेनोक्तम्–'अहो! शूद्राणां वेदेऽधिकारो नास्ति'। ततः पण्डितेनोक्तम्–'वयं चतुर्वेदिनो ब्राह्मणाः, सूत्रतोऽर्थतश्च'। ततस्तुष्टः पुरोहितः। 'कस्माद् देशादागताः?' 'ढि ल्ली दे शा त्'। 'कुत्र स्थिताः स्थ?' ÷शुल्कशालायाम्। अन्यत्र स्थानं न लभ्यते, विरोधिरुद्धत्वात्। मदीया गुरवः सन्ति सर्वे] अष्टादश यतिनः'। 'चतुःशालमद्गृहे परिच्छदां बद्ध्वा, एकस्मिन् द्वारे प्रविश्यैकस्यां शालायां तिष्ठतः(थ) सर्वे सुखेन। भिक्षावेलायां मदीये मानुषेऽग्रे कृते ब्राह्मणगृहेषु सुखेन भिक्षा भविष्यति'। ततः प त्त ने" लोके उच्छलिता वार्ता 'वसतिपाला यतयः समायाताः'। ततो देवगृहनिवासिव्रतिभिः श्रुतम्। तैर्विदितं नैषामागमनं श्रेयस्करम्। कोमलो व्याधिर्यदि छिद्यते तदा कुशलम्। ते चाधिकारिपुत्रान् पाठयन्ति। तैश्च वर्षोपलादिदानेन ते चट्टाः सुखिनः कृत्वा भणिताः–'युष्माभिर्लोकमध्ये भणनीयम्–"एते केचन परदेशान्मुनिरूपेण श्रीदुर्लभराजराज्यहेरिका आगताः सन्ति"। सा च वार्ता सर्वजने प्रवृत्ता। सा च प्रसरन्ती राजसभायामपि प्रवृत्ता। राज्ञाऽभाणि–'यद्यत्रैवंविधाः क्षुद्रा आयाताः, तर्हि तेषामाश्रयः केन दत्तः?' केनाऽप्युक्तम्–'देव! तवैव गुरुणा स्वगृहे धारिताः। ततो राज्ञोक्तमाकारय तम्। आकारित उपरोहितः, भणितश्च–'यद्येवंविधा एते किमिति स्थानं दत्तम्?'। तेन भणितम्–'केनेदं दूषणमुद्भावितम्?, यद्येषां दूषणमस्ति तदा लक्षपारुत्थैः कर्पटिकाः प्रक्षिप्ताः। यद्येषां मध्ये दूषणमस्ति तदा छुपन्तु तां भणितारः'। परं न सन्ति केचन। ततो भणितं राज्ञः पुर उपरोहितेन–'देव! ये मद्गृहे सन्ति ते दृष्टा मूर्तिमन्त एव धर्मपुञ्जा लक्ष्यन्ते न तेषां दूषणमस्ति'। तत इमां वार्तामाकर्ण्य सर्वैरपि सूराचार्यप्रभृतिभिः परिभावितम्–'वादे निर्जित्य निस्तारयिष्यामः परदेशागतान् मुनीन्''। ततस्तैरुपरोहित उक्तः–'स्वगृहधृतयतिभिः सह विचारं कर्तुकामा आस्महे। तेषां पुरस्तेनोक्तम्–'तान् पृष्ट्वा यत्स्वरूपं तद्भणिष्यामि'। तेनापि स्वसदने गत्वा भणितास्ते–'भगवन्तो! विपक्षाः श्रीपूज्यैः सह विचारं कर्तुं समीहन्ते'। तैरुक्तम्–'युक्तमेव, परं त्वया न भेतव्यम्'। इदं भणितव्यास्ते–'यदि यूयं तैः सह विवदितुकामास्तदा ते श्रीदुर्लभराजप्रत्यक्षं यत्र भणिष्यथ तत्र विचारं करिष्यन्ति'। तैश्चिन्तितं सर्वेऽधिकारिणोऽस्माकं वशंगता न तेभ्यो भयम्, भवतु राजसमक्षं विचारः। ततोऽस्मिन् दिने पञ्चाशरीयवृहद्देवगृहे विचारो भविष्यतीति निवेदितं सर्वेषां पुरः। उपरोहितेनाप्येकान्ते नृपो भणितः–'देव!

१ 'अनघिल' इति आदर्शे। २ श्राद्धोऽपि। ३ 'पण्डित' शब्दो नास्ति प्र०। ४ नास्ति पदमेतत् प्र०। ५ प्र० °राजपुरोहितस्य। ६ मूलादर्शे 'उपरोहित' इति सर्वत्र। ७ वो भवन्तु च। ८ तुष्टश्चित्ते। ९ °पादपरावर्तनं। १० पदान्। ११ किं नहीत्थम्। १२ पदमिदं नास्ति प्र०। १३ प्र० 'स तुष्टः' इत्येव पदम्। ÷ कोष्ठकान्तर्गता पङ्क्तिः पतिता मूलादर्शे, प्रत्यन्तरादत्रानुसन्धिता। १४ 'पत्तने' नास्ति प्र०। १५ सुखकरम्। १६ मूलादर्शे 'वर्षोल्कादि'। १७ 'राजकुले प्रसृता' इत्येव प्र०। १८ तत उक्तं राज्ञोऽग्रे। १९ 'मुनीन्' नास्ति प्र०।

आगन्तुकमुनिभिः सह स्थानस्थिता मुनयो विचारं विधातुकामास्तिष्ठन्ति[1]। स च विचारो न्यायवादिराजप्रत्यक्षं क्रियमाणः शोभते। ततः पूज्यैः प्रत्यक्षैर्भवितव्यं विचारप्रस्तावे प्रसादं कृत्वा'[2]। ततो राज्ञाऽभाणि–'युक्तमेव कर्तव्यमस्माभिः'।

ततश्चिन्तिते दिने तस्मिन्नेव देवगृहे श्री सू रा चा र्य प्रभृतिचतुरशीतिराचार्याः स्वविभूत्यनुसारेणोपविष्टाः। राजाऽपि प्रधानपुरुषैराकारितः। सोऽप्युपविष्टः। राज्ञोक्तम्–'उपरोहित! आत्मसम्मतानाकारय'। ततः स तत्र गत्वा †विज्ञपयति श्रीवर्धमानसूरीन्–'सर्वे मुनीन्द्रा उपविष्टाः सपरिवाराः। श्रीदुर्लभराजश्च पञ्चाशरीयदेवगृहे† युष्माकमागमनमालोक्यते। तेऽप्याचार्याः पूजितास्ताम्बूलदानेन राज्ञा'। तच्छ्रुत्वोपरोहितमुखात् पश्चाच्छ्रीवर्द्धमानसूरयः[3] श्रीसुधर्मस्वामिजम्बूस्वामिप्रभृतिचतु......न् युगप्रधानान् सूरीन्+ हृदये धृत्वा पण्डितश्रीजिनेश्वरप्रभृतिकतिचिद्गीतार्थसुसाधुभिः[4] सह चलिताः सुशकुनेन। तत्र प्राप्ताः, नृपतिना दर्शिते स्थान उपविष्टाः, पण्डितजिनेश्वरदत्तनिषद्यायाम्[5]। आत्मना च गुरुभणितोचितासने गुरुपादान्त उपविष्टः। राजा च ताम्बूलदानं दातुं प्रवृत्तः। ततः सर्वलोकसमक्षं भणितवन्तो गुरवः–'साधूनां ताम्बूलग्रहणं न युज्यते राजन्!'। यत उक्तम्–

ब्रह्मचारियतीनां च विधवानां च योषिताम्। ताम्बूलभक्षणं विप्रा! गोमांसान्न विशिष्यते॥[३]

ततो विवेकिलोकस्य समाधिर्जाता गुरुषु विषये। गुरुभिर्भणितम्–'एष पण्डितजिनेश्वर उत्तरप्रत्युत्तरं यद्भणिष्यति तदस्माकं सम्मतमेव।' सर्वैरपि भणितं 'भवतु'। ततो मुख्यसूराचार्येणोक्तम्–'ये वसतौ वसन्ति मुनयस्ते षड्दर्शनबाह्याः प्रायेण। षड्दर्शनानीह क्षपणकजटिप्रभृतीनि–इत्यर्थनिर्णयाय नूतनवादस्थलपुस्तिकां वाचनार्थं गृहीता करे[6]। तस्मिन् प्रस्तावे "भाविनि भूतवदुपचारः" इति न्यायाच्छ्रीजिनेश्वरसूरिणा भणितम्–'श्रीदुर्लभमहाराज![7] युष्माकं लोके किं पूर्वपुरुषविहिता नीतिः प्रवर्तते, अथवा आधुनिकपुरुषदर्शिता नूतना नीतिः?'। ततो राज्ञा भणितम्–'अस्माकं देशे पूर्वजवर्णिता राजनीतिः[8] प्रवर्तते नाऽन्या'। ततो जिनेश्वरसूरिभिरुक्तम्[9]–'महाराज! अस्माकं मतेऽपि यद् गणधरैश्चतुर्दशपूर्वधरैश्च यो दर्शितो मार्गः स एव प्रमाणीकर्तुं युज्यते, नाऽन्यः'। ततो राज्ञोक्तं युक्तमेव। ततो जिनेश्वरसूरिभिरुक्तम्–'महाराज! वयं दूरदेशादागताः, पूर्वपुरुषविरचितस्वसिद्धान्तपुस्तकवृन्दं नानीतम्[10]। एतेषां मठेभ्यो महाराज! यूयमानयत पूर्वपुरुषविरचितसिद्धान्तपुस्तकगण्डलकं येन मार्गामार्गनिश्चयं कुर्मः[11]"'। ततो[12] राज्ञोक्तास्ते–'युक्तं वदन्त्येते, स्वपुरुषान् प्रेषयामि, यूयं पुस्तकसमर्पणे निरोषं दद्ध्वम्'। ते च जानन्त्येषमेव पक्षो भविष्यतीति, तूष्णीं[13] विधाय स्थितास्ते। ततो राज्ञा स्वपुरुषाः प्रेषिताः–शीघ्रं सिद्धान्तपुस्तकगण्डलकमानयत। शीघ्रमानीतम्। आनीतमात्रमेव छोटितम्[14]। तत्र देवगुरुप्रसादाद् दशवैकालिकं चतुर्दशपूर्वधरविरचितं निर्गतम्। तस्मिन् प्रथममेवेयं[15] गाथा निर्गता–

अन्नट्ठं पगडं लेणं, भइज्ज सयणासणं। उच्चारभूमिसंपन्नं, इत्थीपसुविवज्जियं॥ [४]

एवंविधायां वसतौ वसन्ति साधवो न देवगृहे। राज्ञा भावितं युक्तमुक्तम्। +सर्वेऽधिकारिणो विदन्ति निरुत्तरी-

---

१ 'विचारं करिष्यन्ति' इत्येव प्र०। २ 'पूज्याः प्रत्यक्षा भवितव्यं' इति मूल०। † दण्डान्तर्गतपाठस्थाने प्र० 'विज्ञप्ता वर्द्धमानाचार्याः सर्वे उपविष्टाः सन्ति' इत्येव वाक्यविन्यासः। ३ 'पश्चात्' नास्ति प्र०। + प्र० 'सुधर्मस्वाम्यादियुगप्रधानान्' इत्येव। ४ जिनेश्वरगणि प्रभृति°। ५ जिनेश्वरगणिदत्त°। ६ 'पुस्तिका करे धृता' इत्येव प्र०। ७ 'प्रस्तावे जिनेश्वरसूरिणा भणित भो राजन्' इत्येव प्र०। ८ 'पूर्वराजनीतिः' प्र०। ९ 'जिनेश्वरेणोक्तं राजन्'। १० °विरचितानि पुस्तकादीनि नानीतानि। ११ °सिद्धान्तपुस्तकं येन मार्गनिश्चयं कुर्मः। १२ 'ततो' नास्ति। १३ तूष्णीं स्थिताः। १४ 'राज्ञा स्वपुरुषाः प्रेषिताः। शीघ्रं पुस्तकान्यानीतानि। छोटितानि' इत्येष पाठः प्रत्यन्तरे। १५ तत्रेयं गाथा। + एतच्चिह्नाङ्कितपाठस्थाने प्र०–'सर्वैरधिकारिपुरुषैर्विदितं निरुत्तरीभूता अस्मद्गुरवः। ततः सर्वे राजप्रत्यक्षं गुरुत्वेन वर्द्धमानसूरयोऽङ्गीकृताः। येनास्मान् बहुमन्यते राजा'। इत्येषा पंक्तिः।

भूता अस्माकं गुरवः। ततः सर्वेऽधिकारिणः श्रीकरणप्रभृतयः पटवपर्यन्ता वदन्ति प्रत्येकमस्माकमेते गुरव-इति गुरुनिवेदनं राजप्रत्यक्षं कुर्वन्ति। येन राजाऽस्मान् बहु मन्यते, अस्माकं कारणेन गुरूनपि। राजा च न्यायवादी। तस्मिन् प्रस्तावे श्रीजिनेश्वरसूरिभिरुक्तम्–'महाराज! कश्चिद्गुरुः श्रीकरणाधिकारिणः, कश्चिन्मन्त्रिणः, *किं बहुना कश्चित्पटवानाम्। या नाठिः (?) सा कस्य सम्बन्धिनी भवति?' राज्ञोक्तं मदीया। 'तर्हि महाराज! कः कस्याऽपि सम्बन्धी जातो* वयं न कस्याऽपि'। ततो राज्ञाऽऽत्मसम्बन्धिनो गुरवः कृताः। ततो राजा भणति–'सर्वेषां गुरूणां सप्त सप्त गब्दिका रत्नपटीनिर्मिताः, किमित्यस्मद्गुरूणां नीचैरासने उपवेशनं, किमस्माकं गब्दिका न सन्ति?'। ततो जिनेश्वरसूरिणा भणितम्–'महाराज! साधूनां गब्दिकोपवेशनं न युज्यते। यत उक्तम्–

भवति नियतमेवासंयमः स्याद्विभूषा, नृपतिककुद! एतल्लोकहासश्च भिक्षोः।
स्फुटतर इह सङ्गः सातशीलत्वमुच्चैरिति न खलु मुमुक्षोः सङ्गतं गब्दिकादि॥ [५]

इति वृत्तार्थः कथितः। राज्ञोक्तम्–'कुत्र यूयं निवसत?' तैरुक्तम्–'महाराज! कथं स्थानं विपक्षेषु सत्सु। अहोऽपुत्रगृहं क र डि ह ट्टी मध्ये बृहत्तरमस्ति, तत्र वसितव्यम्।' तत्क्षणादेव लब्धम्। 'युष्माकं भोजनं कथम्?' तदपि पूर्ववद्दुर्लभम्। 'यूयं कति साधवः सन्ति?'–'महाराज! अष्टादश'। 'एकहस्तिपिण्डेन सर्वे तृप्ता भविष्यन्ति'। ततो भणितं जिनेश्वरसूरिणा–'महाराज! राजपिण्डो न कल्पते, साधूनां निषेधः कृतो राजपिण्डस्य'। 'तर्हि मम मानुषेऽग्रे भूते भिक्षाऽपि सुलभा भविष्यति'। ततो वादं कृत्वा विपक्षान् निर्जित्य राज्ञा राजलोकैश्च सह वसतौ प्रविष्टाः। वसतिस्थापना कृता प्रथमं गू र्ज र त्रा दे शे।

३. द्वितीयदिनेऽचिन्ति विपक्षैरुपायद्वयं निरर्थकं जातम्, अन्योऽपि निस्सारणोपायो मन्यते[५]। पट्टराज्ञीभक्तो राजा विद्यते, सा च यद्भणति तत् करोति। सर्वेऽप्यधिकारिणः स्वगुरु-स्वगुरुवचनेनाम्रकदलीफलद्राक्षादिफलभृतभाजनान्याभरणयुक्तप्रधानवसनादीनि च ढौकनानि गृहीत्वा गता राज्ञीसमीपे। तस्या अग्रे वीतरागस्येव बलिविरचनं चक्रिरे। राज्ञी च तुष्टा प्रयोजनविधानेऽभिमुखीभूता। तस्मिन्नेव प्रस्तावे राज्ञः प्रयोजनमुपस्थितम्। राज्ञीसमीपे ततो ढि ल्ली दे श सम्बन्धी पुरुष आदेशकारी राज्ञा तत्र प्रेषितः–इदं प्रयोजनं राज्या निवेदय। देव! निवेदयामीति भणित्वा ‡शीघ्रं गतः। राजप्रयोजनं निवेदितं राज्याः। अनेकेऽधिकारिणो नानाढौकनिकाश्च विलोक्य तेन चिन्तितम्–'ये मम देशादागता आचार्यास्तेषां निस्सारणोपायः संभाव्यते, परं मयाऽपि किञ्चित्तेषां पक्षपोषकं राज्ञः पुरो भणनीयम्'। ‡गतस्तत्र। 'देव! प्रयोजनं निवेदितं भवताम्, परं देव! बृहत् कौतुकं तत्र गतेन दृष्टम्'। 'कीदृशं भद्र?'। 'राज्ञी अर्हद्रूपा जाता, यथाऽर्हतामग्रे बलिविरचनं क्रियते एवं राज्या अग्रे'। राज्ञा चिन्तितम्–'ये मया न्यायवादिनो गुरुत्वेनाऽङ्गीकृताः, अद्यापि तेषां पृष्ठिं न मुञ्चन्ति'। राज्ञा भणितः सोऽपि पुरुषः–'शीघ्रं गच्छ राज्ञीपार्श्वे, गत्वा भणनीयम्–राजा भाणयति राज्ञीं 'यद्दत्तं भवत्या अग्रे तन्मध्यादेकमपि पूगीफलं यदि लास्यसि तदा न त्वं मम नाऽहं तव' इति श्रुत्वा भीता राज्ञी, भणितं च 'भो! यद् येनाऽऽनीतं तत्तेन स्वगृहे नेतव्यम्; मम नास्ति प्रयोजनम्'। सोऽप्युपायो निरर्थको जज्ञे।

४. चतुर्थ उपायश्चिन्तितः–'यदि राजा देशान्तरीयमुनीन्द्रान् बहु मंस्यते तदा सर्वाणि देवसदनानि शून्यानि मुक्त्वा देशान्तरेषु गमिष्यामो वयम्। केनापि राज्ञो निवेदितम्। राज्ञाऽभाणि 'यदि तेभ्यो न रोचते तदा गच्छन्तु'। देव-

* एतच्चिह्नान्तर्गतो वाक्यविन्यासो नास्ति प्र०। १ प्र० परं वयं न कस्यापि सम्बन्धिनः। २ 'आचार्याणां'। ३ 'लङ्घयम्'। ४ जिनेश्वरेणोक्तं राजपिण्डो न कल्पते। ५ 'चिन्तितः'। ६ 'लात्वा'। ‡ तारकान्तर्गतः पाठो नास्ति प्र०। ७–७ 'बलिढौकनेनेति' इत्येव पदम्। ८ 'समीपे'। ९ 'पूगीफलं न ग्राह्यं यदि'। १० देशान्तरादागतान् मुनीन् मंस्यते। ११ नास्ति प्र० 'केनापि'। १२ 'राज्ञोक्तं गच्छन्तु' इत्येव प्र०।

गृहपूजका धृत्या बटुका धारिताः। सर्वे देवाः पूजनीयाः। परं देवगृहमन्तरेण [तैः] बहिःस्थातुं न शक्यते, ततः कोऽपि केनाऽपि व्याजेनागतः। किं बहुना, सर्वेऽप्यागत्य देवगृहेषु स्थिताः।

५. श्रीवर्द्धमानसूरिरपि[1] सपरिवारो राजसन्मानेन सर्वत्र देशे विहरति[2], कोऽपि किमपि कथयितुं न[3] शक्नोति। ततः श्रीजिनेश्वरसूरिः शुभलग्ने स्वपट्टे निवेशितः। द्वितीयोऽपि तद्भ्राता बुद्धिसागर आचार्यः कृतः। तयोर्भगिनी कल्याणमतिनाम्नी महत्तरा कृता। पश्चाच्छ्री[4]जिनेश्वरसूरिणा विहारक्रमं[5] कुर्वता जिनचन्द्र-अभयदेव-धनेश्वर-हरिभद्र-प्रसन्नचन्द्र-धर्मदेव-सहदेव-सुमतिप्रभृतयोऽनेके शिष्याः कृताः। ततो वर्द्धमानसूरिः सिद्धान्तविधिना श्री अ र्बु द शि ख र तीर्थे देवत्वं गतः[6]।

६. पश्चाच्छ्रीजिनेश्वरसूरिभिः श्रीजिनचन्द्राभयदेवौ गुणपात्रं ज्ञात्वा सूरिपदे निवेशितौ, क्रमेण युगप्रधानौ जातौ। *अन्यौ च द्वौ सूरी धनेश्वरो जिनभद्रनामा, द्वितीयश्च हरिभद्राचार्यः, तथोपाध्यायत्रयं कृतं धर्मदेव-सुमति-विमलनामानः। धर्मदेवोपाध्यायः सहदेवगणी च द्वावपि भ्रातरौ। धर्मदेवोपाध्यायेन हरिसिंह-सर्वदेवगणिभ्रातरौ सोमचन्द्रपण्डितश्च शिष्या विहिताः। सहदेवगणिनाऽशोकचन्द्रः शिष्यः कृतः। स चातीववल्लभ आसीत्। स च श्रीजिनचन्द्रसूरिणा विशेषेण पाठयित्वाऽऽचार्यपदे निवेशितः। तेन च स्वपदे हरिसिंहाचार्यो विहितः। अन्यौ च द्वौ सूरी प्रसन्नचन्द्र-देवभद्राख्यौ। देवभद्रः सुमत्युपाध्यायशिष्यः। प्रसन्नचन्द्राचार्यप्रभृतयश्चत्वारोऽभयदेवसूरिणा पाठितास्तर्कादिशास्त्राणि। यत उक्तम्-

> सत्तर्कन्यायचर्चार्चितचतुरगिरः श्रीप्रसन्नेन्दुसूरिः,
> सूरिः श्रीवर्द्धमानो यतिपतिहरिभद्रो मुनिर्देवचन्द्रः।
> इत्याद्याः सर्वविद्यार्णवसकलभुवः सञ्चरिष्णूरुकीर्त्तिः-
> स्तम्भायन्तेऽधुनाऽपि श्रुतचरणरमाराजिनो यस्य शिष्याः॥* [६]

७. श्रीजिनेश्वरसूरय आ शा प ल्ल्यां विहृताः। तत्र व्याख्याने विचक्षणा उपविशन्ति। तत्र लीलावतीकथा कृता अनेकार्थवर्णनसमेता। तथा डि ण्डि याँ[7] णा ग्रा मे कथानककोशः कृतो व्याख्यानाय। प्रथमं स्थानस्थितदेवगृहनिवास्याचार्याणां समीपे व्याख्यानाय पुस्तकयाचनं कृतम्। तैर्न दत्तम्। पश्चात्, पश्चिमप्रहरद्वये विरच्यते, प्रभाते व्याख्यायते। इत्थं कथानककोशश्चतुर्मास्यां[8] कृतः। तथा मरुदेविगणिन्याऽनशनं गृहीतं, चत्वारिंशद्दिनानि स्थित्वा। श्रीजिनेश्वरसूरिणा समाधानमुत्पादितं भणितं च-'यत्रोत्पत्स्यसे तत्स्थानं निवेदनीयम्'। भणितं 'निवेदयिष्यामि'[9]। श्रावक एको युगप्रधाननिश्चयाभावे उ ज य न्ते गत्वा तस्य निश्चयार्थमुपवासान् कर्तुमारब्धः। तस्मिन् प्रस्तावे भक्तशान्तिस्तीर्थङ्करवन्दनार्थं म हा वि दे हे[10] गतः। तस्याऽयं[11] मरुदेविदेवेन सन्देशो भणितः-

> मरुदेविनामअज्जा गणिणी जा आसि तुम्ह गच्छंमि। सग्गंमि गया पढमे, देवो जाओ महिड्ढीओ॥
> टक्कलयंमि विमाणे दुसागराऊ सुरो समुप्पन्नो। समणेससिरिजिणेसरसूरिस्स इमं कहिज्जासु॥
> टक्कउरे जिणवंदणनिमित्तमिहागएणं संदिट्ठं। चरणंमि उज्जमो मे, कायव्वो किं च सेसेसु॥ [९]

तेनाऽपि स्वयं गत्वा न कथितं गाथात्रयम्। स श्रावक उपवासं प्रवृत्त उत्थाप्य कथितम्, अञ्चलेऽक्षराणि लिखितानि

१ 'सूरयोऽपि सपरिवाराः'। २ 'विहरन्ति'। ३ 'न कथयति'। ४ 'ततो पश्चा०'। ५ 'विहारं'। ६ 'वर्द्धमानसूरिर्विधिनाऽर्बुदे देवत्वे गतः'। * एतच्चिह्नान्तर्गताः पंक्तयो नोपलभ्यन्ते प्रत्यन्तरे। ७ प्र० 'डिण्डियाणकग्रामे'। ८ 'कथ्यं'। ९ 'तथा-प्यङ्गीकृतं'। १० नास्ति पदमेतत् प्र०। ११ 'तस्याग्रे'।

'मसट सटच'। प त्त ने गत्वा यस्याऽऽचार्यस्य हस्तेन प्रक्षालितानि यास्यति स युगप्रधानः। सर्वासु वसतिषु गतः, दर्शितान्यक्षराणि, न केनाऽपि बुद्धानि। श्रीजिनेश्वरसूरिवसतौ गतः। दर्शितान्यक्षराणि। चिन्तयित्वा प्रक्षालितानि, गाथात्रयं चालेखि। तेन चिन्तितम्–एष युगप्रधानः। विशेषेण गुरुत्वेनाऽङ्गीकृतः। *इत्यादितीर्थकरमहावीरदर्शितधर्मप्रभावनां कृत्वा* श्रीजिनेश्वरसूरिर्देवत्वं गतः।

८. पश्चाज्जिनचन्द्रसूरिः सूरिवर आसीत्, यस्याऽष्टादश नाममालाः सूत्रतोऽर्थतश्च मनस्यासन्। सर्वशास्त्रविदा येनाऽष्टादशसहस्रप्रमाणा 'संवेगरंगशाला' मोक्षप्रासादपदवी भव्यजन्तूनां कृता। येन जा वा लि पु रे विहृतेन श्रावकाणामग्रे 'चीवंदणमावस्सय' इत्यादिगाथाया व्याख्यानं कुर्वता, ये सिद्धान्तसंवादाः कथितास्ते सर्वे सुशिष्येण लिखिताः। शतत्रयप्रमाणो 'दिनचर्याग्रन्थो' जातः श्राद्धानामुपकारी। सोऽपि श्रीवीरधर्मं[1] याथातथ्यं प्रकाश्य दिवं गतः।

९. तदनन्तरं श्रीमदभयसूरिर्नवाङ्गवृत्तिकर्ता युगप्रधान आसीत्[2]। स कथं नवाङ्गवृत्तिकर्ता, तत्राह–तस्य श म्भ पा ण ग्रा मे शरीरकारणं[3] बभूव। यथा यथौषधादिः प्रयुज्यते तथा रोगो वृद्धिं याति, न निवर्तते। लोकः पृथग्ग्रामेषु भक्तः, यदा यदा[4] चतुर्दशीप्रतिक्रमणं भवति तैतश्चतुर्योजनदूरक्षेत्रादागत्य प्रतिक्रामन्ति श्रावकास्तत्र। कदाचिदतीव रोगाक्रान्तं शरीरं[5] ज्ञात्वा दुष्कृतनिमित्तं समाहूताः सर्वे श्राद्धाः। त्रयोदशीदिने पश्चाद्रात्रौ प्रहरद्वये शासनदेवता समाजगाम[6]। तयाऽभाणि–'स्वपिषि जागर्षि वा?'। ततो मन्दं मन्दं भणितम्–'जागर्मि'। तया भणितम्–'शीघ्रमुत्तिष्ठ, सूत्रकुक्कुटिका नवोन्मोचय'। भणति–'न शक्नोमि'। 'कथं न शंक्नोषि? अद्यापि बहुकालं जीविष्यसि, नवाङ्गवृत्तौ प्रतिविधास्यसि[7]'। 'कथं विधास्याम्येवंविधे शरीरे?'। तत उपदेशं ददाति[8] देवता–'स्त म्भ न क पु रे से ढी नद्युपकण्ठे खंखरापलाशमध्ये पार्श्वनाथप्रतिमा स्वयम्भूर्विद्यते। तस्या अग्रे देवान् वन्दस्व, येन स्वस्थशरीरो भवसि'। पश्चाद्देवताऽदर्शनी भूता। प्रभाते मिथ्यादुष्कृतं दास्यन्ति[9] गुरवः–इत्यभिप्रायेणाऽऽगन्तुकाः स्थानस्थिताश्च सर्वे मिलित्वा[10] समाययुः[11]। पूज्या वन्दिताः। वन्दितैः सद्भिर्भणितम्–'स्त म्भ न क पु रे श्रीपार्श्वनाथदेवो वन्दनीयः। ततोऽज्ञायि श्राद्धैः–श्रीपूज्यानामुपदेशो जातः। ततो भणितं तैर्वयमप्यागमिष्यामः। ततो गुरूणां वाहनं कृतम्। बुभुक्षा सर्वथैव नष्टाऽऽसीत्। प्रथमेऽपि प्रयाणके रसविषयेऽभिलाषोऽभूत्। क्रमेण ध व ल कं यावत् प्राप्तस्य शरीरं स्वस्थं जातम्। पश्चात् पादैः स्त म्भ न क पु रे विहृतः। श्रावकाः श्रीपार्श्वनाथप्रतिमामवलोकयितुं प्रवृत्ताः। कुत्राऽपि न दृष्टा। पश्चाद् गुरवः पृष्टाः, तैरभाणि–'खंखरापलाशमध्येऽवलोकयत'। ततोऽवलोकिता दृष्टा देदीप्यमाना। प्रतिदिनं गौरेका स्नानाय दुग्धं क्षरति। ततस्तैस्तुष्टैरागत्य भणितं गुरोः पुरः–'भगवन्! दृष्टा यथा भणिता'। ततो भगवान् वन्दनाय भक्त्या चलितः। दृष्टा तत्र, वन्दिता भक्त्या। तत ऊर्द्ध्वं स्थितेन देवप्रभावात् तदैव 'जय तिहुयणे'त्यादि नमस्कारद्वात्रिंशिका कृता। देवताभिर्भणितम्–'नमस्कारद्वयमुच्चारय; तस्मिन् ध्याते सर्वस्याऽपि प्रत्यर्थीभवनं भविष्यति। तदपि कष्टम्। त्रिंशताऽपि नमस्कारैर्ध्यातैः सर्वं भद्रं विधास्यामः। तत उच्चारितम्। समुदायेन सह देववन्दनं कृतम्। समुदायेन विस्तरेण स्नानाद्याभरणपूजा कृता। तत्र स्थापना विहिता। देवगृहं जातम्। सर्वलोकवाञ्छितपूरणेन श्रीमदभयदेवसूरिस्थापितं श्रीपार्श्वनाथतीर्थं नाम प्रसिद्धिं गतम्।

---

* एतत् स्थाने 'तीर्थं प्रभाव्य' इत्येव प्र०। १ 'ततः'। २ नास्ति पदमेतत् प्र०। ३ 'वीरशासनं'। ४ ततोऽभयदेवसूरि°। ५ 'आसीत्' नास्ति प्र०। ६ पतितं मूलादर्शे पदमेतत्। ७ 'तदा तदा'। ८ 'वपुः'। ९ 'समागता'। १० 'शक्ष्यसि'। ११ 'ददते'। १२ 'अद्दत्सी'। १३ 'दास्यन्ति'। १४ 'मिलिताः'। १५ 'गताः'। १६ 'श्राद्धाः'। १७ 'तैः'। १८ नास्ति पदमेतत् प्र०। १९ 'आगत्योक्तं भगवन्'। २० 'पूज्या वन्दनाय चलिताः'। २१ 'करिष्यामः'। २२ 'संघेन'। २३ सर्वलोकेप्सित°।

१०. तत्स्थानात् प त्त ने समायाताः । क र डि ह ट्टी वसतौ स्थिताः । तत्र स्थितैर्नवाङ्गानां स्थानप्रभृतीनां वृत्तयः कृताः । यत्र सन्देह उत्पद्यते तत्र स्मरणप्रस्तावे, जया-विजया-जयन्ती-अपराजिता देवताः स्मृताः सत्यस्तीर्थंकरपार्श्वे महाविदेहे गत्वा तान् पृष्ट्वा निस्सन्देहं तत्स्थानं कुर्वन्ति ।

११. तस्मिन् प्रस्तावे देवगृहनिवास्याचार्यमुख्यो द्रोणाचार्योऽस्ति । तेनाऽपि सिद्धान्तो व्याख्यातुं समारब्धः । सर्वेऽप्याचार्याः कपलिकां गृहीत्वा श्रोतुं समागच्छन्ति । तथाऽभयदेवसूरिरपि गच्छति । स चाचार्य आत्मसमीपे निषद्यां दापयति । यत्र यत्र व्याख्यानं कुर्वतस्तस्य सन्देह उत्पद्यते, तदा नीचैः स्वरेण तथा कथयति यथाऽन्ये न शृण्वन्ति । अन्यस्मिन् दिने यद् व्याख्यायते सिद्धान्तस्थानं तद्वृत्तिरानीता । एतां चिन्तयित्वा व्याख्यानयन्तु भवन्तः । यस्तां पश्यति सार्थकां, तस्याऽऽश्चर्यं भवति; विशेषेण व्याख्यातुराचार्यस्य । स चिन्तयति-किं साक्षाद्गणधरैः कृताऽथवाऽनेनाऽपि, तस्मिन् विषये ऽतीवादरो मनसि विहितः । द्वितीयदिने सम्मुखमुत्थातुं प्रवृत्तः । ततस्तादृशं सुविहिताचार्यविषयमादरं दृष्ट्वा, रुष्टा व्युत्थिताः सन्तो वसतौ गता भणन्ति देवगृहनिवास्याचार्याः-'केन गुणेनैषोऽधिकः, येनाऽस्माकं मुख्योऽप्येवंविधमादरं दर्शयति; पश्चात् के वयं भविष्यामः ?' । द्रोणाचार्योऽपि वृहत्तरः सदर्थो विशेषज्ञो गुणपक्षपाती सन् नूतनं वृत्तं कृत्वा सर्वेषु देवगृहनिवास्याचार्यमठेषु प्रेषितम्-

आचार्याः प्रतिसद्म सन्ति महिमा येषामपि प्राकृतै-
मातुं नाऽध्यवसीयते सुचरितैस्तेषां पवित्रं जगत् ।
एकेनाऽपि गुणेन किन्तु जगति प्रज्ञाधनाः साम्प्रतं,
यो धत्तेऽभयदेवसूरिसमतां सोऽस्माकमावेद्यताम् ॥ [१०]

तत उपशान्ताः सर्वे । द्रोणाचार्येणाऽभाणि श्रीमदभयदेवसूरीणामग्रे-'या वृत्तीः सिद्धान्ते करिष्यसि ताः सर्वा मया शोधनीया लेखनीयाश्च ।' तथा तत्र स्थितेन पारिग्रहिकद्वयं प्रतिबोधितम्, सम्यक्त्वद्वादशव्रतास्थितं कारितम् । तच्च समाधिना श्रावकत्वं प्रतिपाल्य देवलोकं गतम् । देवलोकात् तीर्थंकरवन्दनार्थं महाविदेहे गतम् । सीमन्धरस्वामि-युगन्धरस्वामिनौ वन्दितौ, धर्मं श्रुत्वा पृष्टौ-'मम गुरुः श्रीमदभयदेवसूरिः कतिथे भवे मुक्तिं गमिष्यति ?' भगवद्भ्यां भणितम्-'तृतीये भवे सेत्स्यती'ति श्रुत्वा तुष्टौ देवौ स्वगुरुपार्श्वे गतौ जिनवार्ता कथिता । वन्दित्वा गच्छद्भ्यामिमा गाथा पठिता-

भणियं तित्थयरेहिं महाविदेहे भवंमि तइयंमि ।
तुम्हाण चेव गुरवो मुत्तिं सिग्घं गमिस्संति ॥ [११]

सा च स्वाध्यायं कुर्वत्या व्रतिन्या श्रुताऽऽनायिता च गुरूणां निवेदिता । भणितम्-ज्ञाता चैवाऽस्माभिः ।

१२. पश्चात् पा ल्ह उ दा ग्रा मे विहृताः । तत्र सम्बन्धिनो भक्ताः श्रमणोपासकाः सन्ति । तेषां यानपात्राणि वहन्ति । पयोधौ तानि च प्रेषितानि । तेषां चाऽऽगच्छतां क्रयाणकभृतानां वार्ता जाता-'बुडितानि' । ते च श्राद्धा वार्तां श्रुत्वाऽसुखिनो जज्ञिरे । ते च श्रीमदभयदेवसूरिस्मरणप्रस्तावे वसतौ गताः । वन्दिता भगवन्तः । तैश्च पृष्टाः-'किमिति वन्दनकविषयवेलातिक्रमो जातः ?' । 'भगवन् ! कारणेन' । 'किं कारणम् ?' 'पोतबुडनोदन्ताकर्णनेनाऽसुखिताः स्मः' तेन नाऽऽगताः । ततः क्षणमात्रं चित्ते ध्यानं धृत्वा भणितम्-अत्र विषयेऽसमाधानं न विधेयं भवद्भिः । पश्चाद् द्वितीयदिने मानुष आगतः । पोताः क्षेमेणोत्तरिताः । वार्तामाकर्ण्य श्राद्धैः सर्वसम्मतेन गुरवो भणिताः-'यावल्लाभः क्रयाणकेन

१ ततः पत्तने। २ 'स्थलाक्ष'। ३ 'लात्वा'। ४ 'पयत्र'। ५ 'किं'। ६ 'चैत्यनिवा०'। ७ 'पाल्हउद्र ग्रामे'। ८ 'भाद्धा'। ९ 'जाताः'। १० 'स्मरणावसरे'। ११ 'उक्तम्'। १२ 'चिन्ता न कार्या'। १३ 'उत्तीर्णा'।

१५. ततो वाचनाचार्यो जिनवल्लभगणिः कतिचिद्दिनानि पत्तनभूमौ विहृत्य न तादृशो विशेषेण बोधो विधातुं कस्यापि शक्यते येन सुखमुत्पद्यते मनसि। ततश्चाऽऽत्मतृतीयं आगमविधिना सुशकुनेन भव्यजनमनसि भगवद्भणितविधिधर्मोत्पादनाय चित्रकूटदेशादिषु विहृतः। ते च देशाः सर्वेऽपि प्रायेण देवगृहनिवासिमुनीन्द्रैर्व्याप्ताः। सर्वोऽपि तद्वासितो लोकः, किं बहुना। नानाग्रामेषु विहारं विदधंश्चित्रकूटे प्राप्तः। †यद्यपि तत्राऽशुभैर्भाविता लोकास्तथाऽप्ययुक्तं कर्तुं न शक्नुवन्ति, पत्तने गुरूणां प्रसिद्धिश्रवणात्†। स्थानं याचितास्तत्रत्यश्राद्धाः। तैश्च भणितम्–'चण्डिकामठोऽस्ति यदि तत्र तिष्ठथ'। ततो जिनवल्लभगणिना ज्ञातमशुभबुद्ध्या भणन्त्येते, तथापि तत्रापि स्थितस्य देवगुरुप्रसादाद् भद्रं भविष्यतीति चिन्तयित्वा भणितास्ते–'तत्रैव बहु मन्यध्वं यूयं येन तिष्ठामः'। तैरभाणि तिष्ठत। ततो देवगुरून् स्मृत्वा देवतां चानुज्ञाप्य स्थितास्तत्र। देवता च तेषां ज्ञानेन ध्यानेन सदनुष्ठानेन तुष्टा सती तान् प्रत्ययुक्तं रक्षति। ते च जिनवल्लभगणयः सर्वविद्यानिधानभूताः। †कथम्, तथाहि–वेदितारो जिनेन्द्रमतस्यापकतकाभयदेवानेकान्तजयपताकादि परदर्शनकन्दली-किरणावली-न्यायतर्कादि पाणिन्याद्यष्टव्याकरणं सूत्रतोऽर्थतश्च, चतुरशीतिनाटक-सर्वज्योतिष्कशास्त्र-पञ्चमहाकाव्यादिसर्वकाव्य-जयदेवप्रभृतिसर्वच्छन्दोज्ञातारः† इति प्रसिद्धिश्चित्रकूटे जाता। सर्वे परदर्शनीपविप्रादिलोका आगन्तुं प्रवृत्ताः। यस्य यस्य यस्मिन् यस्मिन् शास्त्रविषये संशय उत्पद्यते स सर्वोऽपि जनः पृच्छति, यथा सन्देहस्त्रुट्यति तथोत्तरं ददाति। श्रावका अपि केचन केचन समाजग्मुः। सिद्धान्तवचनानि श्रुत्वा तदनुसारेण क्रियामपि दृष्ट्वा साधारण-सड्ढकप्रभृतिश्रावकैः समाधिना श्रीवाचनाचार्यजिनवल्लभगणयो गुरुत्वेन प्रतिपन्नाः। गुरूपदेशेन परिज्ञानं, ज्योतिष्कपरिज्ञानमप्यतीवाऽऽसीत्। साधारणेन परिग्रहपरिमाणयाचनं कृतम्। गुरुणा भणितम्–'गृहाण कियन्मात्रं ग्रहीष्यसि ?'। 'भगवन् ! विंशतिसहस्रमात्रं सर्वसंग्रहे करिष्यामि'। पश्चाद् गुरुभिरुक्तम्–'बहुतरं कुरु, किं बहुना, लक्षं द्रम्माणां परिमाणं कारितः। पश्चाद् यथा यथा सर्वसम्पदा प्रवर्धमानः साधारणो जज्ञे तथा तथा संघस्य सर्वसामर्थ्येन गुर्वाज्ञया साधारणो भवितुं प्रवृत्तः। अन्ये तु श्राद्धास्तथा प्रवर्तितुमारब्धाः।

१६. तथाऽश्वयुजि मासे कृष्णपक्षे त्रयोदश्यां श्रीमहावीरगर्भापहारकल्याणकदिने भणितं श्रीजिनवल्लभगणिना श्राद्धानां पुरः–'यदि देवा वन्द्यन्ते देवगृहे महावीरस्य तदा सुभद्रं भविष्यति। षष्ठमपि कल्याणकं गर्भापहारलक्षणम्, *यतः "पंच हत्थुत्तरे होत्था साइणा परिनिव्वुडे" इति सिद्धान्ते भणनात्*'। तस्मिन् प्रस्तावे विधिचैत्यं नास्ति। चैत्यनिवासिगुरुदेवगृहेषु गम्यते। पश्चाच्छ्रावकैर्भणितम्–'भगवन् ! यदि युष्माकं सम्मतं तत् क्रियते'। ततः सर्वे श्रावका निर्मलशरीरा निर्मलवस्त्रा गृहीतनिर्मलपूजोपकरणा गुरुणा सह देवगृहे गन्तुं प्रवृत्ताः। ततो देवगृहस्थितयाऽऽर्यिकया गुरून् श्राद्धसमुदायेनाऽऽगच्छतो दृष्ट्वा पृष्टम्–'को विशेषोऽद्य ?' केनापि कथितम्–वीरगर्भापहारषष्ठकल्याणकपूजाकरणार्थं समागच्छन्ति। तयाऽचिन्ति–पूर्वं केनापि न कृतमेते करिष्यन्तीति न युक्तम्। पश्चात् संयती देवगृहद्वारे पतित्वा स्थिता, द्वारे समागतान् दृष्ट्वा तयाऽशुभयाऽभाणि–'मया मृतया यदि प्रविशत'। ततोऽप्रीतिकं ज्ञात्वा निवर्त्य स्वस्थाने गत्वा श्राद्धैरुक्तम्–'बृहत्तरसदनानि सन्त्येकस्य गृहस्योपरि चतुर्विंशतिजिनपट्टकं धृत्वा देववन्दनादि सर्वं धर्मप्रयोजनं क्रियते'। गुरुणा भणितं युक्तमेव। तत आराधितं विस्तरेण कल्याणकम्। समाधानं ममजनि। ततो

---

१ कोऽपि बोधः। २ नास्ति। ३ येन चित्ते। ४ तन आत्मना तृतीय-। ५ नास्ति। ६ चैत्यनिवासि०। ७ कुर्वं। ८ गतः। † एतदन्तर्गता पंक्तिर्नास्ति प्र०। ९ लोकाः। १० जिनवल्लभेनाऽचिन्ति–एतेऽशुभबुद्ध्या भणन्ति। ११ वा० जिन०। †-† एतद्दण्डान्तर्गतः पाठो नास्ति प्र०। १२ श्राद्धाः। १३ समाययुः। १–१ नास्ति प्र०। १४ याचितं। १५ गुरुणोक्तं। १६ 'लक्षं परिमाणं' इत्येव प्र०। १७ ततो। १८ उक्तं। १९ भद्रं भवति। २० श्रीवीरस्य षष्ठं कल्याणकं। * नास्ति प्र०। २१ श्राद्धैः सहा०। २२ केनोक्तं। २३ वीरषष्ठ०। २४ चिन्तितं। २५ चैत्यद्वारे पतिता मया मृतया मध्ये गमिष्यन्ति–इत्येव। २६ गुरुणोक्तं।

गीतार्थैः श्रावकैर्मन्त्रितम्–'विपक्षैरविधिप्रवृत्तैर्विधिर्जिनोक्तो विधातुं न लप्स्यते, ततो यदि गुरोः सम्मतं भवति तदा तले उपरि च देवगृहद्वयं कार्यते। स्वसमाधानं गुरोर्निवेदितम्। ततो गुरुणा कथितम्–

जिनभवनं जिनबिम्बं जिनपूजां जिनमतं च यः कुर्यात्।
तस्य नरामरशिवसुखफलानि करपल्लवस्थानि॥ [१४]

इति देशनया ज्ञातं गुरोर[प्य]भिप्रेतमेव। लोके च प्रवृत्ता वार्ता–एते देवगृहे कारयिष्यन्ति[१]। प्रह्लादनवृहत्तरेण बहुदाकेनाऽपि कथितम्–एते कापालिका देवगृहे[२] कारयिष्यन्ति, राजमान्या भविष्यन्ति। इदं च श्रुतं गुरुणा। ततो बहिर्भूमौ गच्छतः श्रीजिनवल्लभगणेः सोऽपि मिलितस्तथा भणितः–'भद्र! गर्वो न विधेयः। एतेषां मध्यात् कश्चिद्राजमान्योऽपि भविष्यति, यस्त्वां बद्धमुच्छोटयिष्यति'। ततः श्रावकैः सोत्साहैर्मिलित्वा देवगृहे[३] कारयितुमारब्धे। देवगुरुप्रसादेन प्रमाणीभूते। उपरि श्रीपार्श्वनाथबिम्बं तले च महावीरबिम्बं कारितम्। विस्तरेण प्रतिष्ठा जाता। विधिना श्रीजिनवल्लभगणिभिः कृता। सर्वत्र प्रसिद्धिर्जातैत एव गुरवः[४]।

१७. अन्यदा ब्राह्मणः कश्चिज्ज्योतिष्किकः पण्डितमानी [५]श्रीजिनवल्लभगणिसमीपे समागतो लोकमध्ये श्लाघां क्व (श्रु?) त्वैवंविधा धर्मशास्त्रविदः, श्वेतपटाः समाजग्मुः। श्रावकैः पट्ट आसनं दत्तम्[५]। गुरुणा[६] पृष्टः–'कुत्र भवतो वासः' 'अत्रैव'। पश्चाद्गुरुभिर्भाषितः[६]–'कस्मिन् शास्त्रे विशेषेणाभ्यासोऽस्ति?'। 'ज्योतिष्के'। 'चन्द्रादित्यलग्नं सम्यग्वेत्सि?' 'सम्यगेव, किमत्रैवागणित एकं द्वे त्रीणि च लग्नानि भणामि।' जिनवल्लभगणिना ज्ञातम्–'गर्वेणाऽऽगतः।' गुरुणोक्तम्–'भद्रं परिज्ञानम्।' स ब्राह्मणः पृच्छति–'[७]युष्माकमपि परिज्ञानं विद्यते, लग्नविषये भविष्यति किञ्चित्तर्हि कथयन्तु भगवन्तः'[७]। 'कति कथयामि दश विंशतिर्वा लग्नानि?'। तस्यातीवाश्चर्यमभूत्। पश्चाच्छ्रीजिनवल्लभगणिना भणितम्–'भो विप्र! गगने हस्तद्वयमाना डम्बरिका दृश्यते सा कियन्मात्रं पानीयं करिष्यति?'। [विप्रोऽज्ञानात् शून्यदृष्टिर्दिशोऽवलोकयति। ततो भणितं गुरुणा–'भो विप्र! भाजनद्वयं यावत्'] पश्चादत्रैवोपविष्टस्य क्षणमात्रेणैव तया डम्बरिकया सकलं गगनमाच्छाद्य [८]वृष्टिः कर्तुमारब्धा, तावद्वृष्टिर्जज्ञे यावद्भाजनद्वयमपि परिपूर्णीभूतम्। ततो विप्रो मस्तके हस्तौ योजयित्वा सुगुरोः पादयोः पतित्वा भणितवान्–'यावत्तिष्ठाम्यत्र तावद्भगवतां पादान् वन्दित्वा निश्चयेन[९] भोजनं विधास्यामि। न मयाऽज्ञायि भगवन्त एवंविधाः'। पश्चात् सर्वत्रैव प्रसिद्धिर्जाता ज्ञानिन एव श्वेतपटा भवन्तीति।

१८. अन्यदा कदाचिन्मुनिचन्द्राचार्येण शिष्यद्वयं सिद्धान्तवाचनानिमित्तं श्रीजिनवल्लभगणिपार्श्वे प्रेषितम्। गणिरपि तयोर्वाचनां दातुं प्रवृत्तः। तावप्यशुभौ चिन्तयतो जिनवल्लभगणेः श्राद्धान् विप्रतारयाव इति बुद्ध्या रञ्जयन्तः श्रावकान्। कदाचित् स्वगुरुपार्श्वे प्रेषितुं लेखोऽलेखि। तं च वाचनाकर्पलिकायां प्रक्षिप्य वाचनां ग्रहीतुं गतौ तौ वसतौ। गणिसमीपे वन्दनं दत्त्वोपविष्टौ तत्र। उच्छोटिता कर्पलिका। ततो नूतनो लेखो दृष्ट्वा गृहीतः, उच्छोटितश्च। तावपि हस्ताद् गृहीतुं न शक्नुतः। अवधारितो लेखः। तत्रालेखि–'जिनवल्लभगणेः केचिच्छ्राद्धाः स्ववशे नीताः सन्ति, क्रमेण सर्वे (सर्वान्?) वशीकरिष्याव इति मनोवृत्तिरस्ति'। ततः श्रीजिनवल्लभगणिना द्विधा विधायाऽर्पयाऽभाणि–

१–१ एतदङ्कद्वयमध्यगतः पाठो नास्ति म०। २ चैत्ये। ३ चैत्ये। ४ जिनवल्लभेन कृता इत्येव म०। ५–५ गुरुपार्श्वे आगतः। आसनं दत्तं श्राद्धैः–इत्येव म०। ६–६ 'गुरुणा भाषितः' इत्येव म०। ७–७ युष्माकं परिज्ञानमस्ति। किंचित्। कथयन्तु भवन्तः–इति म०। ८ ततो गुरुणोक्तम्। ९ जलं। १० म०–वृष्टिः कृता भाजनः। ११ नियोज्य। १२ भवतां। १३ नास्ति। १४ करिष्ये। १५ 'ज्ञानिनः श्वेतपटा इति लोके प्रसिद्धिर्जातेति।' इत्येव। १६ श्राद्धान्। १७ अन्यदा। १८ 'कपिलिका' मूलादर्शे। १९ 'नूतनं लेखं' म०।

आसीज्जनः कृतघ्नः क्रियमाणघ्नस्तु साम्प्रतं जातः।
इति मे मनसि वितर्को भविता लोकः कथं भविता॥ [१५]

अहो ! सुतं वाचनया भवतोरेवंविधाशुभभावेन। पश्चाद्विमुखौ गतौ स्वस्थानं पुनर्न दृष्टौ तदैव गतौ।

१९. कदाचिज्जिनवल्लभगणेर्बहिर्भूमौ गच्छतो विचक्षणः कश्चित् प्रसिद्धिं ज्ञात्वा पाण्डित्यस्य मिलितः। समस्यापदं प्रक्षिप्तं कस्यापि राज्ञो वर्णनामाश्रित्य

'कुरङ्गः किं भृङ्गो मरकतमणिः किं किमशनिः'

पश्चान्मनाक् परिभाव्य पूरिता समस्या, तदैव कथिता तस्य पुरः-

चिरं चित्तोद्याने वससि च मुखाब्जं पिबसि च,
क्षणादेणाक्षीणां विषयविषमोहं हरसि च।
नृप ! त्वं मानाद्रिं दलयसि च क्षितौ कौतुककरः,
कुरङ्गः किं भृङ्गो मरकतमणिः किं किमशनिः ? ॥ [१६]

इति श्रुत्वाऽतीव तुष्टः। कथितवान्-सत्या लोके प्रसिद्धिः, अस्मिन्विषये, गुणस्तुतिं कृत्वा पादयोः पतित्वा गतः। पश्चात् सुगुरुर्वसतौ समागतः। ततः श्रावकैः पृष्टः सुगुरुः-'वड्डी वेला लग्गा सुगुरोः, किं कारणम् ?' पश्चात् सहगतेन शिष्येण सर्वा वार्ता कथिता। प्रमोदो जातोऽतीव श्रावकाणाम्[†]।

२०. तथा गणदेवश्रावकैः स्वर्णार्थी जिनवल्लभगणिपार्श्वे सुवर्णसिद्धिरस्तीति श्रुत्वा तस्य समीपे चित्रकूटे गत्वा पर्युपासनां कर्तुमारब्धा। लक्षितो भावो गणिना। ततो योग्यं ज्ञात्वा तथा तथा तस्य देशना कृता यथा संविग्नभावो जातः। पश्चाद् भणति गणिः-'भद्र ! सुवर्णसिद्धिं कथयामि ?'। 'भगवन् ! सृतम्, विंशतिद्रम्मनीव्या व्यवहारं कुर्वन् श्राद्धधर्मं करिष्यामि'। भव्यानां धर्मकथने लब्धिरस्ति तस्य। ततः शिक्षयित्वा धर्मं प्रेषितो वागडदेशे। ततो लिखितकुलकलेखैः सर्वोऽपि लोको जिनवल्लभगणिधर्मेऽभिमुखीकृतस्तेन।

२१. श्रीजिनवल्लभगणेर्व्याख्याने सर्वे विचक्षणजना उपविशन्ति; विशेषतो ब्राह्मणाः स्वस्वविद्यानिःसन्देहार्थम्। कदाचिदियं गाथा व्याख्याने समागता-'धिज्जाईण गिहीणं' इत्यादि-धिग्जातीया ब्राह्मणाः-इति व्याख्यानं श्रुत्वा रुष्टा विप्रा बहिर्निर्गताः, कुपिता एकत्र मिलिताः, विपक्षाश्च निकटीभूताः। 'एतैः सह विवादं विधाय निष्प्रभीकरिष्यामः'। किं तेषां स्वरूपं ज्ञात्वा श्रीजिनवल्लभगणेर्हृदि तेभ्यो भयं समजनि ?, न मनागपि। तस्य तीर्थकरसदृक्षत्वात्। ततश्च

मर्यादाभङ्गभीतेरमृतमयतया धैर्यगाम्भीर्ययोगान्
न क्षुभ्यन्त्येव तावन्नियमितसलिलाः सर्वदैते समुद्राः।
आहो क्षोभं व्रजेयुः क्वचिदपि समये दैवयोगात्तदानीं
न क्षोणी नाद्रिचक्रं न च रवि-शशिनो सर्वमेकार्णवं स्यात्॥ [१७]

इदं वृत्तं भूर्जखण्डे लिखित्वा विवेकिजनहस्ते दत्त्वा प्रेषितम्, भणितश्च संमिलितानां मध्ये वृद्धब्राह्मणहस्ते दातव्यम्। तेन तथैव कृतम्। तेनाचिन्ति विवेकबुद्ध्या-वयमेकैकविद्याधारिणस्ते च सर्वविद्यानिधानम्, कथं तैः सह विवादं कर्तुं शक्यते। तेन सर्वे विप्राः सम्बोध्योपशमं नीताः।

---

१ 'वाचनया सत्तं' इत्येव प्र०। † एतत् समग्रं प्रकरणं नोपलभ्यते प्र०। २ श्राद्धः। ३ हेमसिद्धिं श्रुत्वा। ४ नास्ति प्र०। ५ गुरुसेवा मारब्धा। ६ गणिभिरुक्तम्। ७ हेमसिद्धिं। ८ कथनेन। ९ जनो।

२२. अन्यदा धारानगर्यां श्रीनरवर्मराज्ञो राजमान्यां पण्डितसभां श्रुत्वा दक्षिणदिग्विभागात् पण्डितद्वयं कौतुकेन पाण्डित्यस्य दर्शनार्थमाजगाम । आगत्य पण्डितसभामध्ये 'कण्ठे कुठारः कमठे ठकारः'इत्येकपदानुसारिणाऽन्य-पदत्रयेण पूरयन्तु समस्यां भवन्तः । प्रत्येकं पूरिता, परं न तयोस्तां दृष्ट्वा मनो मुमुदे । केनापि राज्ञः पुरो भणितम्–'देव ! न पण्डितपूरिताः समस्याः प्रतिभान्त्यनयोः ।' देवेनाभाणि–'अस्ति कश्चिदुपायो येनानयोर्मनो रज्यते ?' केनापि विवेकिना पुरुषेणोक्तम्–'देव ! चित्रकूटे श्वेतपटो जिनवल्लभगणिः सर्वविद्यानिधानमाकर्ण्यते ।' राज्ञा तदैवो-ष्ट्रद्वयं शीघ्रगतिं सपुरुषं सलेखं प्रेषितम्–'इयं समस्या पूरिता मनोहारिणी सती स्वगुरोः पार्श्वात् समागच्छन्ती शीघ्रं भोः साधारण ! तथा कार्यम्' । प्रतिक्रमणवेलायां सन्ध्यासमये प्राप्तं स्वरूपं साधारणेन । गुरोर्दर्शितं स्वरूपम् । प्रति-क्रमणं कृत्वा पूरिता, लेखिता च–

रे रे नृपाः ! श्रीनरवर्मभूपप्रसादनाय क्रियतां नताङ्गैः ।
कण्ठे कुठारः कमठे ठकारश्चक्रे यदश्वोऽग्रखुराग्रघातैः ॥ [१८]

आगन्तुकपुरुषद्वयं रात्रावपि मुत्कलितं शीघ्रं प्राप्तम् । तया समस्यया रञ्जितं तयोर्मनः, भणितं ताभ्याम्–'अस्यां सभायां नास्तीदृशो विद्वान्, येनेयं पूरिता; किं तर्ह्यन्यः कश्चित् ।' वस्त्रादिदानेन पूजयित्वा मुत्कलितौ ।

२३. श्रीजिनवल्लभगणिरपि कतिचिद्दिनैर्विहृतो धारायाम् । केनाप्युक्तं राज्ञः पुरो–'देव ! सोऽपि श्वेतपटो सम-स्यापूरक आगतोऽस्ति ।' राज्ञोक्तम्–'शीघ्रमाकारय तम्' । तमाकारितः । राज्ञा तुष्टेनोक्तम्–'भो जिनवल्लभगणे ! पारु-त्थलक्षत्रयं ग्रामत्रयं वा गृहाण' । भणितं गणिभिः–'भोः महाराज ! वयं व्रतिनोऽर्थादिसङ्ग्रहं न कुर्मः । चित्रकूटे देवगृ-हद्वयं श्रावकैः कारितमस्ति, तत्र पूजार्थं स्वमण्डपिकादानात् पारुत्थद्वयं प्रतिदिनं दापय' । ततो राजा तुष्टः–अहो निर्लो-भता एतस्य महात्मनः श्रीजिनवल्लभगणेरिति चिन्तितवान् । चित्रकूटमण्डपिकातस्तत् शाश्वतदानं भविष्यतीति कृतम् । श्रीजिनवल्लभगणेर्धार्मिकत्वेन सर्वत्र प्रसिद्धिर्जज्ञे* ।

२४. श्रीनागपुरे श्रावकैर्नेमिनाथदेवगृहं नेमिनाथबिम्बं च कारितमस्ति नूतनम् । तेषामेषोऽभिप्रायो जज्ञे–'वयं श्री-जिनवल्लभगणिं गुरुत्वेनाङ्गीकृत्य तस्य हस्तेनोभयोः प्रतिष्ठां कारयिष्यामः'–इति चिन्तयित्वा सर्वसम्मतेन प्रतिपत्त्या श्रावकैराकारितः श्रीजिनवल्लभगणिः । ततः शुभलग्नेन देवगृहं नेमिनाथबिम्बं च प्रतिष्ठितम् । तत्प्रभावाल्लक्षपतयः श्रावका जज्ञिरे । नेमिनाथबिम्बे रत्नमयान्याभरणानि कारितवन्तः । [एवमनेके श्राद्धाः प्रतिबोधितास्तत्र, प्र०] तथा नरवरश्रावकाणां तथाऽभिप्रायो जज्ञे–'वयमपि जिनवल्लभगणिं कक्षीकृत्य गुरुत्वेन प्रतिष्ठां देवगृहे च बिम्बे च कार-यामः'–इति पर्यालोच्य कृतं तथैव । उभयोरपि देवगृहयो रात्रौ बलिधरण–स्त्रीप्रवेश–लकुटादिदानं निषेधादिको विधि-र्लिखितो मुक्तिसाधकः । ततो मरुकोट्टश्रावकैः श्रीजिनवल्लभगणयो विहारक्रमेण समाहूतास्ततो विक्रमपुरमध्येन मरुकोट्टे विहृताः । तत्र श्राद्धैः श्रद्धावद्भिर्वसतिर्गुप्तिस्थानयुक्ता दत्ता । स्थितास्तत्र । श्रावकैरभाणि–'भगवन् ! युष्मद्व-दनारविन्दाज्जिनवचनरसमास्वादितुमिच्छामः' । 'युक्तमेतच्छ्रावकाणाम्, तदुपदेशमाला कथयितुमारभ्यते' । तैरभाणि –'पूर्वमेव श्रुता । तथाऽपि पुनरपि भणितव्या'–अभयदिने भणितुमारब्धा । 'संवच्छरमुसभजिणो'-इत्यादिगाथाया एक-स्या भणने षण्मासावधिः कालो लग्नस्तथाऽपि श्रावकाणां नानासिद्धान्तोदाहरणामृतेन तृप्तिर्न जाता । वदन्ति–'भगवन् ! तीर्थकरा एवंतरसुत्पादयितुं समर्थाः,वचनामृतेन भगवन्तोऽप्येवंविधातुं समर्थाः-इत्याश्चर्यतुष्टाः श्रावकाः देशनया ।

२५. अन्यदा कदाचिद् व्याख्यानं कृत्वा श्राद्धैः सह वसतौ समाजगाम । तस्मिन्नेव प्रस्तावे एकः पुरुषोऽश्वारूढः

---

* एतत् प्रकरणं नास्ति प्र० । १ °गृहं बिम्बं । २ जाताः श्राद्धाः । ३ नेमिबिम्बे । ४–४ एतदङ्किता पंक्तिर्नास्ति प्र० । ५–५ एतत् समग्रप्रकरणस्थाने प्र० 'ततो मरुकोट्टे विहृतास्तत्र श्राद्धैः सह वसतौ जगाम'–इत्येव पाठः ।

स्त्रीभिर्गीयमानो बहुपरिवारो गच्छन् परिणेतुं दृष्टः। श्रीजिनवल्लभगणिना भणितम्–'एता एव स्त्रियो रोदनं कुर्वन्त्यो व्याघुटिष्यन्ति'–इति परिभाव्यम्। पश्चाद्‌वासत्र। तेषां मध्यात् परिणेता निःश्रेण्यामारुह्य चटितुमारब्धः। आरोहतः पादस्खलितः, पतितस्तथा यथाऽसौ पतन् घरट्टोपरि पतितः, उदरं द्विधा जातम्, मृतश्च। ता अपि तथाभूता आगच्छन्त्यो दृष्टाः सर्वैरपि। अहो! परिज्ञानं गुरूणाम्। पश्चाच्छ्रावकाणां धर्मपरिणाममुत्पाद्य पुनर्नागपुरे निर्हृताः श्रीजिनवल्लभगणयः।

२६. तस्मिन् प्रस्तावे देवभद्राचार्या विहारक्रमं विदधाना अणहिल्लपत्तने समायाताः। तत्रागतैश्चिन्तितम्–'प्रसन्नचन्द्राचार्येण पर्यन्तसमये भणितं ममाग्रे "भवता श्रीजिनवल्लभगणिः श्रीमदभयदेवसूरिपट्टे निवेशनीयः"। स च प्रस्तावोऽद्य'। ततः श्रीनागपुरे श्रीजिनवल्लभगणेर्विस्तरेण लेखः प्रेषितः–'त्वया शीघ्रं समुदायेन सह चित्रकूटे समागन्तव्यम्, येन वयमागत्य चिन्तितप्रयोजनं कुर्मः'। ततः समागताः श्रीजिनवल्लभगणयः सपरिवाराः। तेऽपि तथैव समागता देवभद्रसूरयः। पण्डितसोमचन्द्रोऽप्याकारितः पर नागन्तुं शक्तः। इदानीं श्रीदेवभद्रसूरिभिः श्रीमदभयदेवसूरिपट्टे श्रीजिनवल्लभगणिर्निवेशितः, सं० ११६७ आषाढ सुदि ६, चित्रकूटे वीरविधिचैत्ये। अनेके भव्यजनाः श्रीजिनवल्लभसूरीन् युगप्रधानान् युगप्रधानश्रीमदभयदेवसूरिपादभक्तान् समालोक्य मोक्षमार्गे प्रवृत्ताः। देवभद्राचार्यादयोऽपि स्वस्थाने प्राप्ताः[13]। क्रमेण ११६७ एकादशशतसप्तषष्टिसमाधिकसंवत्सरे कार्तिककृष्णद्वादश्या रजन्याश्चरमयामे दिनत्रयमनशनं विधाय मिथ्यादुष्कृतपूर्वकं नमस्कारपरावर्तनं कुर्वन्तः श्रीजिनवल्लभसूरयश्चतुर्थदेवलोकं प्राप्ताः॥

२७. पूर्वं श्रीजिनेश्वरसूरिणा श्रीधर्मदेवोपाध्यायस्य व्रतिनीभिर्गीवार्थाभिश्चतुर्मासी धवलके कृता। क्षपनकभक्तवाछिगपत्नी वाहडपुत्रसहिता व्रतिनीपार्श्वे धर्मकथा श्रोतुं समागच्छति। व्रतिन्यर्थे विशेषेण धर्मं कथयन्ति। ताश्च पुरुषलक्षणं शुभाशुभं विदन्ति। तस्याः पुत्रस्य प्रधानलक्षणानि पश्यन्ति। तल्लाभनिमित्तं वद्धाक्षिपन्ति तन्मातरम्। किंबहुना तथा भक्ता कृता यथा शिष्यत्वेन पुत्रं दास्यतीति। चतुर्मासानन्तरं धर्मदेवोपाध्यायस्य स्वरूपं दत्तम्–'पात्रमेकं प्राप्तमस्ति यदि युष्माकं प्रतिभास्यति'। ततः शीघ्रं सुशकुनेन समागताः। दृष्टश्च यथोक्त एव। ततः शुभलग्ने एकादशशतैकचत्वारिंशत्संवत्सरे (सं० ११४१) सोमचन्द्रनामा विनेयो विहितः–'सर्वदेवगणे! त्वया प्रतिपाल्यः, सर्वं बहिर्भूमिनयनादिकार्यमस्य कार्यम्'। एकादशशतद्वात्रिंशत्संवत्सरे (सं० ११३२) जन्माऽस्य। स्वयमेव मातृकादिपाठोऽपाठि। अशोकचन्द्राचार्येणोत्थापना कृता। प्रथमव्रतदिवसे बहिर्भूमौ नीतः सर्वदेवगणिना सोमचन्द्रमुनिः। शिशुत्वादज्ञानत्वाद्गुरुतचणकक्षेत्राण्यामूलात् त्रोटितानि। शिक्षानिमित्तं रजोहरणं मुखवस्त्रिका च गृहीता–'स्वगृहे गच्छ! व्रते गृहीते न त्रोटयन्ते क्षेत्राणि'–"युक्तं गणिना कृतं, पर सा मम मस्तके चोटिकाऽऽसीत् ता तु दापय, येन गच्छामी'ति भणिते गणेराश्चर्यमभूत्–'अहो! असोचर नास्ति'। एषा वार्ता धर्मदेवोपाध्यायस्याग्रे जने। गुरुभिश्चिन्तितम्–भविष्यति योग्य एषः।

२८. सर्वत्र पत्तने परिभ्राम्य परिभ्राम्य लक्षणपञ्जिकादिशास्त्राणि भणितुमारेभे सोमचन्द्रः। एकदा पञ्जिकाभणनार्थं भांवडायरियसमीपे गच्छन्तं दृष्ट्वा केनाप्युद्धतेन भणितम्–'अहो सितपट! कपलिकाग्रहणं किमर्थम्?'–'त्व-

१ श्रीजिनवल्लभेनोक्तम्। २ ह्म। ३–३ पादस्खलित, पतित, पतन्। ४ तथैवा०। ५ एव आह्वाना। ६ नागपुरे गता। ७ प्र० 'अनहिलपत्तन माप्ता'। ८ ममाग्रे उक्तमासीत्। जिनवल्लभोऽभयदेवपदे स्थाप्य। ९ नास्ति प्र०। १० चिन्तित कार्यं। ११ 'तेऽप्यागता' इत्येव। १२ शकित। १३–१३ एतदन्तर्गतपाठस्थाने प्र० 'जिनवल्लभोऽभयदेवपदे स्थापित। युगप्रधानान् श्रीअभयदेवसूरिपादभक्तान् जिनवल्लभसूरीन् दृष्ट्वा सर्वे हृष्टा। आचार्या सर्वे स्वस्थान प्राप्ता'। १४ नास्ति पदमिदं प्र०। १५ ततो। १६ सर्वदेवगणे पालनाय दत्त। १७ नास्ति वाक्यमेतत् प्र०। १८ "गच्छेत्युक्ते शिष्येणोक्तम्' इत्येव प्र०। १९ गुरुणा। २० प्र० 'वीरायरिय॰'। २१ उक्त।

दीयमुखचूरणार्थमात्ममुखमण्डनार्थं च'। पश्चाद्गतः स न किमपि वक्तुं शक्तः। भणनस्थाने गतः। तत्रानेकेऽधिकारिपुत्रा भणन्ति पञ्जिकाम्। सा च धर्मशाला। तत्र सोमचन्द्रोऽपि भणति। अन्यदा कदाचित्तेनाचार्येण परीक्षार्थं पृष्टः–'भो सोमचन्द्र! नवकारो यथार्थं नाम?' पश्चादभाणि सोमचन्द्रेण–'मैवमाचार्या भणन्तु, किं तर्हि? नवकरणं नवकार एवं व्युत्पत्तिः कार्या'। आचार्येण ज्ञातं वक्तुं न शक्यतेऽनेन सह। सदुत्तर एषः।

अन्यदा लोचदिने न गन्तुं शकितो व्याख्याने। व्याख्यानव्यवस्थेदृशी–यद्येकोऽपि छात्रो नागच्छति तदा व्याख्यानं न भाणयत्याचार्यः। ते अधिकारिपुत्रा गर्विष्ठा भणन्ति–'तस्य स्थाने पाषाणो धृतः' भाणयन्त्वाचार्या व्याख्यानम्। तदनुरोधेन भाणितम्। द्वितीयदिने त्वागतः सोमचन्द्रो भणितवान्–'युक्तं कृतं यन्मम स्थाने पाषाणो धृतः। परं यावती पञ्जिका भाणिता तावतीं मां पृच्छन्तु, एतानपि; याथातथ्यां यो भणिष्यति, स न पाषाणोऽन्यः पाषाण एव'। 'भोः सोमचन्द्र! त्वां कस्तूरिकां जानाम्येव परमेतैर्मूर्खैः प्रेरितो व्याख्याने, क्षन्तव्यं भवता।'

२९. हरिसिंहाचार्येण सर्वा सिद्धान्तवाचना दत्ता पण्डितसोमचन्द्राय। तथा मन्त्रपुस्तिका कपलिका च दत्ता यया सिद्धान्तवाचना गृहीता, भगवता तुष्टेन। तथा देवभद्राचार्येण कटाक्षरणं दत्तं येन महावीरचरितादि चत्वारि कथाशास्त्राणि पञ्जिकायां लिखितानि तुष्टेन। पण्डितसोमचन्द्रगणिर्ग्रामानुग्रामं ज्ञानी ध्यानी मनोहारी सन् विहरति यतिक्रमेण श्रावकाणामतीवाह्लादकारी[12]।

३०. एवं सोमचन्द्रे पण्डिते विहारं कुर्वति सति श्रीदेवभद्रसूरिभिः[14] श्रीजिनवल्लभसूरीणां[15] देवलोकगमनमश्रावि। अतीव[16] सन्ताप उत्पन्नः। अहो सुगुरूणां पदमुद्योतितमासीत् परं विघटितम्। पश्चात् देवभद्राचार्याणामीदृशं चित्तमुदपादि–यदि श्रीजिनवल्लभसूरेर्युगप्रधानपदं योग्यस्थानेन नोद्ध्रियते तदा का भक्तिः कृता भवति। पश्चाच्चिन्तयत्याचार्योऽस्मिन् गच्छे कस्तत्पदयोग्यः। चिन्तयतश्चित्ते पण्डितसोमचन्द्रो लग्नः–एष एव योग्यः, श्रावकाणामानन्दकारी ज्ञानध्यानक्रियापरत्वात्। पश्चात् सर्वसम्मतेन पण्डितसोमचन्द्रस्य लेखो दत्तः–त्वया चित्रकूटे समागन्तव्यम्, येन श्रीजिनवल्लभसूरीणां पदे निवेशयामि त्वाम्। तेषामपि सम्मतमेतत् †श्रीजिनवल्लभसूरीणाम्। यतः पूर्वमेवाकारित आसीत्। अनेके तत्पदे स्थातुमभ्युद्यता आसन्। किं बहुना सोमचन्द्रपण्डितो देवभद्राचार्या अपि समाजग्मुः। सर्वोऽपि लोको वेत्ति सामान्येन श्रीजिनवल्लभसूरिपदे सूरिस्थापनं भविष्यतीति†। श्रीचित्रकूटे श्रीजिनवल्लभसूरिप्रतिष्ठिते श्रीमहावीरचैत्ये श्रीसाधारणसाधुना श्राद्धेन पूजिते श्रीमहावीरसंघे–त्वामहं श्रीजिनवल्लभसूरिपदे स्थापयिष्यामि–अर्वागेव दिने पण्डितसोमचन्द्रं भणितवान् श्रीदेवभद्रसूरिरेकान्ते–'अस्मिन् दिने परिभावितमस्ति लग्नम्'। 'युक्तमेतत्, परं यद्यस्मिन् लग्ने स्थापयिष्यथ तदा न चिराय जीवितं भविष्यति। यदि तु षण्णां दिनानामुपरि शनैश्चरवारे यल्लग्नं भविष्यति तत्रोपविष्टानामस्माकं चतुर्दिक्षु विहरतां चैतुर्विधश्रीश्रमणसंघः श्रीजिनवल्लभसूरिवचने प्रभूतो भविष्यति'। श्रीदेवभद्रसूरिभिरभाणि–'तल्लग्नं न दूरे, तत्रैव भवतु'। ततस्तस्मिन्नेव दिने[24]–११६९ वैशाख सुदि १–चित्रकूटे श्रीजिनवल्लभसूरिपदे विस्तरेण संस्थापिताः श्रीजिनदत्तसूरिनामानः। सन्ध्यासमयं यावल्लग्नवेला, ततो वादित्रैर्वाद्यमानैः समागता वसतौ। प्रतिक्रमणानन्तरं वन्दनकं दत्त्वा श्रीदेवभद्रसूरिभिर्भणितम्–'देशनां कुरुत'। तथा देशना सिद्धान्तोदाहरणैः सुधा-

---

१ नास्ति म०। २ शकितः। ३ पृष्टः सोमचन्द्रः। ४ इति। ५ नायाति। ६ भणत्या०। ७ व्याख्यानं। ८ द्वितीयेऽह्नि। ९–९ किं करोम्याचार्येणोक्तमेतैर्मूर्खैः प्रेरितः। १०.हरिचन्द्राचा०। ११–११ एतदङ्काङ्किता पंक्तिर्नास्ति म०। १२ ज्ञानी ध्यानी श्राद्धानामतीवाह्लादकारी विहरति। १३ एवं विहरति। १४ °सूरिणा। १५ °सूरेः। १६ 'अतीव' नास्ति। १७–१७ 'ततो गच्छे आचार्येणोपयोगो दत्तः।' सोमचन्द्रो लग्नः, जनानन्दकारी'। १८ लेखः प्रेषितः सोमचन्द्राय। †–† एतदङ्किता पंक्तिर्नास्ति म०। १९–१९ श्रीजिनवल्लभसूरिप्रतिष्ठिते श्रीवीरचैत्ये सूरिपदे स्थापयामि। २० यदि। २१ शनिवारे। २२–२२ 'चतुर्विधः संघः प्रभूतो'। २३ आचार्येणोक्तं तत्र भवतु। २४ दिने सूरिपदे। २५ श्रीआचार्येणोक्तं।

सद्वेशः कृता यथा सर्वाऽभयाप्रजा रञ्जिता सती भणति–'धन्या देवभद्राचार्या यैरिदं सुपात्रं पात्राणां पदे निवेशितम्।' यच्छ्रीजिनवल्लभसूरिभिरुक्तमस्मत्पदे सोमचन्द्रगणिर्भवद्भिः स्थापनीय इति तत्सफलीकृतम्। विज्ञप्तं च देवभद्राचार्यैः–'कतिचिद्दिनानि पत्तनादन्यत्र विहर्तव्यम्'। 'एवं करिष्यामः'।

३१. अन्यदा जिनशेखरेण व्रतविषयेऽयुक्तं कृतं किञ्चित्, ततो देवभद्राचार्येण निस्सारितः। ततो यत्र भूमौ बहिर्गम्यते तत्र गत्वा स्थितः। यदा श्रीजिनदत्तसूरयो बहिर्भूमौ गतास्तदा पादयोः पतितो भणितवान्–'मदीयोऽन्यायः क्षन्तव्यो वारमेकं न पुनः करिष्यामि'। कृपोदधयः श्रीजिनदत्तसूरयः। प्रवेशितः। पश्चादाचार्यैर्भणितम्–'न सुखावहो भवतां भविष्यति'। सूरिभिरभाणि–'श्रीजिनवल्लभसूरिपृष्ठे लग्नो यावदनुवर्तयितुं शक्यते तावदनुवर्त्यते। पश्चादाचार्यादयः स्वस्थाने गताः।

३२. ततः श्रीजिनदत्तसूरीणां विहारक्रमः। क्व क्रियते?–देवगुरुस्मरणार्थमुपवासत्रयमकारि। ततो देवलोकाच्छ्रीहरिसिंहाचार्य आगतः। 'किमिति स्मरणा कृता?' 'कुत्र विहरामीति।' मरुस्थलीप्रभृतिषु देशेषु विहरेत्युपदेशो जातः। तत्रैव स्थितवतां मेहर-मोसर-वासल-भरतादयः श्रावकास्तत्र व्यवहारे समागताः। तत्र श्रीजिनदत्तसूरिगुरु दृष्ट्वा वचनं च श्रुत्वाऽतीव मुमुदिरे। ते गुरुत्वेन प्रतिपन्नाः। भरतस्तत्रैव स्थितो वाचकत्वेन। अन्ये स्वस्थाने गत्वा कुटुम्बेषु गुरुवर्णनं कुर्वन्ति। तत्रापि किञ्चित् प्रवेशो जातः। ततो नागपुरे विहृताः। तत्र धनदेवः श्रावकः प्रतिपत्तिं करोति, भणति च–'यदि मदीयवचनं करोषि तदा सर्वेषां पूज्यो भवसि।' पश्चाद् भणितं श्रीजिनदत्तसूरिभिः–'भो धनदेव! सिद्धान्ते श्राद्धेन गुरुवचनं विधेयं न तु श्राद्धवचनं गुरुणेति भणितम्। न च वक्तव्यं परिवाराभावात् पूजा न भविष्यति। यत उक्तम्–

> मैवं मंस्था बहुपरिकरो जनो जगति पूज्यतां याति।
> येन घनतनययुक्ताऽपि शूकरी गूथमश्नाति॥ [१९]

पश्चाच्च भावितं धनदेवस्य। यद्यपि न भावितं तस्य तथापि गुरुणा युक्तमेव वक्तव्यं (उक्तमिति) केषांचिद्विवेकिनां भावितम्। ततोऽजयमेरौ विहृताः। तत्र ठ० आसधर सा० रासलप्रभृतिश्रावकाः सन्ति। ते चाहद्देवगृहे गच्छन्ति देववन्दनार्थं श्रीजिनदत्तसूरयः। अन्यदा तत्रान्य आचार्य आगतः। स च पर्यायेण लघुः, तत्र चैत्ये गच्छतां गुरूणां व्यवहारं न करोति। ततष्ठक्कुराऽऽसधरप्रभृतिश्रावकैर्भणितम्–'किमिति गच्छतां वन्दनं यदि युक्तं न प्रवर्तते?' ततो वन्दनादिव्यवहारो निवृत्तः। ततः श्रावकैरम्बिकाऽभ्यर्थिता–'देवास्माकं श्रीजिनदत्तसूरयः स्वगुरवः समागताः सन्ति'। तयाऽभाणि–'यद्यागतास्तदा भद्रम्। कार्यं कथय'। 'देव! भूमिरस्मभ्यं दीयते, यत्र देवगृह-धर्मस्थानानि श्रावकाणां सकुटुम्बसदनानि सम्पाद्यन्ते'। पश्चादभाणि–'दक्षिणदिग्भागे यः पर्वतस्तस्मिन्नासन्ने च यथेष्टं गृह्यताम्। आसीयगुरवोऽपि दर्शनीयाः'–इदं स्वरूपं गुरुणामग्रे भणितवन्तः श्रावकाः। ततो गुरुणाऽभाणि–'आरोगपितव्यो गता य एवं स्वयमेव भणति, गुण एव समाऽऽगतस्'। आराधितो मध्यन्दिने। आगतेनैन नमस्कारः कृतः सुगुरुभ्योऽपि। आशीर्वादः

श्रिये कृतनतानन्दा विशेषवृषसंगताः। भवन्तु भवतां भूप! ब्रह्म-श्रीधर-शङ्कराः॥ [२०]

तं श्रुत्वा तुष्टो राजा। भणति[1] 'सदैवात्र तिष्ठन्तु गुरवः'। 'युक्तमुक्तम्, परं राजन्! अस्मदीया स्थितिरेषा यत् सर्वत्रैव विहारक्रमः क्रियते लोकोपकाराय। अत्रापि सदाऽऽगमिष्यामो यथा युष्माकं समाधानं भविष्यति तथा विधास्यामः।' ततः समाधानेनोत्थितो राजा। पश्चाद्ठक्कुर आसधरो भणितः [गुरुणा]—

इदमन्तरमुपकृतये प्रकृतिचला यावदस्ति सम्पदियम्।
विपदि नियतोदयायां पुनरुपकर्तुं कुतोऽवसरः॥ [२१]

इत्यादि [ततः]स्तम्भनक–शत्रुञ्जय–उज्जयन्त–कल्पनया[2] पार्श्वनाथ–ऋषभनाथ–नेमिनाथबिम्बस्थानानि परिभावनीयानि[2]। उपरि अम्बिका देउली, तले[3] च गणधरादिस्थानं चिन्तनीयम्[3]।

३३. पश्चाद्[4] वागडे विहारक्रमः कर्तुमारब्धः। सुशकुनेन विहृतास्तत्र। पूर्वमेव तत्रत्यलोकाः श्रीजिनवल्लभसूरिविषये समाधानवन्तः सन्तस्तद्देवलोकगमनमाकर्ण्य तेषां पदे ये संस्थापिता ज्ञानध्यानगुणोपेताः श्रीमहावीरवदनारविन्दनिर्गतस्यार्थतः सूत्रतश्च सुधर्मस्वामिगणधररचितसिद्धान्तवेदिनः क्रियापराः श्रीजिनदत्तनामानः सुगुरवो युगप्रधानास्तीर्थंकरकल्पास्तेऽत्र विहृताः श्रूयन्ते, तान् दृष्ट्वा सर्वेषां समाधानं समजनि[4]। ततश्च[5] ते श्रावका यद्यत् पृच्छन्ति तत्कथयन्तः केवलिन इव श्रीजिनदत्तसूरयस्तेषां समाधानमुत्पादयन्ति। ततश्च लोकाः केचन सम्यक्त्वं, केचन देशविरतिं, केचन सर्वविरतिं गृह्णन्ति तुष्टाः सन्तः[5]। व्रतिनो बहवः कृताः। व्रतिन्यश्च तस्मिन् प्रस्तावे द्विपञ्चाशत् कृताः श्रूयन्ते।

३४. तस्मिन्नेव प्रस्तावे जिनशेखरमुपाध्यायं कृत्वा कतिचित्साधुसहितो रुद्रपल्ल्यां विहारक्रमे मुत्कलितः। स च तपः करोति। स्वजनास्तत्र वसन्तीति तेषां[6] समाधानहेतोः। तथेदं[7] स्वरूपं श्रीजयदेवाचार्यैः सपरिवारैः स्वस्थानस्थितैः[7] श्रुतम्—श्रीजिनवल्लभसूरिपदे निवेशिताः श्रीजिनदत्तसूरयः सर्वगुणोपेता अत्र देशे विहृताः। भद्रं जातम्। पूर्वमेव तेषां श्रीजिनवल्लभगणेर्वसतिनिवासप्रतिपत्तिं श्रीमदभयदेवसूरिपार्श्वे कृतां श्रुत्वा वसतिनिवासाभिप्राय उत्पन्न आसीदिदानी[मत्रागताः] दृश्यन्ते सुगुरवस्ततः सपरिवारा वन्दनार्थं समाजग्मुः। वन्दिताः सविनयं श्रीजिनदत्तसूरयः। तैश्च तथा सम्भाषिताः सिद्धान्तमधुरवचनैर्यथैतेषां परिणामोऽभूद्—भवे भव एत एव गुरवोऽस्माकं भूयासुः[8]। पश्चाद् भव्यदिन उपसम्पदं गृहीतवन्तः[9]। पश्चाच्च विलोकितं सनत्कुमारचक्रवर्तिमुनिवत्। श्रीजिनप्रभाचार्या अपि केवलीपरिज्ञानेन सर्वजनप्रसिद्धाः, ते च तुरुष्कभूम्यां गता आसन्। एकेन तुरुष्केण ज्ञानिनो ज्ञात्वा पृष्टाः—'मदीये[10] हस्ते किमस्ति?' तेनापि गणयित्वा कथितम्—'बदामः, खटिकाखण्डं च वालश्च। स च वालं न जानाति। तेन दर्शितः करो। वालोऽपि खटिकायां लग्नोऽस्ति। ततस्तुष्टो हस्तं गृहीत्वा चुम्बितवान्, चङ्गा चङ्गेति कथितवान्। आचार्येण ज्ञातं दुष्टा एते भवन्ति कदाचिन्मारयिष्यन्तीति रात्रौ प्रपलाय्य स्वदेशे समागताः। तत्राऽऽगतो जयदेवाचार्यं वसतिमार्गप्रतिपत्तारं श्रीजिनदत्तसूरिपार्श्वे श्रुत्वा तस्याप्यभिप्राय उत्पन्नः। परं गाढो मार्ग एतेषाम्। केवलीपरिज्ञानेन चिन्तयति। श्रीजिनदत्तसूरिरागच्छति युगप्रधानत्वेन। पुनश्चिन्तिते तदेवाऽऽगच्छति। तृतीयवेलाचिन्तनेऽग्निपुञ्जो ग[ग]नात्पतितः, वागुत्थिता—यदि धर्मे प्रयोजनं[11] तव तदाऽमुं सुगुरुं प्रतिपद्य धर्मं कुरु। ततोऽङ्गीकृतवान् समाधानं जज्ञे[12]। तत्रैव स्थि-

१ भणितं च सदैवात्र स्थातव्यम्। २–२ कल्पनया स्थानानि कारितानि। ३–३ नास्ति प्र०। ४–४ एतदङ्कान्तर्गतपाठस्थाने–'ततो वागडे विहृतास्ते। जिनवल्लभसूरिविषये समाधानवन्तो लोका ये ज्ञानध्यानगुणोपेतास्तेषां पदे ये स्थापितास्तेषामागमनमाकर्ण्य दृष्ट्वा च देशनां च श्रुत्वा सर्वेषां समाधानमजनि' इत्येव प्र०। ५–५ नास्तीयं पंक्ति प्र०। ६ तेषां सम्बन्धिनां। ७–७ एतदङ्कितपाठस्थाने प्र० 'तथा जयदेवाचार्यैः सपरिवारैः जिनदत्तसूर्यागमनं श्रुत्वा वसतिनिवासाभिप्रायः इत.' इत्येव पाठः। ८ भवन्तु। ९ नास्ति वाक्यमिदं प्र०। १० मम करे। ११ कार्यं। १२ ततो गन्धोपसम्पद् गृहीता।

तानां श्रीजिनदत्तसूरीणामतिशयज्ञानिनां पार्श्वे विमलचन्द्रगणिर्देवगृहनिवासी सोऽप्याचार्ययोर्वसति निवासप्रतिपत्तिं श्रुत्वा वसतिमार्गमङ्गीकृतवान्। तस्मिन्नेव प्रस्तावे जिनरक्षित-शीलभद्रौ मात्रा सह प्रव्रजितौ। तथा थिरचन्द्र-वरदत्तनामानौ भ्रातरौ प्रव्रजितौ। जयदत्तनामा मुनिर्मन्त्रवादी। तस्य पूर्वजा मन्त्रशक्तियुक्ता आसन्। ते सर्वेऽपि रुष्टया देवतया विनाशिताः। एष पुनर्नष्टः श्रीजिनदत्तसूरीणां शरणागतो व्रतं गृहीतवान्। श्रीपूज्यैस्ततो रक्षितो देवतातो[3]। गुणचन्द्रगणिः सोऽपि श्रीजिनदत्तसूरिभिर्दीक्षितः। पूर्वं स श्रावकः सन् तुरुष्कैर्नीत आसीत्। हस्तदर्शनेन चङ्गो भाण्डारिको भविष्यतीति। नाशनभयात् संकलानिबद्धः। तेन च नमस्कारलक्षं गुणितम्। तत्प्रभावात् संकला स्वयमेव त्रुटिता। ततो निर्गत्य रात्रिपश्चिमप्रहरार्धे कस्याश्चिद्वृद्धाया गृहेऽवातिष्ठत्। तया च कृपया कोष्ठिकामध्ये प्रक्षिप्तस्तुरुष्कैः प्रेक्षितो न लब्धः। रात्रौ निर्गत्य स्वदेशं गतः। तेन च संवेगेन व्रतं गृहीतम्। रामचन्द्रगणिर्जीवानन्दपुत्रसहितोऽन्यगच्छाच्छुद्धं धर्मं ज्ञात्वा श्रीजिनदत्तसूरेराज्ञां प्रतिपन्नः। तथा ब्रह्मचन्द्रगणिर्व्रतं गृहीतवान्। एतेषां मध्याज्जिनरक्षित-स्थिरचन्द्रप्रभृतिसाधवः, श्रीमति-जिनमति-पूर्णश्रीप्रभृतिव्रतिन्यश्च धारायां प्रेषिता वृत्तिपञ्जिकादिलक्षणभणनार्थम्। तैश्च भणितं श्रावकसाहाय्येन। आत्मना श्रीजिनदत्तसूरयो रुद्रपल्ल्यां विहृताः। तत्र पथि गच्छतामेकस्मिन् ग्रामे श्रावक एकः प्रतिदिनं व्यन्तरेण प्रचण्डेन पीड्यते, तस्य पुण्येन श्रीजिनदत्तसूरिस्तत्रैवोत्तरितः। तेन निज्ञप्तं शरीरस्वरूपम्। परिभावितं सूरिभिर्मन्त्रतन्त्रैः साध्यः पीडाकर्तृव्यन्तरः। ततो गणधरसप्ततिकां कृत्वा, टिप्पणके लेखयित्वा, हस्ते टिप्पनकं दत्तम्, हृदयं दृष्टिश्चात्र निवेशनीया श्राद्धस्याग्रे कथितम्। तेन च तथा कृतम्। स च व्यन्तरो विस्तरेण पीडायै समागतः खट्वासीमाम्, न शरीरे संक्रान्तो गणधरसप्ततिकाप्रभावात्। द्वितीयदिने द्वारसीमां समागतस्तृतीयदिने नाऽऽगतः, श्रावकः स्वस्थो जातः, किं बहुना। रुद्रपल्ल्यां प्राप्ताः। जिनशेखरोपाध्यायाः श्रावकैः सहिताः सम्मुखाः समाजग्मुर्विस्तरेण मध्ये प्रविष्टाः। विंशत्युत्तरं शतं कुटुम्बानां तत्र श्रीजिनवचने कारितम्। पार्श्वनाथ-ऋषभचैत्यद्वयं प्रतिष्ठितम्। श्रावकैः सम्यक्त्वमङ्गीकृतं देशविरतिरङ्गीकृता। सर्वविरतिश्च देपालगणिप्रभृतिभिः श्रावकैः सद्भिः परिगृहीता। तेषां समाधानमुत्पाद्यात्र जयदेवाचार्यं प्रेषयिष्याम इति भणित्वा पुनः पश्चिमदेशे विहृताः[5]।

३५. वागडदेशे समायाताः तत्रापि व्याघ्रपुरे। श्रीजयदेवाचार्याः शिक्षां दत्त्वा श्रीरुद्रपल्ल्यां मुत्कलिताः। तत्र स्थितैश्च च च री श्रीजिनवल्लभसूरिप्ररूपितश्रीचैत्यगृहविधिस्वरूपा कृता। सा च टिप्पनके लेखयित्वा प्रेषिता.....वासलप्रभृतिश्रावकाणां ज्ञानार्थम्। विक्रमपुरे देवधरपितृसण्ढियागृहसमीपे पौषधशालाऽस्ति। तत्र श्रीजिन........श्रावकैरुपनिश्रयोच्छोटितं चर्चरीटिप्पनकम्। 'चर्चरीटिप्पनकं चर्चरीटिप्पनकं' भणित्वा मदोन्मत्तेन देवधरेण हस्तादुद्दाल्य द्विधा कृतम्। तस्य किमपि कर्तुं न शक्नुवन्ति। पितुरग्रे वार्ता कथिता। तेनोक्तम्–गाढ एषः, तथापि धारयिष्यामः। पुनरपि पूज्येभ्यो लेखो दत्तस्तत्र चर्चरीटिप्पनकस्वरूपं लिखितम्। श्रीपूज्यैर्लेखस्वरूपं परिभाव्य द्वितीयटिप्पनकं प्रेषितम्, लेखश्च प्रेषितः। इदं च लिखितम्–देवधरस्योपरि निरूपकं न भणनीयम्, देवगुरुप्रसादाद्भव्यो भविष्यति। द्वितीयटिप्पनकं प्राप्तं तेषाम्। प्रतिपत्त्योच्छोटितं वाचितं समाधानं जज्ञे। देवधरेण चिन्तितम्–यद्यपि मया स्फाटितं टिप्पनकं तथापि पुनरपि प्रेषितम्, कारणेन भवितव्यम्। किं तत्राऽऽलेखि प्रच्छन्नं परिभावयाम्येकान्ते। यदा श्राद्धाष्टिप्पनकं स्थापनाचार्यालके मुक्त्वा द्वारं स्थगयित्वा गतास्तदोपरि पाटके स्वगृहात् प्रविश्य बहिर्द्वारे स्थगितेऽपि टिप्पनकं गृहीतम्। वाचयितुं प्रवृत्तः। यथा यथाऽर्थानवधारयति तथा तथा मनस आह्लाद उत्पद्यते। अनायतनं बिम्बम्, स्त्री पूजा न

---

१ 'गुरूणा' इत्येव प्र०। २ विमलचन्द्राचार्ये चैत्यवासिभिर्वसतिवासोऽङ्गीकृत.। ३–३ एतदङ्काङ्किता पङ्क्तिर्नास्ति प्र०। ४–४ एतदङ्कितपाठस्थाने प्र० 'गुणचन्द्र सोऽपि दीक्षित। पूर्वं श्राद्ध' सन् तुरुष्कैर्नीतो हस्तदर्शनात् भव्यो भाण्डारि भविष्यति। नाशनभयात्संकल्या बद्ध.। नमस्कारलक्षं गुणितं। संकला स्वयमेव त्रुटिता। रात्रौ निर्गत्य स्वदेशे गतो गुरु दृष्ट्वा संवेगेन व्रतं गृहीतम्।' इत्येष पाठो लभ्यते। ५–५ नास्ति पंक्तिरियं प्र०। ६–६ ततो विहृताः। ७–७ एतदङ्काङ्कित प्रकरणं नास्ति प्र०।

करोतीति सन्देहद्वयं प्रष्टव्यमन्यत्सर्वं भव्यम्। पश्चाद् यत् कथयिष्यति तत् करिष्यामि। अग्रे श्रीपूज्यैर्बागडदेशे स्थितैर्ये धारायां प्रेषिता आसन् ते सर्वेऽप्यानायिताः, सिद्धान्तं श्राविताः। ततः स्वदीक्षितो जीवदेवाचार्यो मुनीन्द्रपदे निवेशितः। तथा दश वाचनाचार्याः कृताः। वा० जिनचन्द्रित (चन्द्र ?) गणिः, वा० शीलभद्रगणिः, वा० स्थिरचन्द्रगणिः, वा० ब्रह्मचन्द्रगणिः, वा० विमलचन्द्रगणिः, वा० वरदत्तगणिः, वा० भुवनचन्द्रगणिः, वा० वरणागगणिः, वा० रामचन्द्रगणिः, वा० माणिभद्रगणिरेते दश। श्रीमति–जिनमति–पूर्णश्री–जिनश्री–ज्ञानश्रियः पञ्च महत्तराः। हरिसिंहाचार्याणां शिष्यो मुनिचन्द्राभिध उपाध्याय आसीत्, तेन जिनदत्तसूरिः प्रार्थित आसीद्–यदि कश्चिन्मदीयः शिष्यो भवतां समीपे समागच्छति योग्यस्तदाऽऽचार्यपदं दातव्यमेवं प्रतिपन्नम्। तस्य शिष्यो जयसिंहनामा चित्रकूटे मुनीन्द्रपदे निवेशितः। तस्यापि शिष्यो जयचन्द्रनामा पत्तने समवसरणे मुनीन्द्रपदे स्थापितः। भणितं द्वयोरप्यग्रे–रीत्या प्रवर्तितव्यम्। तथा जीवानन्द उपाध्यायपदे निवेशितः। यथाचार्योपाध्यायवाचनाचार्यपदानां प्रत्येकं स्थानादिविशेषो भण्यते तदा विस्तरो भवति तेनैकत्रैव भणितम्। सर्वेषु पदस्थेषु शिक्षां दत्वा विहारादिस्थानानि भणित्वा स्वयमजयमेरौ विहृताः। विस्तरेण प्रवेशो जातः।

३६. ततः श्रावकैश्चैत्यगृहत्रयाम्बिकास्थानानि पर्वते प्रगुणीकारितानि। ततः श्रीजिनदत्तसूरिः शोभने लग्ने देवगृहेषु मूलनिवेशे वासान् प्रक्षिप्तवान्। ततः शिखरादिनिवेशं कारितवन्तः श्रावकाः। ततो विक्रमपुरे सण्हियापुत्रदेवधरेण स्वकुटुम्बानां पञ्चदश श्रावकसमुदायं कृत्वा स्वपितृश्रेयोऽर्थम्, आसदेवादयः श्रावका भणिताः–मयाऽत्र श्रीजिनदत्तसूरयो विहारक्रमं कारयितव्याः। तस्याग्रे कोऽपि किमपि भणितुं न शक्नोति। श्राद्धसमुदायेन निर्गतो नागपुरे प्राप्तः।

३७. तस्मिन् प्रस्तावे तत्र देवाचार्यो विशेषेण प्रसिद्धो वर्त्तते। देवधरोऽपि प्रसिद्धो विक्रमपुरादागतः श्रुतः। पश्चाद्देवगृहे व्याख्यानप्रस्तावे देवाचार्य उपविष्ट आस्ते। देवधरोऽपि पादप्रक्षालनादिशौचं कृत्वा देवगृहे गतः। आचार्यो वन्दितस्तेनापि क्षेमवार्ता पृष्टा। ततः प्रथमत एव देवधरेण पृष्टः–'भगवन्! यत्र रात्रौ देवगृहे स्त्रीप्रवेशादि प्रवर्तते तत्कीदृशं चैत्यं भण्यते ?' इति प्रश्नकृते चिन्तितं देवाचार्येण–'कथञ्चिज्जिनदत्ताचार्यमन्त्रोऽस्य कर्णे प्रविष्टोऽतस्तद्वासित इव लक्ष्यते' इति विचिन्त्योक्तम्–'श्रावक! रात्रौ स्त्रीप्रवेशादिकं संगतं न भवति'। देवधरः–'तर्हि किं न वार्यते ?' आचार्यः प्राह–'लक्षसंख्यलोकानां मध्ये को वार्यते।' देवधरः–'भगवन्! यत्र देवगृहे जिनाज्ञा न प्रवर्तते, किं तर्हि जिनाज्ञानिरपेक्षः स्वेच्छया जनो वर्तते, तज्जिनगृहं जनगृहं वा प्रोच्यत इति प्रतिपादयध्वं यूयम्'। आचार्यः–'यत्र साक्षाज्जिनोऽन्तर्निविष्टो दृश्यते तत्कथं जिनमन्दिरं नोच्यते ?'। देवधरः–'आचार्य! वयं तावन्मूर्खाः, परमेतद्वयमपि जानीमो यदुत यत्र यस्याज्ञा न प्रवर्तते तद्गृहं तदीयं नोच्यते। एवं च पाषाणरूपार्हद्बिम्बमात्रान्तर्निवेशनेन भगवदाज्ञापरिहारेण स्वेच्छया व्यवहारे कथं नाम तज्जिनमन्दिरमुच्यते। परमेवं जानाना अपि यूयं प्रवाहमार्गं न निवारयध्वे प्रत्युत पोषयध्वे, तदेते वन्दिता अनुज्ञापिताश्च मया यूयम्–यत्र तीर्थंकराज्ञा प्रवर्तते स मार्गो मयाऽभ्युपेतव्यः'–इत्यभिधायोत्थितो देवधरः। सहानीतस्वकुटुम्बस्वरूपश्रावकाणां जातं स्थिरीकरणं विधिमार्गविषये। प्राप्तः श्रावकसमुदायसहितोऽजयमेरौ। वन्दिता भावसारं श्रीजिनदत्तसूरयस्तदभिप्रायावगमपूर्वकं कृता पूज्यैर्देशना। जातोऽसौ निःसन्देहः। अभ्यर्थिताः प्रभवः श्रीविक्रमपुरविहारं प्रति। ततो विस्तरेण तत्र देवगृहबिम्बाम्बिकागणधरादिप्रतिष्ठां विधाय समागताः श्रीदेवधरेण सह विक्रमपुरे। प्रबोधितस्तत्रत्यो जनो बहुः। स्थापिता श्रीमहावीरप्रतिमा।

३८. तत्र उधायां गच्छतामन्तराये भूतादयस्तेऽपि प्रतिबोधिताः। किं पुनरुपकारीयलोकः। ततो नरहडे विहृताः। ततस्त्रिभुवनगिरौ, प्रतिबोधितस्तत्र कुमारपालो नाम राजा। कृतस्तत्र प्रचुरतरयतिजनविहारः। प्रतिष्ठितो भगवान् शान्तिनाथदेवः। तयोज्जयिन्यां विहारेण प्रतिबोधितं पूज्यैर्योगिनीचक्रम्। तथैकदा श्रीचित्रकूटप्रवेशके दुर्धरपञ्चजनाय सम्मु-

स्वीकृतो रश्मिबद्धः कृष्णभुजङ्गमः। ततो मन्दीभूतानि गीतवादित्रादीनि। श्रावका अहोऽहो न सुन्दरमिति जाताः सविषादाः। ततः प्रोक्तं ज्ञानदिवाकरैः श्रीजिनदत्तसूरिभिः—'भो किमेवं विमनस्का यूयम्? यथैष कृष्णभुजङ्गो रश्म्या बद्धः, एवमन्येऽपि ये केचनास्मद्दुष्टास्तेषां बन्धनं पतिष्यतीति प्रेरयिताऽतीव सुन्दरं शकुनमेतत्। पुनरग्रतो गच्छतां दुष्टैरेका कृत्तनासिका दुर्निमित्तविधानाय प्रेषिता। सा चाग्रतः स्थिता दृष्ट्वा पूज्यपादैर्जल्पिता च यथा 'आई! भल्ली?' ततस्तया दुष्टरण्डया दत्तं प्रतिवचो यथा 'भल्लइ घाणुकइ मुक्की'। पुनरुक्ता किञ्चिद्विहस्य सप्रतिभैः श्रीपूज्यैर्यथा—'पक्खहरा तेण तुह छिन्ना। ततः सा गयविलक्खा उत्तर निक्खुट्टी (?)'। इत्यनेकाश्चर्यनिधानानां निरन्तरं किङ्करैरिव सुरैः सर्वदोपास्यमानपादानां करुणासमुद्राणां धारापुरी-गणपद्रादिस्थानेषु प्रतिष्ठितवीरपार्श्वशान्त्यजितादितीर्थकृद्बिम्ब-देवगृह-शिखराणां स्वज्ञानबलदृष्टनिजपट्टोद्धारकारिरासलाङ्गरुहाणां भास्करवद्विबोधितभुवनमण्डलभव्याम्भोरुहाणां श्रीजिनदत्तसूरीणां चरित्रलेशः प्रतिपादितः। ततो महता विस्तरेण श्रीचित्रकूटे प्रविष्टाः। ततः श्रीजिनबिम्बप्रतिष्ठादि-महामहोत्सवाः कृताः। ततः सं० १२०३ अजयमेरौ फाल्गुन सुदी ९ जिनचन्द्रसूरिदीक्षा। सं० १२०५ वैशाखशुक्ल-षष्ठ्यां विक्रमपुरे, इतरजनदुःसाध्यध्यानतपोबलावलोकितानवद्यविद्यामन्त्रतन्त्रयन्त्रप्रभावैश्चिन्तामणिगणायमानाः—चिन्ता-मणिगणा इवाचरन्ति चिन्तामणिगणायन्ते, चिन्तामणिगणायमाना उपदेश्या येषां ते तथा तैर्देशैः—श्रीजिनदत्तसूरिभिः स्वकीयपदे सा० रासलकुलव्योममण्डलायमाननववर्षवयोमानविबुधजनमनोहारिसौभाग्यभाग्यारोग्यादिगुणगणनिधान-श्रीजिनचन्द्रसूरय उपवेशिताः। सं० १२११ आषाढ वदि ११ जिनदत्तसूरयो दिवं गताः।

३९. सं० १२१४ श्रीजिनचन्द्रसूरिभिस्त्रिभुवनगिरौ श्रीशान्तिनाथशिखरे सज्जनमनोमन्दिरे प्रमोदारोपणमिव सौवर्णदण्डकलशध्वजारोपणं महता विस्तरेण कृत्वा, हेमदेवीगणिन्याः प्रवर्तिनीपदं दत्त्वा, मथुराया यात्रां कृत्वा, सं० १२१७ फाल्गुनशुक्लदशम्यां पूर्णदेवगणि—जिनरथ—वीरभद्र—वीरजय—जगहित—जयशील—जिनभद्रैः सार्धं श्रीजिनप-तिसूरयो दीक्षिताः। सा० क्षेमन्धरः प्रतिबोधितः। वैशाखशुक्लदशम्यां मरुकोट्टे चन्द्रप्रभस्वामिविधिचैत्ये साधुगोल्लक-कारितसौवर्णदण्डकलशध्वजारोपणं कृतम्। तत्र च सा० क्षेमन्धरेण पारुत्थद्रम्मशतपञ्चकेन माला गृहीता। सं० १२१८ उच्चायां ऋषभदत्त—विनयचन्द्र—विनयशील—गुणवर्धन—वर्धमानचन्द्रसाधुपञ्चकं जगश्री—सरस्वती—गुणश्रीसाध्वी-त्रयं च दीक्षितम्। अनेन क्रमेण साधवो [विहृत]श्च कृताः। सं० १२२१ सागरपाटे सा० गयधरकारिता श्रीपार्श्वनाथ-विधिचैत्ये देवकुलिका प्रतिष्ठिता। अजयमेरौ श्रीजिनदत्तसूरिस्तूपः प्रतिष्ठितः। बब्बेरके च वा० गुणभद्रगणि—अभय-चन्द्र—यशश्चन्द्र—यशोभद्र—देवभद्रा दीक्षिताः। देवभद्रभार्याऽपि दीक्षिता। आशिकायां नागदत्तस्य वाचनाचार्यपदं दत्तम्। महावने श्रीअजितस्वामिविधिचैत्ये प्रतिष्ठा देवनागकारिता। इन्द्रपुरे शान्तिनाथविधिचैत्ये सौवर्णदण्डकलश-प्रतिष्ठा वा० गुणभद्रगणिपितामहलालेश्रावककारिता। तग(?)लाग्रामेऽजितस्वामिविधिचैत्यं प्रतिष्ठा च। कृताश्च सर्वा अपि श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः। सं० १२२२ वादलीनगरे श्रीपार्श्वनाथभवने वा० गुणभद्रगणिपितामहलालेश्रावकका-रितसौवर्णदण्ड-कलशौ प्रतिष्ठाप्याम्बिकाशिखरयोग्यं सौवर्णकलशं च प्रतिष्ठाप्य, रुद्रपल्ल्यां विहृताः। ततोऽपि परतो नरपालपुरे कश्चिज्ज्योतिःशास्त्रसम्यक्परिज्ञानाभिमानादागतं ज्योतिषिकं वृषलग्नसत्कैकोनविंशतित्रिंशांशे मृगशीर्षमुहूर्ते पट्सप्तत्यधिकवर्षशताचलस्थित्यवधिप्रदानप्रतिज्ञया श्रीपार्श्वनाथदेवगृहपुरतो रङ्गायामेकां शिलां स्थापयित्वा जितवन्तः। तच्छिलोपरितना भित्तिरद्यापि तथैव वर्तते।

४०. पुनरपि रुद्रपल्ल्यां विहृताः। तत्र चान्यदा कदाचिन्मुनिमण्डलीमण्डितपार्श्वदेशाल्लघुवयसो बहिर्भूम्यां गच्छ-तः श्रीजिनचन्द्रसूरीन् दृष्ट्वा श्रीपद्मचन्द्राचार्यो मत्सरवशात् पृच्छति स—'आचार्यमिश्राः! यूयं भद्राः स्थ?' श्रीमत्पू-ज्यैरुक्तम्—'देवगुरुप्रसादात्'। पुनरपि स प्राह 'साम्प्रतं किं किं शास्त्रं वाच्यमानमस्ति?' पार्श्वस्थेन मुनिना भणितम्—'साम्प्रतं श्रीमत्पूज्या न्यायकन्दलीं चिन्तयन्ति'। स प्राह—'आचार्यमिश्राः! तमोवादश्चिन्तितः?' श्रीपूज्यैरुक्तम्—

'चिन्तितः'। स प्राह 'हृदयेऽवगतः ?' श्रीमत्पूज्यैरुक्तम्—'अवगतः'। स प्राह 'तत्किं तमो रूपविशेषमेव ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्—'ननु भवतु स्वस्वरूपेण यादृशं तादृशं तमः, परं वादव्यवस्थया राजसभायां प्रधानसभ्यसमक्षं वादिना कदापि कीदृशं स्थाप्यते, ननु स्थापनामात्रेण वस्तु स्वस्वरूपं त्यजति'। पुनरपि स प्राह—'मा त्याक्षीत् स्थापनामात्रेण वस्तु स्वस्वरूपम्, परं परमेश्वरैस्तीर्थकरैस्तमो द्रव्यमेवोक्तम्'। श्रीपूज्यैरुक्तम्—'को नाम न मन्यते द्रव्यत्वं तमसः। परमाचार्यदर्पिष्ठ! प्रतिवादी यथा तथा जितो विमीय (?)!' तदनन्तरं कोपावेगाद्रक्तीभवन्नेत्रः कम्पमानगात्रः सन् स इदमाह—'प्रमाणरीत्या द्रव्यमेव तम इति स्थापयति सति मयि, तव योग्यताऽस्ति सम्मुखी भवितुम् ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्—'कस्याऽपि योग्यताऽस्ति, कस्याऽपि नास्तीति ज्ञास्यते राजसभायाम्। पशुप्रायाणामेवारण्यं रणभूमिः। तथाऽऽचार्य! माऽस्मान् लघुवयसो दृष्ट्वा स्वशक्तिं स्फोरय; लघुरपि सिंहः पर्वतसमानोपममतङ्गजानुत्रासयति'। एवं च विवदतां तेषां कौतुकदर्शनार्थं मिलितः सर्वोऽपि नागरिको लोकः। उभयभक्तश्रावकाश्च निजनिजाचार्यपक्षपातेन परामहङ्कारकोटिमारूढाः। किम्बहुना राजलोकसमक्षं व्यवस्थापत्रे लिखिते सति सावष्टम्भेषु च श्रीजिनचन्द्रसूरिषु सत्सु, वादवार्तयाऽपि भग्नं श्रीपद्मचन्द्राचार्यं दृष्ट्वा सर्वलोकसमक्षं राजलोकैर्दत्तं जयपत्रं श्रीजिनचन्द्रसूरीणाम्। जयकारश्चक्रे। लोके महती प्रभावना संजाता जिनशासने। महानन्दभरनिर्भरैश्च श्रावकैर्बृहद्वर्धापनकं कारितम्। तदनन्तरं श्रीपूज्यभक्तश्रावका 'जयतिहट्ट' इति नाम्ना प्रसिद्धिं गताः। पद्मचन्द्राचार्यभक्ताश्च श्रावकाः सर्वैरपि लोकैस्तर्क्यमाना हसमानाः 'तर्कहट्ट'इति नाम्ना प्रसिद्धिं गताः। अनया रीत्या कानिचिद्दिनानि स्थित्वा, सिद्धान्तोक्तविधिना सुसार्थेन सह ततः प्रचलिताः।

४१. मार्गे च चौरसिंदानकग्रामसमीप उत्तारितः संघातः। तत्र च म्लेच्छभयादाकुलीभूतं संघातलोकं दृष्ट्वा श्रीपूज्यैरुक्तम्—'किमिति भो! यूयमाकुलीभूताः ?' तैरुक्तम्—'प्रभो! म्लेच्छकटकमागच्छदस्ति, पश्यताऽस्यां दिशि गगनतलावलम्बिनीं धूलिम्, शृणुत निस्वानशब्दम्'। श्रीपूज्यैरवधानं दत्त्वा भणितम्—'अहो सार्थिकलोका! विश्वस्तीभवत, सर्वमपि वस्तु वृषभादिचतुष्पदादिकमेकत्र कुरुत, प्रभुश्रीजिनदत्तसूरिर्भलिष्यति'। तदनन्तरं श्रीपूज्यैर्मन्त्रध्यानपुरस्सरं निजदण्डकेन संघातकस्य चतुर्दिक्षु कोट्टाकारा रेखा कृता। सार्थलोकश्च सर्वोऽपि गोणीपूपविष्टः। संघातनिकटदेशे वहमानान् तुरगाधिरूढान् सहस्रसंख्यान् म्लेच्छान् पश्यति, म्लेच्छाश्च संघातं न पश्यन्ति, केवलं कोट्टं पश्यन्तो दूरं गताः। निर्भये सति ततः स्थानात् प्रचलितान् पृष्ठग्रामे संघातेन सहाऽऽगतान् श्रीपूज्यान् श्रुत्वा ढिल्लीवास्तव्य ठ० लोहट—सा० पाल्हण—सा० कुलचन्द्र—सा० गृहिचन्द्रादिसंघमुख्यश्रावका महता विस्तरेण वन्दनार्थं सम्मुखं प्रचलिताः। तांश्च प्रधानवेषान् प्रधानपरिवारान् प्रधानवाहनाधिरूढान् ढिल्लीनगराद्बहिर्गच्छन्तो दृष्ट्वा स्वप्रसादोपरि वर्तमानः श्रीमदनपालराजा विस्मितः सन् स्वकीयराजप्रधानलोकं पप्रच्छ—'किमित्येष नगरवास्तव्यलोकः सर्वोऽपि बहिर्गच्छति ?' राजप्रधानैरुक्तम्—'देव! अतीवरमणीयरूपोऽनेकशक्तियुक्तो गुरुरेषां समागतोऽस्ति। तस्य सम्मुखं भक्तिवशाद्यान्त्येते!' तदनन्तरं कुतूहलिनतेन राज्ञोक्तम्—'महामाघनिक! प्रगुणय पट्टतुरङ्गमं, वादय च काहलिकहस्तेन काहलां यथा सर्वोऽपि राजलोकः प्रभूय प्रभूय श्रीघमत्राऽऽगच्छति'। आदेशानन्तरं सहस्रसंख्यपोटकाधिरूढसुभटैरलंक्रियमाणः श्रीमदनपालराजा श्रावकलोकात् प्रथममेव श्रीपूज्यानां पार्श्वे गतः। तत्र च सार्थमध्यसितलोकैः प्रभूतढौकनिकदानपुरस्सरं राजा ज्योत्कृतः; श्रीपूज्यैश्च कर्णसुखकारिण्या वाण्या धर्मदेशना कृता। राज्ञा चोक्तम्—'आचार्याः! कुतः स्थानाद्यूयमत्राऽऽगताः ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्—'रुद्रपल्लीतः'[1]। राज्ञोक्तम्—'आचार्याः! उत्तिष्ठत यूयम्, पवित्रीकुरुत मदीयं नगरम्'। श्रीपूज्यैः प्रभुश्रीजिनदत्तसूरिदत्तोपदेशं स्मरद्भिः किमपि न भणितम्। पुनरपि राज्ञोक्तम्—'आचार्याः! किं न ब्रूत यूयम्, किं मदीये नगरे युष्माकं प्रतिपन्थी कश्चिद्वर्तते ?, आहो-

१ 'सक्कतः' प्र०।

श्चित् परिवारोपयोग्यन्नपानादि न लभ्यतेऽथवाऽन्यत्किमपि कारणं वर्तते यद्यूयं मार्गमुखे आगतमपि मदीयं नगरं परिहृत्याऽन्यत्र व्रजथ ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्–'महाराज ! युष्मदीयं नगरं प्रधानं धर्मक्षेत्रम्'। 'तर्हुत्तिष्ठत चलत ढिल्लीं प्रति, न कोऽपि युष्मानङ्गुलिकयाऽपि संज्ञास्यतीत्यादि'। 'श्रीमदनपालमहाराजोपरोधाद् युष्माभिर्योगिनीपुरमध्ये कदापि न विहर्तव्यमि'त्यादिश्रीजिनदत्तसूरिदत्तोपदेशत्यागेन हृदये दूयमाना अपि श्रीपूज्याः श्रीढिल्लीं प्रति प्रस्थिताः। वाद्यमानासु चतुर्विंशतिषु निस्वानयुगलीषु, विरदावलीं पठत्सु भट्टलोकेषु, धवलेषु दीयमानेषु, वसन्तादिमाङ्गलिक्यरागेण गायत्सु गायनेषु, नृत्यमानासु नर्तकीषु, ऊर्ध्वीकृतेष्वालम्बसहस्रेषु, मस्तकोपरि ध्रियमाणछत्रैर्लक्षसंख्यलोकैरनुगम्यमानैः श्रीमदनपालमहाराजदत्तहस्तैः श्रीजिनचन्द्रसूरिभी राजादेशात्कृततलिकातोरणादिमहाशोभे श्रीयोगिनीपुरे प्रवेशः कृतः।

४२. तत्र चान्यदा कदाचिदत्यन्तभक्तं कुलचन्द्रश्रावकं दुर्बलं दृष्ट्वा करुणार्द्रहृदयैः श्रीपूज्यैर्दत्तो द्रवरूपीकृतकुङ्कुमकस्तूरिकागोरोचनादिसुरभिद्रव्यलिखितानेकमन्त्राक्षरो यन्त्रपटः, भणितं च तस्याग्रतः–'महानुभावकुलचन्द्र ! निजमुष्टिप्रमाणैर्वासैरेष पटो दिने दिने पूजनीयः, निर्माल्यीभूताश्चैते वासाः पारदादिसंयोगात् सुवर्णा भविष्यन्ति'। स च गुरूपदिष्टरीत्या पटं पूजयन् कोटीध्वजः सञ्जातः।

४३. अन्यदोत्तरप्रतोल्यां बहिर्भूमौ गच्छद्भिः श्रीपूज्यैर्महानवमीदिने मांसनिमित्तं मिथ्यादृष्टिदेवताद्वयं महासंरम्भेण युध्यमानं दृष्ट्वा करुणयाऽधिगालिनाम्नी देवता प्रतिबोधिता। तया चोपशान्तचित्तया श्रीपूज्या विज्ञप्ताः–'भगवन्तो ! मया परित्यक्तो मांसबलिः, परं मम किञ्चिद्वासस्थानकं दर्शयत यथाऽहं तत्र स्थिता युष्मदादेशं प्रतिपालयामि'। श्रीपूज्यैस्तदग्रतो [भणितम्–] 'महानुभावे ! श्रीपार्श्वनाथविधिचैत्ये प्रविशतां दक्षिणस्तम्भे त्वयाऽवस्थातव्यम्' इत्युक्त्वा पौषधशालायां चाऽऽगत्य सा० लोहड सा० कुलचन्द्र सा० पाल्हणादिप्रधानश्रावकाणामग्रे कथितम् यथा–'श्रीपार्श्वनाथप्रासादे प्रविशतां दक्षिणस्तम्भेऽधिष्ठायकमूर्त्तिमुत्कारयतेति'। आदेशानन्तरं श्राद्धैस्तथैव सर्वं कारितम्। महाविस्तरेण श्रीपूज्यैस्तत्र प्रतिष्ठा कृता। 'अतिबल' इति नामाऽधिष्ठायकस्य कृतम्। श्रावकैश्च तस्य महान् भोगः कर्तुं प्रारेभे। अतिबलोऽपि श्रावकाणां वाञ्छितं पूरयितुं प्रवृत्तः।

सं० १२२३ समस्तलोककृतक्षामणापूर्वकमनशनविधिना द्वितीयभाद्रपद वदी १४ देवीभूताः श्रीजिनचन्द्रसूरयः।

४४. तदनन्तरं श्रावकैर्महाविस्तरेणानेकमण्डपिकामण्डिते[१] विमाने आरोप्य 'यत्र क्वाप्यस्माकं संस्कारं करिष्यत यूयं तावतीं भूमिकां यावन्नगरवसतिर्भविष्यती' त्यादिगुरुवाक्यस्मृतेरतीव दूरभूमौ नीताः। तत्र च भूमौ धृतं श्रीपूज्यविमानं दृष्ट्वा जगद्हृदयानन्ददायकश्रीपूज्यगुणस्मरणात् समुच्छलत्परमगुरुस्नेहाच–

> चातुर्वर्ण्यमिदं मुदा प्रयतते त्वद्रूपमालोकितुं,
> मादृक्षाश्च महर्षयस्तव वचः कर्तुं सदैवोद्यताः।
> शक्रोऽपि स्वयमेव देवसहितो युष्मत्प्रभामीहते,
> तत्किं श्रीजिनचन्द्रसूरिसुगुरो ! स्वर्गं प्रति प्रस्थितः॥ [२२]
>
> साहित्यं च निरर्थकं समभवन्निर्लक्षणं लक्षणं,
> मन्त्रैर्मन्त्रपरैरभूयत तथा कैवल्यमेवाश्रितम्।
> कैवल्याज्जिनचन्द्रसूरिवर ! ते स्वर्गाधिरोहे हहा ! ,
> सिद्धान्तस्तु करिष्यते किमपि यत्तन्नैव जानीमहे॥ [२३]

१–१ एतदन्तर्गतं प्रकरणं नास्ति म०।

प्रामाणिकैराधुनिकैर्विधेयः, प्रमाणमार्गः स्फुटमप्रमाणः ।
हहा ! महाकष्टमुपस्थितं ते, स्वर्गाधिरोहे जिनचन्द्रसूरे ! ॥ [२४]

इत्यादि भणित्वा बृहदसमाधानवशादुच्चैःस्वरेणाऽश्रुपातं कर्तुं प्रवृत्तः प्रवर्तकसाधुगुणचन्द्रगणिः । तदनन्तरमितरेऽपि साधवो निजगुरुस्नेहविह्वलाः परस्परपराङ्मुखीभूयाश्रुपातं कर्तुं लग्नाः, श्रावका अपि प्रच्छादिकाञ्चलं नेत्रयोरग्रे दत्त्वा तथैव भावं कर्तुं प्रवृत्ताः । क्षणान्तरे तादृशमसमञ्जसं दृष्ट्वा स्वयं धैर्यमवलम्ब्य च–'भो ! भो ! महासत्त्वाः साधवो ! माऽसमाधानं कुरुत, श्रीपूज्यैर्मम सर्वाऽपि शिक्षा दत्ताऽस्ति, यथा युष्मन्मनोरथाः सेत्स्यन्ति तथा विधास्येऽतो मम पृष्ठलग्ना यूयमागच्छत' इत्याश्वास्य सर्वसाधुसमेतः कृतकर्तव्यक्रियाकलापः समाजगाम पौषधशालायां सर्वजनमान्यो भाण्डागारिकगुणचन्द्रगणिः । कतिचिद्दिनानन्तरं चतुर्विधसंघसमेतः श्रीबब्बेरके विहृतः ।

४५. तत्र च सं० १२१० विक्रमपुरे जिनपतिसूरेर्जन्म, सं० १२१७ फाल्गुन शुक्लदशम्यां व्रतम्, सं० १२२३ कार्तिकसुदि १३ अनेकदेशसमागतानेकसंघसम्मत्या प्रधानशकुनप्रेरणया श्रीजिनदत्तसूरिपादोपजीविश्रीजयदेवाचार्यहस्तेन श्रीजिनचन्द्रसूरिपट्टे चतुर्दशवर्षप्रमाणः षट्त्रिंशदाचार्यगुणालङ्कृतो महाप्राज्ञो नरपतिनामा क्षुल्लको महता महोत्सवेनोपवेशितः श्रीजिनपतिसूरिरिति नाम कृतम्[१] । तस्य च द्वितीयस्थानीयः श्रीजिनचन्द्रसूरिवाचको मुनिः श्रीजिनभक्ताचार्यनामाऽऽचार्यः कृतः । तत्र च तत्रत्यसमुदायसहितेन सा० मानदेवेन देशान्तरीयसमुदायसत्कारपूर्वकं सहस्रसंख्यद्रव्यव्ययेन महामहोत्सवः कारितः । तत्रैव स्थाने श्रीजिनपतिसूरिभिः पद्मचन्द्र-पूर्णचन्द्रयोर्व्रतं दत्तम् । सं०१२२४ विक्रमपुरे गुणधर-गुणशीलयोः पूर्णरथ-पूर्णसागरयोर्वीरचन्द्र-वीरदेवयोः क्रमेण दीक्षानन्दित्रयं कृतम् । जिनप्रियस्य चोपाध्यायपदं दत्तं श्रीजिनपतिसूरिभिः । सं० १२२५ श्रीपूज्यैः पुष्करिण्यां सभार्यस्य जिनसागरस्य जिनाकर–जिनबन्धु–जिनपाल-जिनधर्म-जिनशिष्य–जिनमित्राणां व्रतं दत्तम् । पुनर्विक्रमपुरे जिनदेवगणिदीक्षा । सं० १२२७ श्रीपूज्यैरुच्चायां धर्मसागर–धर्मचन्द्र–धर्मपाल–धनशील–धर्मशील–धर्ममित्राणां धर्मशीलमातुश्च व्रतम्, जिनहितस्य वाचनाचार्यपदं दत्तम् । तथा मरुकोट्टे शीलसागर-विनयसागरयोः, शीलसागरभगिन्यजितश्रीगणिन्या व्रतं दत्तम् । सं० १२२८ सागरपाटे दु० सा(दुसाझ ?) साढलसेनापत्याम्बडकारिता अजितस्वामि-शान्तिनाथचैत्ययोः प्रतिष्ठा कृता च श्रीपूज्यैः । तत्रैव वर्षे बब्बेरके विहारः । आसिकायां चाऽऽसिकासमीपवर्तिग्रामागतान् श्रीपूज्यान् श्रुत्वा प्रमोदातिशयादासिकावास्तव्यसमुदायेनाऽऽत्मना सार्धं श्रीभीमसिंहनामा राजाऽपि सम्मुखमानीतः । तत्र च सर्वातिशायिरूपान् लघुवयसः श्रीपूज्यान् दृष्ट्वा हर्षप्रकर्षाच्छ्रीभीमसिंहभूपतिः कुशलवार्ताप्रश्नव्याजेन जिह्वापाटवदर्शनकुतूहलादालापयामास । श्रीपूज्यैश्च राजनीत्युपदर्शितद्वारेण विस्तरेण धर्मदेशना कृता । लब्धावसरेण राज्ञा केलिवशादुक्तम्–'आचार्य ! अस्माकं नगरे महाविद्वान् दिगम्बरो वर्तते तेन सार्धं वादं ग्रहीष्यसि ?' पार्श्वोपविष्टेन श्रीजिनप्रियोपाध्यायेनोक्तम्–'महाराज ! अस्माकं दर्शन उपेत्य केनापि सह वादो न क्रियते, परं यदि कदापि कोऽपि पण्डितमानी स्वशक्तिं स्फोरयन् जैनदर्शनं चाऽवहेलयन्नस्मानुद्वेजयति तदा पश्चाद् न भूयते, किं बहुना यथातथा तस्मिन्निर्लोठित एवाऽस्माकं शरीरे सुखं भवति ।' श्रीपूज्यानुद्दिश्य राज्ञोक्तम्–'आचार्य ! एवम् ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्–'महाराज ! एवमेव' । पुनरप्युपाध्यायेनोक्तम्–'महाराज ! ज्ञानबाहुल्येनासद्गुरव एव समर्थाः, परं दर्शनमर्यादया ज्ञानाभिमानं न कुर्वन्तोऽपि दर्शनविप्लवकारिणं प्रतिवादिनं स्वशक्त्या सकललोकसमक्षं मानपर्वतादुत्तार्य मुञ्चन्ति' । राज्ञोक्तम्–'आचार्य ! किमयमाचष्टे युष्माकं पण्डितः ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्–'महाराज !

ज्ञानं मददर्पहरं माद्यति यस्तेन तस्य को वैद्यः ? ।
अमृतं यस्य विषायति तस्य चिकित्सा कथं क्रियते ? ॥१॥ [२५]

---

१ प्र० 'साधवः साध्व्यश्च' । + अत्र ५ पत्रात्मकं मतान्तरं समाप्तं भवति ।

इत्यादिदेशनया गाढतरमावर्जितो राजोक्तवान्–'आचार्य ! किमिति विलम्बः क्रियते ?; नगरप्रवेशेऽपि बृहती वेला लगिष्यतीति'। तदनन्तरं चतुर्विधसंघेन पृथ्वीपतिश्रीभीमसिंहेन च सार्धं पूर्वोक्तढिल्लीप्रवेशकरीत्या श्रीआसिकायां श्रीपूज्याः प्रविष्टाः।

४६. तत्र चान्यदा बहिर्भूमौ गच्छतां साधुवृन्दालङ्कृतपश्चाद्भागानां श्रीपूज्यानां प्रतोलीप्रदेशे मिलितः सम्मुखमागच्छन् महाप्रामाणिको दिगम्बरः। सुखवार्ताप्रश्नव्याजेनाऽऽलाप्य श्रीपूज्यैः सज्जनस्वरूपप्रतिपादकवृत्तेषु व्याख्यायमानेषु मिलितः कुतूहलात् सर्वोऽपि नागरिकलोको राजलोकश्च। तत्र च श्रीपूज्यानां स्फूर्जितं दृष्ट्वा लोकः सर्वोऽपि लघुनाऽपि श्वेताम्बराचार्येण जितो दिगम्बरः पण्डितराज इति परस्परं वार्तयामास। राजप्रधानदिदा-कक्करिउ–कालाश्च राजसभायां गत्वा राजश्रीभीमसिंहस्याग्रे कथयामासुः–'देव ! यस्याऽऽचार्यस्य सम्मुखं तस्मिन् दिने यूयं गता आसन् तेनाऽऽचार्येण लघुनाऽप्यत्रत्यो दिगम्बरो जित इति।' राजा हर्षवशाद् विकसितवदनः प्राह–'सत्यम् ?' ते प्राहुः–'देव ! सत्यं, नास्त्यत्र हास्यम्'। राजोवाच–'भोः कथं कथम् ?' ते च हर्षावेगात् परवशा इवोचुः–'देव ! प्रतोलीप्रदेशे सर्वलोकसमक्षं तैरित्थमित्थं दिगम्बरो जितः।' राजा प्राह–'अहो ! पौरुषमेव प्राणिनां सर्वसम्पदो हेतुर्न लघुत्वं महत्त्वं वा। मया तस्मिन्नेव दिने तदाकृतिं दृष्ट्वा सम्भावितं यदस्याग्रतो दिगम्बरो वाऽन्यो वा विद्वान् स्थातुं न शक्यते'–इत्यादिकां बह्वीं प्रशंसां कृतवानिति। फाल्गुनशुक्लतृतीयायां देवगृहे श्रीपार्श्वनाथप्रतिमां स्थापयित्वा श्रीसागरपाटे देवकुलिका प्रतिष्ठिता श्रीपूज्यैः।

४७. सं० १२२९ धानयाल्यां श्रीसंभवस्थापना शिखरप्रतिष्ठा च कृता। सागरपाटे च पं० माणिभद्रपदे विनयभद्रस्य वाचनाचार्यपदं दत्तम्। सं० १२३० विक्रमपुरे थिरदेव-यशोधर-श्रीचन्द्राणाम्, अभयमति-जयमत्यासमति-श्रीदेवीसाध्वीनां च दीक्षा दत्ता। सं० १२३२ फाल्गुनसुदि १० विक्रमपुरे भाण्डागारिकगुणचन्द्रगणिस्तूपः प्रतिष्ठितः। तत्रैव वर्षे निजप्रभुप्रसादननिमित्तसमागतमण्डलीकभूपमण्डलीमण्डितमण्डलाकारस्कन्धावारवारोपशोभितकोट्टबहिःप्रदेशस्वकीयप्रासादमध्यवर्तमानचक्रवर्तिराजधानीसमानलक्ष्मीकतत्कालनिष्पन्नश्रीपार्श्वनाथमन्दिरशिखरहिरण्मयकलशदण्डप्रभृतिप्रभूतधर्मस्थानार्थप्रारब्धप्रतिष्ठामहोत्सवदर्शनकुतूहलबलमिलितनानादेशवास्तव्यभव्यलोकसंघसंघाताकारसन्निवेशविशेषशोभमानबहिःपरिसरश्रीमदासिकायां चत्वारिंशत्संख्यसर्वानवद्यविद्याभ्यासजितवाचस्पतिमतिसुयतिजनमनःकुमुदखण्डमार्तण्डमण्डलायमानोपदेशैः श्रीपूज्यैर्विक्रमपुरीयसमुदायेन सार्धं विजह्रे। तत्र च ज्येष्ठानुक्रमेण समकालपुरःप्रारब्धपृथक्पृथक्प्रेक्षणीयकपञ्चशब्दवादनादिवर्धापनकहर्यमरनृत्यमानास्तोकलोकोच्चारितनिरुञ्छनकदानगीयमानयुगप्रधानगुरुनामश्रवणानन्तरवितीर्यमाणार्थसार्थतिरस्कृतवैश्रवणद्रव्यगर्वगान्धर्विकलोकोपश्लोक्यमाननिजनिजदेशपूर्वजनामधेयाकर्णनोच्छलदमन्दानन्दामृतसरस्तरङ्गभङ्गिसङ्गसुखीभवदङ्गसमग्रमङ्गानुगम्यमानानां श्रीपूज्यानां प्रवेशः सञ्जातो ज्येष्ठशुक्लतृतीयायाम्। वादलब्धिलब्धजगन्मध्याध्यामसाधुवादाशीतिसंख्यसाधुमधुपपर्युपास्यमानक्रमकमलैः श्रीपूज्यैर्महता विस्तरेण प्रतिष्ठिते श्रीपार्श्वनाथशिखरे प्रतिष्ठितौ सुवर्णदण्ड-कलशावध्यारोपितौ। तस्मिन्नेव समये दुसाझसाढलपुत्र्या साऊश्राविकया पारुत्थद्रम्मशतपञ्चकेन माला गृहीता। धर्मसारगणि-धर्मरुचिगणी व्रतिनौ कृतौ। आषाढमासे च कन्यानयने विधिचैत्यालये गृहस्थावस्थजिनपतिसूरिपितृव्यविक्रमपुरवास्तव्यसा०मानदेवकारितश्रीमहावीरदेवप्रतिमा स्थापिता। व्याघ्रपुरे पार्श्वदेवगणिर्दीक्षितः श्रीपूज्यैः। सं० १२३४ फलवर्धिकायां विधिचैत्ये पार्श्वनाथः स्थापितः। लोकयात्रादिकारणकलापभाविविज्ञस्वकीयधर्मध्यानशास्त्रपरिज्ञानहानिसंभावनानङ्गीकृतलभ्यमानाचार्यपदानुमेयजगदसाधारणगुणगणस्य जिनमतस्य चोपाध्यायपदं दत्तम्, गुणश्रीगणिन्या महत्तरापदं च, श्रीसर्वदेवाचार्याणां च दीक्षा जयदेवीसाध्व्याश्च। सं० १२३५ अजयमेरौ चतुर्मासी कृता। श्रीजिनदत्तसूरिस्तूपः पुनरपि महाविस्तरेण प्रतिष्ठितः। देवप्रभो दीक्षितस्तन्माता चरणमतिगणिनी च। सं० १२३६ अजयमेरौ पासटकारितमहावीरप्रतिमा प्रतिष्ठिता, अम्बि-

काशिखरश्च। सागरपाटेऽप्यम्बिकाशिखरः। सं० १२३७ बब्बेरके जिनरथो वाचनाचार्यः कृतः। सं० १२३८ आसिकायां बृहज्जिनयुगलं स्थापितम्।

४८. सं० १२३९ फलवर्धिकायां भक्तिवशादनेकश्रावकैरनुगम्यमानान् बहिर्भूमौ गच्छतः श्रीजिनभक्ताचार्यान् दृष्ट्वा मत्सरवशादज्ञानाद्वा महर्द्धिकश्रावकदर्पाद्वा कुकर्मपरिपाकाद्वा नटभटपटलवेष्टित उकेशगच्छीयः पद्मप्रभनामा पण्डितंमन्य आत्मनः पुरः पद्मप्रभेण जितो जिनपतिसूरिरिति भट्टान् पाठयितुं लग्नः। तदनन्तरं कोपावेगादुत्तालगत्या गत्वा श्रीपूज्यभक्तश्रावकैरालापितः स–'आः पाप! अलीकभाषिन् पद्मप्रभ! कस्मिन् काले जितस्त्वया जिनपतिसूरिर्यदेवं भट्टान् पाठयसि?' तेनोक्तम्–'यद्यलीकं मन्यध तदा पुनरप्यानयत स्वगुरुमिदानीमपि जेष्यामीति'। तैरुक्तम्–'आस्ताम[स]मभीमसमप्रकृते दुरात्मन्! शृगालोऽपि सन् सिंहेन सह स्पर्धमानो निश्चितं मुमूर्षसी' त्यादिवदत्सु तेषु, मिलिता उभयभक्तश्रावका अहङ्कारवशात् पणत्यागपूर्वकं चक्रुर्वादव्यवस्थाम्। श्रुता च वार्ताऽजयमेरौ श्रीपूज्यैः, प्रेषितश्च तत्र तद्विजयार्थं संघप्रमोदार्थं च श्रीजिनमतोपाध्यायः। पुनरपि तत्रत्यसमुदायेन चिन्तितम्–'एष दुरात्मा मृषाभाषी कथयिष्यति मया पूर्वं जिनपतिसूरिर्जितोऽसौ ममाग्रे स्थातुमशक्नुवन् स्वकीयपण्डितं प्रेषितवानित्यादि'। तस्माच्छ्रीपूज्याः श्रीमुखेन जयन्त्वेनमिति विचार्य समुदायः श्रीजिनमतोपाध्यायेन सहाजयमेरौ गतः। तत्र च राजमान्येन श्रा० रामदेवेन विज्ञप्तः श्रीपृथ्वीराजः पृथ्वीपतिः–'देव! अस्मद्गुरूणां श्वेताम्बरेणैकेन सह वादव्यवस्था निष्पन्ना वर्तते, अतो यथा महापण्डितमण्डलीमण्डिते युष्माकं सभामण्डपे फलवती भवति तथा प्रसादं कुरुतावसरं प्रयच्छतेति'। केलिप्रियेण राज्ञोक्तम्–'इदानीमेवावसरः'। श्रे० रामदेवेन विज्ञप्तम्–'गोस्वामिन्! द्वितीयः श्वेताम्बरः पद्मप्रभनामा फलवर्धिकायां वर्तते'। कौतुकार्थिना राज्ञोक्तम्–'तद्विषयेऽहं भलिष्यामि, स्वकीयान् गुरून् प्रगुणयेति'। श्रे० रामदेवेनोक्तम्–'देव! अस्मद्गुरवोऽत्रैव वर्तन्त इति।' तदनन्तरं राज्ञा भट्टपुत्रान् प्रेष्य पद्मप्रभ आनायितः। तस्मिंश्चागते दिग्विजयार्थं नरानयने प्रस्थानीभूतः सकलबलसमेतः श्रीपृथ्वीराजः। तत्र पुनरपि श्रेष्ठिरामदेवेन विज्ञप्तो राजा–'देव! अस्मद्विज्ञप्तिकाविषये कीदृश आदेशः?' प्रतिपन्नप्रतिपालकेन राज्ञोक्तम्–'प्रगुणय स्वगुरून्, कार्त्तिकशुक्लसप्तमीदिने वादावसरः।' श्रे० रामदेववचनात्तद्दिनोपरि श्रीअजयमेरुतः श्रीजिनमतोपाध्याय–पं० थिरचन्द्र–वा० मानचन्द्रादिसाधुवृन्दपरिकरिताः श्रीजिनपतिसूरयो नरानयने राजसभायां प्रभूताः, पद्मप्रभोऽपि भट्टपुत्रसमेतस्तत्र समागतः। 'यावदहमागच्छामि तावत्त्वया वागीश्वर-जनार्दनगौड–विद्यापतिप्रभृतिपण्डितसमक्षमेतौ वादयितव्यौ' इत्यादेशं मण्डलेश्वर-कइमासस्य दत्त्वा स्वयं राजा श्रमकृते श्रमस्थानं गतः। अतीवरमणीयां श्रीपूज्यानां मूर्तिं दृष्ट्वा हर्षादाह मण्डलेश्वरः–'अहो! एके ईदृशा दर्शनिनः सन्ति ये दृष्टाः सन्तो नेत्रयोरानन्दं जनयन्ति, निर्वासाश्च दिगम्बराः पिशाचप्राया दृष्टाः सन्तो नेत्रयोरुद्वेगमुत्पादयन्तीति'। तदनन्तरं श्रीपूज्यैरुक्तं मण्डलेश्वरं [प्रति]–

> पञ्चैतानि पवित्राणि सर्वेषां धर्मचारिणाम्।
> अहिंसा सत्यमस्तेयं त्यागो मैथुनवर्जनम्॥ [२६]

अतो दर्शनिनां निन्दा न कर्तव्येत्यादि व्याचक्षानेषु पूज्येष्वन्तरेऽर्ष्यावशादुत्तालः पण्डितपद्मप्रभो वृत्तं पठितुं प्रवृत्तो मण्डलेश्वरं [प्रति]–

> प्राणा न हिंसा न पिबेच्च मद्यं, वदेच्च सत्यं न हरेत्परस्वम्।
> परस्य भार्यां मनसा न वाञ्छे, स्वर्गं यदीच्छे विधिवत्प्रविष्टुम्॥ [२७]

–इति। श्रीपूज्यैरुक्तम्–'अहो शुद्धपाठकता'। स प्राह–'आचार्य! मामुपहससि?' श्रीपूज्यैरुक्तम्–'महानुभाव पद्मप्रभ! कलाविकले कालेऽस्मिन् क एक उपहस्यते को वा नोपहस्यते'। स प्राह–'तर्हि किमित्यहो शुद्धपाठकतेत्युक्तम्?' श्रीपूज्यैरुक्तम्–'महामत्त! पण्डितसभायां शुद्धमेव पठ्यमानं गुरालङ्कृतये भवति। स प्राह–'किं कश्चित् मोऽप्यस्ति

यो मयि पृच्छादिकं पठति कृत्यानि निष्कासयति ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्–'एवंविधं श्लोकं पूर्णं कुरुत पठ' । 'जनार्दन-विद्यापतिप्रभृतिपण्डितमिश्राः ! यूयं मानवार्तामेव कुरुत । पञ्चभिर्वा समस्यां पूरयत' । तेऽन्यैश्च मिलितोऽपि धाष्टर्याद् पठितुं लग्नः । श्रीपूज्यैः तस्मात् साक्षिणः कृत्वा तत्पादपूरणे तत्र कृते त्रिस्थितः तदा 'महागुरु ! एवं पठ्यमानं शुद्धं पूर्णं भवति; यथा–

> प्राणान्न हिंस्यान्न पिबेच्च मद्यं, वदेच्च सत्यं न हरेत् परस्वम् ।
> परस्य भार्यां मनसा न वाञ्छेत्, स्वर्गं यदीच्छेद् विधिवत् प्रवेष्टुम् ॥ [२८]

तदनन्तरं पुनरपि स आह–'आचार्य ! अनया वचनरचनया मुग्धजनान् विप्रतारयसि' । श्रीपूज्यैरुक्तम्–'त्वमपि विप्रतारय यदि शक्तिरस्ति' । मण्डलेश्वर-कदम्बवासेनोक्तम्–'किमिति प्रथमतोऽपि शुष्कवादः प्रारब्धः ?; यदि युवयोः क्वापि शक्तिरस्ति तदा कश्चित् पदार्थं स्थापयतु, द्वितीयस्तन्निराकरोतु' । श्रीपूज्यैरुक्तम्–'पद्मप्रभ ! रुचिरं भणति मण्डलेश्वर इति, कञ्चित् पक्षं कक्षीकृत्य ब्रूहि' । स प्राह–'आचार्य ! जिनशासनाधारभूतप्रभृतश्रीमदाचार्यसंमतदक्षिणावर्त्तारात्रिकावतारणविधिपरित्यागे किं कारणम् ?' । 'वक्रो वक्रोक्त्यैव निर्लोठ्यः' इत्याशयवद्भिः श्रीपूज्यैरुक्तम्–'किं यद् बहुजनसंमतं भवति तदादरणीयम् ?; मिथ्यात्वमपि तर्हि किमिति नाद्रियते ?' स प्राह–'वृद्धपरम्परयाऽऽगतं सर्वमप्याद्रियामहे' । श्रीपूज्यैरुक्तम्–'वृद्धपरम्परानागतोऽपि किमिति भवत्पूर्वजैश्चैत्यवास आदृतः ?' । स प्राह–'कथं ज्ञायते वृद्धपरम्परानागतः ?' इति । श्रीपूज्यैरुक्तम्–'किं श्रीमहावीरसमवसरणेऽन्यस्मिन् वा जिनभवने श्रीगौतमस्वामिगणधरः श्रयानो वसानो वा कदाऽपि क्वापि श्रुतः ?' । उत्तरदानासामर्थ्यवैलक्ष्यात् स प्राह–'आचार्य ! कथं स्पृष्टः कष्टं नाख्यासि ?; अहमपृच्छं दक्षिणावर्त्तारात्रिकावतारणविधिर्वृद्धपरम्परागतोऽपि किमिति परित्यक्त इति, त्वं च चैत्यवासमवादीरित्यनः' । श्रीपूज्यैरुक्तम्–'मूर्ख ! वक्रे काष्ठे वक्रो वेधः क्रियत इति न्यायो भवता विस्मारितः ?; अथवा भवसिदानीं सावधानीभूय शृणु–ननु दक्षिणावर्तारात्रिकावतारणविधिर्वृद्धपरम्परागत इति कथं ज्ञायते ? । सिद्धान्ते तावदारात्रिकविचारो नास्ति; किन्तु श्रेयस्कृते पाश्चात्यैर्बहुश्रुतैराचीर्णः । तैश्च स किं दक्षिणावर्तो वामावर्तो वाऽऽचीर्ण इति विप्रतिपत्तिनिरासार्थं युक्तिर्गवेषणीया । न ह्यवमुष्टिन्यायः कर्तव्यः । यद् युक्तं प्रतिभाति तदादरणीयं न शेषम् ।' सभ्यैरुक्तम्–'पद्मप्रभ ! सत्यमाहाचार्यः' । तदनन्तरं सभ्यसम्मत्या प्रमाणरीत्या श्रीपूज्यैः सम्यक्शरीरसंमाधुर्यसंक्षेपकारिण्या गीर्वाणवाण्या तस्यां सभायां यथा वामावर्त्तारात्रिकावतारणं स्थापितं तथा प्रयुक्तानामेकान्तवादस्थानकोशात् श्रीपूज्यकृतवादस्थलेभ्योऽवसेयम् । अत्र गौरवभयान्न लिखितम् । किम्बहुना, हर्षपरवशैः सर्वैः श्रीपूज्यानुद्दिश्य जयजयकारश्चक्रे ।

४९. अजितनगरे श्रीपृथ्वीराजः सभामध्ये समागतः । सिंहासने चोपविश्य पप्रच्छ मण्डलेश्वरम्–'केन जितं केन हारितम् ?' । श्रीपूज्यानामाज्ञया दर्शगता मण्डलेश्वरेणोक्तम्–'देव ! एतेन जितमिति' । अमर्षात् पद्मप्रभः प्राह–'महाराज ! मण्डलेश्वरो लञ्चाग्रहण एव प्रवीणो न गुणिनां गुणग्रहणे' । उच्छलत्कोपावेशान्मण्डलेश्वरः प्राह–'रे मुण्डिक ! भोरपट ! अद्यापि न किमपि विनष्टम्, अयमाचार्यो वर्तते, त एवैते सभ्यावर्तन्ते; मया लञ्चा गृहीताऽस्ति तर्हि मौनं कृत्वा तिष्ठामि स्थः; त्वं चेदिदानीमपि श्रीपृथ्वीराजसमक्षमाचार्यं जेष्यसि तदा प्रागपि जितोऽसीति' । स प्राह–'मण्डलेश्वर ! नाहं कथयामि भवताऽऽचार्यपार्श्वाल्लञ्चा गृहीता; किन्तु सर्वाचार्यसंमतदक्षिणावर्तारात्रिकावतारणविधिं गलद्दर्दरिकाप्राणेन निषेध्याचार्येण प्रत्यायितो मण्डलेश्वर इति' । श्रीपूज्यैरुक्तम्–'महात्मन् पद्मप्रभ ! सर्वाचार्यसंमतमिति गुरुकमुक्तम्, अस्मदाम्नायवर्त्याचार्याणामसंमतत्वात्' । स प्राह–'किं यूयमन्यतराचार्येभ्यो ज्ञाततरं ज्ञातारो येषां संमतमपि न मन्यध्वे ?' । श्रीपूज्यैरुक्तम्–'पद्मप्रभ ! किमन्ये आचार्या अस्मदाम्नायवर्त्याचार्येभ्यो ज्ञाततरं ज्ञातारो येषां संमतं वामावर्तारात्रिकविधिं न [illegible] ?'–इत्यादि वक्रोक्तिभणनेन श्रीपृथ्वीराजसमर्थ

निर्वचनीकृतः पद्मप्रभः प्रोक्तवान् यथा–'महाराज ! यदि यौष्माकीणं वचनं भवति तदिदानीमत्रोपविष्टविशिष्टलोकप्रमोदोत्पादनाय कुतूहलानि दर्श्यन्ते; तद्यथाऽऽकाशमण्डलादवतीर्य युष्मदुत्सङ्गे निविष्टामतिरूपपात्रामेकां विद्याधरीं दर्शयामि, पर्वतमङ्गुलमयं कृत्वा दर्शयामि, नभस्तल इतस्ततो नृत्यमानान् हरिहरादीन् देवान् दर्शयामि, उच्छलत्कल्लोलमालाकरालं पारावारं समागच्छन्तं दर्शयामि, सकलमपीदं नगरमाकाशस्थितं दर्शयामीत्यादि'। सभ्यैर्विहस्योक्तम्–'पण्डित पद्मप्रभ ! यदि भवतैदृक्षेन्द्रजालकला शिक्षिता तत्किमाचार्यैः सह वादः प्रारब्धः। श्रीपृथ्वीराजदानलाभाभिप्रायनिरन्तरसमागच्छदपरलक्षसंख्येन्द्रजालिकैः समं प्रारभ्यताम्'। हर्षाकुलचित्तेन तेनोक्तम्–पण्डितमिश्रा ! अयमाचार्यः सर्वकलाकुशलमात्मानं मन्यतेऽतो यद्यद्य श्रीपृथ्वीराजसभायां युष्माकं समक्षं गर्वपर्वतान्नोत्तारयिष्यते तदैष वातेन भिद्यमानो धर्तुमपि न शक्यते'। विहसितवदनान् श्रीपूज्यान् दृष्ट्वा तेनोक्तम्–'आचार्य ! किं विलक्षं हससि ? अयं सोऽवसरो यदि काचिच्छक्तिरस्ति तदा दर्शय सर्वलोकचेतश्चमत्कारि किमपि कलाकौशलं स्वकीयम्, किं वाऽमुष्याः सभातो बहिर्निःसरेति'। तदनन्तरं श्रीपूज्यैर्जिनदत्तसूरिनाममन्त्रस्मरणपूर्वमुक्तम्–'पद्मप्रभ ! त्वं तावदात्मशक्तिस्फोरणानुसारेण यथोक्तमिन्द्रजालं प्रथमं निष्कासय, पश्चाद् वर्तमानकालोचितं किमपि वयमपि करिष्यामः'। कुतूहलावलोकनाभिलाषाकुलतया श्रीपृथ्वीराजेन सोत्सुकमुक्तम्–'पद्मप्रभ ! आचार्येणानुमतिर्दत्ताऽस्त्यतो वेगं कृत्वा स्वेच्छानुसारेण दर्शय नानाविधानि कौतुकानीति'। तदनन्तरमन्तःशून्यत्वादाकुलव्याकुलेन श्रीमत्पूज्यपुण्यप्राग्भारप्रेरितेन च पद्मप्रभेणोक्तम्–'महाराज ! अद्य रात्रौ देवीं पूजयित्वाऽभीष्टदेवताह्वानमन्त्रमेकाग्रचित्तेन ध्यात्वा कल्ये नानाविधमिन्द्रजालं दर्शयामि'–इति श्रुत्वा च हास्यरसोत्कर्षोच्छलदमन्दानन्दाश्रुव्यापूर्णनयनैः सर्वैरपि लोकैर्दुर्वाक्यभाषणपूर्वकं गाढतरमुपहसितः पद्मप्रभः। तत्पश्चान्निर्लज्जचूडामणिना तेन सविकाशवदनान् श्रीपूज्यानवेक्ष्योक्तम्–'आचार्य ! किं हससि ?, यदि त्वं भद्रोऽसि तदिदानीमेव किमपि दर्शय' इति विहस्य श्रीपूज्यैरुक्तम्–'पद्मप्रभ ! स्थिरीभूय ब्रूहि, किमिन्द्रजालमुच्यते ?' तेनोक्तम्–'त्वमेव ब्रूहि'। श्रीपूज्यैरुक्तम्–'देवानाम्प्रिय ! असंभवद्वस्तुसत्ताविर्भावः'। 'तत् किम् ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्–'पद्मप्रभ ! तदिदमद्य तवैव प्रत्यक्षीभूतं किं न पश्यसि ?' तेनोक्तम्–'किमिति ?' तदन्तरं श्रीपूज्यैः सोत्कर्षमुक्तम्–'महानुभाव ! किं त्वया स्वप्नान्तरेऽपि संभावितमिदं कदाचिद्, यदहं विशिष्टासनोपविष्टसहस्रसंख्यमुकुटबद्धराजराजिविराजितायां श्रीपृथ्वीराजसभायां गत्वा यथेच्छया वक्ष्यामीति; परमिदमसंभाव्यमपि दैवनियोगादसत्सान्निध्यादद्य संजातमिति, कोऽस्येन्द्रजालाद् भवच्चिकीर्षिताद् भेद इति ?'। पुनरपि क्रूराशयतया लोकोपहासमवगणय्य राजानमुद्दिश्य तेनोक्तम्–'महाराज ! अनाक्रमणीयपराक्रमाक्रान्तनिजपदाधःकृतप्रतापप्रचण्डप्रभूतभूपतिव्रातसततमृग्यमाणादेशामृतसर्वस्वे त्वयि सकलामपि पृथ्वीं शासति युगप्रधान इति विरुदमात्मन्ययमाचार्यः प्रचुरत्यागदानवशीकृतसमस्तभट्टलोकमुखेन पाठयति'। राज्ञोक्तम्–'पद्मप्रभ ! युगप्रधान इत्यस्य कः शब्दार्थः ?' सहर्षेण तेनोक्तम्–'महाराज ! युगशब्देन वर्तमानः कालो भण्यते, तस्मिंश्च यः प्रधानः सर्वोत्तमः स युगप्रधानशब्देनोच्यते'। अत्रान्तरे श्रीपूज्यैर्वेगादेवोक्तम्–'मूर्ख पद्मप्रभ ! यदपि तदपि भणित्वाऽस्माकं मुखोपरि राजानमुच्छालयितुमिच्छसि ?'[1]। श्रीपृथ्वीराजराजानमुद्दिश्य चोक्तम्–'महाराज ! भिन्नरुचयः सर्वेऽपि प्राणिन इति केषांचित् कोऽपि सुखायते। ततो यः कश्चिदेषामभीष्टो भवति तं प्रति नानाविधान्तरङ्गरङ्गसूचकानेकविरुदन्यासमनोहरान् प्रधानशब्दानुच्चरन्ति ते। यथा स्वामाश्रित्य–जीवाऽऽदिश, पादाववधार्यताम्–इत्यादिशब्दान् भणन्ति भवत्पादारविन्दाराधनैकमानसश्रीकइमासमण्डलेश्वरप्रमुखराजप्रधानलोकाः, तथैतानुद्दिश्य यथोक्तान् शब्दानुच्चारयन्त्येतत्सेवका इति। एवं तेषामपि सेवकाः प्रवर्तन्ते। अन्योऽपि लोकः सर्वोऽपि स्ववल्लभजनं नानाविधैर्वचनैर्वादयति परं न कोऽपि तेषां दोषमुद्घाटयति। अयं च पद्मप्रभोऽस्यां सभायामित्थं यदपि तदप्युत्कण्ठं वदन् सत्स सर्वजनप्रत्य-

१ °मुपच्छाल° आदर्शे।

नीकतां प्रकाशयति'। तदनन्तरम् 'अयमाचार्यो लोकाचारानुसारेण युक्तं भाषते, पद्मप्रभश्च वैलक्ष्यात् पैशून्यं प्रकटयती'ति विचिन्त्य श्रीपृथ्वीराजेनोक्तम्–'जनार्दन-विद्यापतिप्रभृतयः पण्डितमिश्राः! सावधानीभूय यूयमनयोः परीक्षां कुरुत, यथा यो महाविद्वान् भवति तस्मै जयपत्रं दीयते सत्कारश्च क्रियते'। पण्डितैरुक्तम्–'देव! तर्कविद्याविषये महाक्षुण्णमतिराचार्य इति परीक्षितम्, इदानीं युष्मदादेशात् साहित्यविषये परीक्षां कुर्मः। पण्डितमिश्रौ! युवां श्रीपृथ्वीराजेन भादानकोर्वीपतिर्जित इति वर्णयतम्'। श्रीपूज्यैः क्षणमेकमेकाग्रीभूय–

> यस्याऽन्तर्बाहुगेहं बलभृतककुभः श्रीजयश्रीप्रवेशो,
> दीप्रप्रासप्रहारप्रहतघटतटप्रस्तमुक्तावलीभिः।
> नूनं भादानकीयै रणभुवि करिभिः स्वस्तिकोऽपूर्यतोच्चैः,
> पृथ्वीराजस्य तस्यातुलबलमहसः किं वयं वर्णयामः॥ [२९]

इति वृत्तं पठित्वा व्याख्यातम्। पद्मप्रभेणाऽपि लाघवभीरुणा पौर्वापर्यमनालोच्य शीघ्रं वृत्तं पठितम्। श्रीपूज्यैरुक्तम्–'वृत्तं चतुष्पदमेव दृष्टं श्रुतं किमेतत् पञ्चपदं कृतम्?' सभ्यानां च तत्पठिते वृत्ते पञ्चापशब्दा दर्शिताः। ईर्ष्यावशात् तेनाप्युक्तम्–'पण्डितमिश्रा! यस्यान्तर्बाहुगेहमित्यादिवृत्तमाचार्येणेदानीं न कृतं पूर्वपठितमेव पठितम्'। पण्डितैरुक्तम्–'स्थिरीभव ज्ञायते लक्षम्'। 'आचार्य! श्रीपृथ्वीराजसभामण्डपं गद्यबन्धेन वर्णय'। श्रीपूज्या मनसि सभावर्णनं कृत्वा खटिकया भूमौ लिखितुं प्रवृत्ताः, यथा–'चञ्चन्मेचकमणिनिचयरुचिररचनारचितकुट्टिमोच्चरन्मरीचिप्रपञ्चखचितदिक्चक्रवालम्, सौरभभरसम्भृतलोभवशवम्भ्रम्यमाणझङ्कारभृतभुवनभवनाभ्यन्तरभूरिभ्रमरसम्भृतविकीर्णकुसुमसम्भारविभ्राजमानप्राङ्गणम्, महानीलश्यामलनीलपट्टचेलोल्लसदुल्लोचाञ्चललम्बमानानिलविलोलबहलविमलमुक्ताफलमालातुलितजलपटलाविरलविगलदुज्ज्वलसलिलधारम्, दिग्विक्षिप्तबलक्षचक्षुःकटाक्षलक्षविक्षेपक्षोभितकामुकपक्षासुक्तमौक्तिकाद्यनर्घपञ्चवर्णनूतनरत्नालङ्कारविसरनिःसरकिरणनिकुरुम्बचुम्बिताम्बरारब्धनिरालम्बनविचित्रकर्मप्रवित्वत्कुसुमायुधराजधानीविलासवारविलासिनीजनम्, क्वचिच्चूताङ्कुररसास्वादमदकलकण्ठकलरवसमाननवगानगानकलाकुशलगायनजनप्रारब्धललितकाकलीगेयम्, क्वचिच्छुचिचरित्रचारुवचनरचनाचातुरीचञ्चुनीतिशास्त्रविचारविचक्षणसचिवचक्रचर्च्यमाणाचारानाचारविभागम्, क्वचिदासीनोद्दामप्रतिवाद्यमन्दमदभिदुरोद्यदनवद्यहृद्यसमग्रविद्यासुन्दरीचुम्ब्यमानायदातवदनारविन्दकोविदवृन्दारकवृन्दम्, उद्धतकन्धरविविधमागधवर्ण्यमानोद्धुरधैर्यशौर्यौदार्यवर्धिष्णु, सुधाधामदीधितिसाधारणयशोराशिधवलितवसुन्धराभोगनिविश्यमानसामन्तचक्रम्, प्रसरन्नानामणिकिरणनिकरविरचितवासवशरासनसिंहासनासीनदोर्दण्डचण्डिमाडम्बरखण्डिताखण्डवैरिभूमण्डलनमन्मण्डलेश्वरपटलस्पर्धोद्धटकिरीटतटकोटिसंकटविघटितविसंकटपादविष्टरभूपालम्; अपि चोद्यानमिव पुन्नागालङ्कृतं श्रीफलोपशोभितं च, महाकविकाव्यमिव वर्णनीयवर्णाकीर्णं व्यञ्जितरसं च, सरोवरमिव राजहंसावतंसं पद्मोपशोभितं च, पुरन्दरपुरमिव सत्या(?)धिष्ठितं विबुधकुलसङ्कुलं च, गगनतलमिव लसन्मङ्गलं कविराजितं च, कान्तावदनमिव सदलङ्कारं विचित्रचित्रं च'। अत्रान्तरे पण्डितैरुक्तम्–'आचार्य! समर्थय वर्णनं स्थालीपुलाकन्यायेन, ज्ञायते युष्माकं शक्तिः'। तदनन्तरं श्रीपूज्यैः–'एवंविधं श्रीपृथ्वीराजसभामण्डपमवलोक्य कस्य न चित्रीयते चेतः'–इति समर्थनं कृतम्। पुनरपि वाचयित्वा विस्तरेण व्याख्यातं च। श्रुत्वा च पण्डितैर्विस्मयवशान्निजशिरो धूनितम्। पद्मप्रभेणोक्तम्–'पण्डितमिश्राः! एतदपि कादम्बर्यादिकथासम्बन्धि सम्भाव्यते'। पण्डितैरुक्तम्–'मूर्ख! कादम्बर्यादिकथाः सर्वा अस्माभिर्वाचिताः सन्ति, अतस्त्वं मौनं कुरु। मा भारयासद्धस्तेन स्वं मुखं धूलिभिः'।

५०. पूज्यानुद्दिश्योक्तम्–'आचार्य! प्राकृतभाषया गाथाबन्धेन श्लेषालङ्कारेण श्रीपृथ्वीराजसत्कान्तःपुरसुभटौ वर्णय'। श्रीपूज्यैर्मुहूर्तमेकं चिन्तयित्वोक्तम्–

वरकरवाला कुवलयपसाहणा उल्लसंतसत्तिलया।
सुंदरिविंदु व्व नरिंद! मंदिरे तुह सहंति भडा॥ [३०]

इति गाथाया विस्तरेण व्याख्याने च श्रीपूज्यमुखसम्मुखमतिकुतूहलात् सकलमपि लोकमवलोकमानमवलोक्य वैलक्ष्यात् पद्मप्रभेणोक्तम्–'आचार्य! मया सह वादमारभ्येदानीमन्यतराणामग्रे आत्मानं भद्रं भावयसि?' श्रीपूज्यैश्च नन्दिनीनाम्ना छन्दसा–

पृथिवीनरेन्द्र! समुपाददे रिपोरवरोधनेन सह सिन्धुरावली।
भवतां समीपमनुतिष्ठता स्वयं नहि फल्गुचेष्टितमहो! महात्मनाम्॥ [३१]

इदं नवं वृत्तं पठित्वोक्तम्–'पद्मप्रभ! किमिदं छन्दः?' पण्डितैरुक्तम्–'आचार्य! अनेनाज्ञानेन सह ब्रुवाणस्त्वमात्मानमेव केवलं क्लेशयति न फलं किञ्चिद्भविष्यति। तथाऽऽचार्य! खड्गबन्धेन चित्रकाव्यं कुरु'। तदनन्तरं श्रीपूज्यैः खटिकया भूमौ रेखाकारं खड्गं कृत्वा तात्कालिकम्–

लसद्यशःसिताम्भोज! पूर्णसम्पूर्णविष्टप!।
पयोधिसमगाम्भीर्य! धीरिमाधरिताचल!॥ [३२]
ललामविक्रमाक्रान्तपरक्ष्मापालमण्डल!।
लब्धप्रतिष्ठ! भूपालावनीमव कलामल!॥ [३३]

इत्येवंरूपश्लोकद्वयाक्षरलिखनेन भरितम्। तच्च चित्रकाव्यं वाचयित्वाऽतिहृष्टैः पण्डितैः प्रशस्यमानान् श्रीपूज्यान् दृष्ट्वाऽमर्षवशादाह पद्मप्रभः–'पण्डितमिश्रा! द्रम्मसहस्रमेकं दातुमहमपि समर्थो वर्तेऽतो मामपि प्रशंसयत'। मण्डलेश्वरकइमासेनोक्तम्–'रे मुण्डिक! श्रीपृथ्वीराजसमक्षं यदपि तदपि ब्रुवाणस्त्वमात्मानं गले ग्राहयसि'। राज्ञोक्तम्–'पण्डितमिश्रा! एनमपि वराकं समदृष्ट्या वादयत'। तैरुक्तम्–'देव! यदि गोरूपः किमपि वेत्ति तदैषोऽपि वेत्ति'। राज्ञोक्तम्–'मूर्खाऽपि दृष्ट्या ज्ञायते आचार्यो विद्वान्, परमस्मत्सभायां न्यायमय्यां वचनीयता यथा न भवत्यतः कारणात् पद्मप्रभोऽपि सर्वविषये युष्माभिः परीक्षयितव्यः'। पण्डितैरुक्तम्–'गोस्वामिन्! पद्मप्रभः काव्यं कर्तुं न जानाति, आचार्यपठिते वृत्ते छन्दो नोपलक्षयति, आचार्येण तर्करीत्या वामावर्त्तारात्रिकावतारणे स्थापिते प्रत्युत्तरं किमपि न दत्तवान्, तर्कमार्गमपि न परिछिनत्ति, केवलं विरूपं भाषितुं वेत्ति, तथापि युष्मन्निरोधाद् विशेषेण समदृष्ट्या प्रक्ष्यामः'। 'आचार्य! पण्डितपद्मप्रभ! युवाम्–

"चकर्त दन्तद्वयमर्जुनं शरैः क्रमादमुं नारद इत्यबोधि सः।"

इति समस्यां पूरयतमिति। क्षणादेव श्रीपूज्यैरुक्तम्–

चकर्त दन्तद्वयमर्जुनं शरैः क्रमादमुं नारद इत्यबोधि सः।
भूपालसन्दोहनिषेवितक्रम! क्षोणीपते! केन किमत्र संगतम्॥ [३४]

–इति। सभ्यैरुक्तम्–'आचार्य! न किमपि लभ्यते, ईदृशया समस्यया पूरितया; यदस्माभिरसंगत्युत्तारणाय युवां पृष्टौ, त्वया च सैव समर्थितेति। तथा सरलकाव्यादेतदेव समस्याया दुःस्थत्वं यदसांगत्यमपनीयते'। पूज्यैरुक्तम्–'पण्डितमिश्रा! एवमपि समस्या पूर्यत एव; यतः श्रीभोजदेवसभायां केनाप्यागन्तुकपण्डितेन–

"सा ते भवाऽनुसुप्रीनाऽव्ययचित्रकनागरैः। आकाशेन भका यान्ति"........

इति समस्यापादत्रयं कथितम्; 'देव! किं केन संगतम्' इति चतुर्थपादप्रक्षेपेण श्रीभोजराजसत्कपण्डितेन पूरिता'। पण्डितैरुक्तम्–'एवमपि पूर्यत एव, यदि पद्मप्रभसदृशः कोऽपि पूरको भवति; युष्मादृशानां त्वेवंविधकाव्य-

शक्तियुक्तानां न युज्यत ईदृशीं समस्यां पूरयितुमिति'। तदनन्तरं श्रीपूज्यैः क्षणमेकं विमृश्योक्तम्–

चकर्त दन्तद्वयमर्जुनः शरैः कीर्त्या भवान् यः करिणो रणाङ्गणे।
दिदृक्षया यान्तमिलाप दूरतः क्रमादमुं नारदमित्यबोधि सः॥ [३५]

इत्येतद्व्याख्यानावसाने च विस्मयरसपरवशैः पण्डितैरुक्तम्–'आचार्य! भगवती सरस्वती त्वय्येवैकस्मिंस्तुष्टा, यदेवं चिन्तितान् पदान् ददाति'। पार्श्वोपविष्टश्रीजिनमतोपाध्यायेनोक्तम्–'पण्डितमिश्राः! सत्यमेतद् यदाचार्यविषये परमेश्वरी श्रीवाग्देवी प्रसन्नाऽभूदिति, कथमन्यथैषा भगवती निजपुत्रैर्युष्माभिः सहाचार्यस्य साङ्गत्यमकारयत्'। पण्डितैरुक्तम्–'पद्मप्रभ! त्वमपि किमपि ब्रूहि'। स प्राह–'क्षणमेकं प्रतीक्षध्वं चिन्तयन्नस्मि'। तैश्च स–'षण्मासान् यावच्चिन्तयेरि'त्युपहसितः। तथा भणितम्–'सर्वाधिकारिन्! मण्डलेश्वरकइमास! आचार्यसदृशः कोऽपि विद्वान् दृष्टः?' स प्राह–'अद्याग्रतो न दृष्टः'। अङ्गुल्या निजतुरङ्गमान् दर्शयता राज्ञोक्तम्–'आचार्य! परतः पश्य पश्येत्यमी पट्टघोटकाः केन कारणेनोत्पतन्ति?' श्रीपूज्यैर्विमृश्योक्तम्–'शृणु महाराज!

ऊर्ध्वस्थितश्रोत्रवरोत्तमाङ्गा जेतुं हरेरश्वमिवोद्धुराङ्गाः।
खमुत्प्लवन्ते जवनात्तुरङ्गास्तवाऽवनीनाथ! यथा कुरङ्गाः॥ [३६]

एतदर्थश्रवणे च प्रसन्नवदनं राजानं दृष्ट्वा पण्डितैरुक्तम्–'आचार्य! उदयगिरिनाम्नि हस्तिन्यध्यारूढः कीदृशः पृथ्वीराजः शोभत इति वर्णय'। पूज्यैर्हृदये विमृश्योक्तम्–

विस्फूर्जद्दन्तकान्तं लसदुरुकटकं विस्फुरद्धातुचित्रं,
पादैर्विभ्राजमानं गरिमभृतमलं शोभितं पुष्करेण।
पृथ्वीराजक्षितीशोदयगिरिमभिविन्यस्तपादो विभासि,
त्वं भास्वान् ध्वस्तदोषः प्रबलतरकराक्रान्तपृथ्वीभृदुच्चैः॥ [३७]

इति वृत्तार्थं श्रुत्वा प्रसाददानाभिमुखे राजनि सति पण्डितैरुक्तम्–'देव! इतः स्थानाच्चतुर्दिक्षु योजनशतमध्ये ये केचन विद्वांसो विद्याबाहुल्यस्फुटदुदरोपरिदत्तसुवर्णपट्टाः श्रूयन्ते तेभ्यः सर्वेभ्य एव लक्षणस्मृत्या साहित्यपरिचयेन तर्काभ्यासेन सिद्धान्तावगत्या लोकव्यवहारपरिज्ञानेनायमेवाचार्यः समधिकः। किम्बहुना, सा विद्यैव नास्ति याऽस्य मुखाम्भोजे सुखासिकया न विलसति'। समस्यामपूरयित्वाऽपि पद्मप्रभेणोक्तम्–'महाराज! केषांचिन्मानुषाणां पार्श्वे विद्या असन्त्य एव भद्राः, यतस्ते तद्विद्याबलेन लोकैः सह निरन्तरं कलहायमानाः सकलमपि जगदुत्सन्नयन्ति। यदुक्तम्–

विद्या विवादाय धनं मदाय प्रज्ञाप्रकर्षोऽपरवञ्चनाय।
अभ्युन्नतिर्लोकपराभवाय येषां प्रकाशो तिमिराय तेषाम्॥ [३८]

श्रीपूज्यैरुक्तम्–'भद्र पद्मप्रभ! त्वदग्रे किंचिदभिहितं भणामि मग्नस्त्वं मा रुषः'। तेनोक्तम्–'भण महानुभाव!' 'इत्थमशुद्धं वृत्तादिकं पठन्तमेकमपि यतिनं दृष्ट्वा सर्वोऽपि मिथ्यादृष्टिलोको–अहो! एते श्वेतपटाः शुद्धमपि पठितुं न जानन्ति किमन्यज्ज्ञास्यन्तीत्युपहसति–अतः कारणादस्मिन् वृत्तेऽध्य पश्चाद्भवता 'प्रकर्षः परवञ्चनाये'ति 'प्रकाशस्तिमिराये'ति च पठनीयम्। तथाऽस्मिन्प्रस्तावे 'विद्या विवादाये'त्यादिसुभाषितमसम्बद्धमुक्तम्, यतो धर्मशील! किमस्माभिरुक्तं यत्त्वमस्माभिः सह वादं गृहाण, किं वा त्वयैवासद्भक्तश्रावकाणामग्रे कथितं यदहो! अत्रानयत स्वगुरुं यथेदानीमपि जयामीति'। स स्वस्कन्धास्फालनपूर्वं प्राह–'मया कथितम्'। पूज्यैरुक्तम्–'कस्य शक्त्या?' स प्राह 'स्वशक्त्या।' पूज्यैरुक्तम्–'इदानीं सा किं काकैर्भक्षिता?' स प्राह–'नहि नही'ति। पूज्यैरुक्तम्–'तर्हि क्व गता?' स

प्राह–'मम भुजयोर्मध्ये वर्तते, परमवसरमन्तरेण न प्रकाश्यते' । पूज्यैरुक्तम्–'अवसरः कदा भविष्यति ?' । स प्राह–'इदानीमेव' । 'तर्हि किमिति विलम्बः क्रियते ?' स प्राह–'राजानमालाप्य स्वशक्तिं स्फोरयिष्ये' । पूज्यैरुक्तम्–'वेगं कुरु' । तत्पश्चात् पद्मप्रभः स्वचेतस्यनेनाचार्येण निजशरीरसौभाग्येन वचनचातुर्येण विद्याबलेन वशीकरणादिमन्त्रप्रयोगेण वा सर्वोऽपि राजलोकः स्वात्मनि सानुरागी कृतः, मया पुनरात्मभक्ताः श्रावका अपि तादृशराजप्रसादवर्णनोद्भूतविकाशमुखा अपि श्याममुखीकृताः, किं क्रियते ? कोऽप्युपायो न फलति; भवतु, तथापि "पुरुषेण सता पुरुषकारो न मोक्तव्यः" इति न्यायादिदानीमपि यदि किञ्चित्साहसं कृत्वाऽऽवयोर्द्वयोरपि समश्रीकता भवति तदाऽस्मिन् देशे स्थातुं शक्यतेऽन्यथा महान्तं लोकोपहासमसहमानानामस्माकं सश्रावकाणां देशत्याग एव भविष्यतीति विभाव्य, राजानमुद्दिश्य चोक्तवान्–'महाराज ! अहं षट्त्रिंशत्संख्यदण्डनायकायुधप्रकाराभ्यासेन मल्लविद्यायां कृतश्रमो वर्तेऽतो मया सममेनमाचार्यं बाहुयुद्धेन योधयेति' । राजा च दर्शनिनामाचारानभिज्ञतया कौतुकदिदृक्षया च श्रीपूज्यमुखसंमुखमवलोकितवान् । पूज्यैश्चाकारेङ्गितादिभिः श्रीपृथ्वीराजाभिप्रायमनुमीयोक्तम्–'महाराज ! बाहुयुद्धादिकं दिक्करिकाणामेव क्रीडा, यतो गलागलिलग्ना बालका एव शोभन्ते न महान्तः, शस्त्राशस्त्रि युध्यमाना राजपुत्रा एव शोभन्ते न वणिजः, दन्तकलहेन युध्यमाना रण्डा एव शोभन्ते न राजदाराः, तत्कथमस्य वचनमुपादेयं स्यात् ? । पण्डिताश्चोत्तरप्रत्युत्तरदानशक्त्या परस्परं स्पर्धमानाः शोभन्ते' । अत्रान्तरे पण्डितैरुक्तम्–'देव ! वयमपि पाण्डित्यगुणेन युष्माकं पार्श्वाद् वृत्तिं लभामहे न मल्लविद्याकुशलतया' । पूज्यैरुक्तम्–'पद्मप्रभ ! अस्यां सभायामेवं ब्रुवाणः स्वदांष्ट्रिकयाऽपि न लज्जसे ?; महाराज ! यद्यस्य शक्तिरस्ति तदेषोऽस्माभिः सह शुद्धया प्राकृतभाषया संस्कृतभाषया मागधीभाषया पिशाचभाषया शूरसेनीभाषया शुद्धयाऽपभ्रंशभाषया गद्येन वा पद्येन वा लक्षणेन वा छन्दसा वाऽलङ्कारेण वा रसविचारेण वा नाटकविचारेण वा तर्कविचारेण वा ज्योतिर्विचारेण वा सिद्धान्तविचारेण वा ब्रूताम्, यदि पश्चाद् वयं भवामस्तदा यादृशानेष कथयति तादृशा एव वयम्, परं यदेषोऽस्माकं हस्तेन लोकविरुद्धं स्वदर्शनविरुद्धं मल्लयुद्धादि कारयति तत्कथमपि न कुर्मः । न चास्माकं तावन्मात्राकरणे लाघवम्;–यतः कदाचित् कोऽपि हालिकादिः कथयिष्यति–यदि यूयं पण्डितास्तदा मया सह हलकर्षणादि कुरुध्वमिति–तदा किमस्माभिस्तत्कर्तव्यम्, अकरणे च किमस्माकं पाण्डित्यं याति ? । तथा महाराज ! यद्येष यथा तथाऽस्मान् जेतुं वाञ्छति तदाऽस्माकं पार्श्वात् क्लिष्टं काव्यं प्रश्नोत्तरं वा गुप्तक्रिया-कारकादिकं वा पृच्छतु । अथवा स्वेच्छानुसारकर्तव्याक्षरसन्निवेशरूपया कल्पितया लिप्या किञ्चिद्वृत्तं सभ्यकर्णे कथयित्वा खटिकया भूमौ लिखतु, यद्यदसीयहृदयस्थं वृत्तं न निष्काशयामस्तदा हारितमेव । अथवा वृत्तस्य केवलान् स्वरान् लिखतु केवलानि व्यञ्जनानि वा लिखतु, यदि केवलैस्तैरस्य हृदयस्थं वृत्तं न निष्काशयामस्तदापि हारितमेव । तथैकवारश्रुतवृत्ताक्षराणि पश्चानुपूर्व्येण लिखतु, किं वा वयं लिखामः । तथा वर्तमानकालवर्तिसांगिकगीयमाननवनवरागनामकथनपूर्वकं तात्कालिककाव्येनाऽन्यनिर्दिष्टकोष्ठकाक्षरप्रक्षेपेण कोष्ठकानेष पूरयतु, किं वा वयं पूरयामः' । राज्ञोक्तम्–'आचार्यमिश्रा ! यूयं सर्वान् रागान् परिच्छिन्त ?' पूज्यैरुक्तम्–'महाराज ! यदि केनापि पण्डितेन सह वादव्यवस्था निष्पन्ना स्यात् तदा क्रियते वार्ता काऽपि, अनेन पुनरज्ञानेन मानुषेण सह खिद्यमानानां केवलमात्मनः कण्ठशोष एवेति' । राज्ञोक्तम्–'आचार्य ! मा विषाद, यथोक्तकोष्ठकपूर्तिरीतिनिदर्शनेन यथाऽस्माकं कुतूहलं पूर्यते तथा कुरु' । पूज्यैरुक्तम्–'इदृशं किमपि यदि कथयत तदाऽस्माकमपि शरीरे सुखं भवति' । तत्कालकारितसांगिकगायमानवंशोत्थितध्वनिरागभणनपूर्वकं तत्कालकृतश्रीपृथ्वीराजन्यायप्रियत्वगुणवर्णनरूपश्लोकाक्षराणि सर्वाधिकारि-स्वमासनिर्दिष्टं कोष्ठके प्रक्षिपद्भिः श्रीपूज्यैस्तस्यां सभायां कस्य कस्य मनःपङ्कजं आश्चर्यलक्ष्मीः सुखासिकया न स्थापिता । अतिप्रमचेन श्रीपृथ्वीराजपृथ्वीपतिनोक्तम्–'आचार्य ! जितं त्वया, विकल्पः कोऽपि मनसि न कार्यः । मत्पौपधर्मप्रमाणात् महस्रसंख्यदेशस्वामित्वं प्राप्तं मया महाकिमहस्रतुरङ्गमानामाधिपत्यं च; तथा न कोऽपि

प्रतिपक्षो मदीयां भूमिकां क्रमितुं शक्नोति यस्त्वमस्मिन् देशे वससीति। तथाऽऽचार्य! मया न ज्ञातं यस्त्वमेवंविधं रत्नं वर्तसे, अतो यत्किञ्चिदनुचितमाचरितं तत्क्षन्तव्यमि'ति वदता हस्तौ योजितौ। पूज्यैश्च हर्षवशाद्-

यन्भ्रम्यन्ते तवैतास्त्रिभुवनभवनाभ्यन्तरं कीर्तिकान्ताः,
स्फूर्जत्सौन्दर्यवर्या जितसुरललना योषितः संघटन्ते।
प्राज्यं राज्यप्रधानप्रणमदवनिपं प्राप्यते यत्प्रभावात्,
पृथ्वीराज! क्षणेन क्षितिप! स तनुतां धर्मलाभः श्रियं ते॥ [२९]

इत्याशीर्वाददानपूर्वकं राजवचनं बहुमानितम्। एवंविधं समाचारमवलोक्य वैलक्ष्यात् पद्मप्रभेणोक्तम्-'महाराज! एतावन्तं कालं समेकः समदृष्टिरस्यां सभायामासीः, इदानीं च त्वमपि स्वपरिवारानुवृत्त्याऽऽचार्ये पक्षपातं कृतवान्'। राज्ञोक्तम्-'पद्मप्रभ! किमसद्धस्तेन कारयसि?, यदि तव शरीरे काऽपि पाण्डित्यकलाऽस्ति तदाऽऽचार्येण सह ब्रूहि, वयं न्यायं दापयिष्यामोऽथ नास्ति तदुत्तिष्ठ स्वप्रतिश्रये गच्छेति'। स प्राह-'महाराज! न्यायवत्यां पृथ्वीराजसभायां गत्वा यः कश्चित् कलाकौशल्येनाऽऽत्मानं बहु मन्यते स मया सह ढौकतामित्याह्वानपूर्वकमङ्गुलीमूर्ध्वं करिष्य इत्याशयता मया षट्त्रिंशत्संख्यदण्डनायकायुधप्रकारा अभ्यस्ताः, अतो यद्यद्य तव सभायामेषा कला फलवती न भविष्यति तदा कदा भविष्यतीति?'।

५१. अत्रान्तरे श्रीपृथ्वीराजातिवल्लभेन मण्डलीकराणकसमकक्षेण श्रीजिनपतिसूरिपादभक्तेन श्रे० रामदेवेनोक्तम्-'देव! शृणुत वार्तामेकाम्-श्रे० वीरपालपुत्रजन्मपत्रिकानुसारेण ज्ञायते, तव पुत्रो राजमान्यो द्रव्याढ्यो दानप्रियश्च भविष्यतीत्यादिज्योतिषिकवाक्यश्रद्धया मदीयः पुत्रो राजसभायां सञ्चरन्मा केनाप्यवहेल्यतामित्यभिप्रायेणाबाल्यकालादहमात्मविप्रेण पण्डितहस्तेन द्विसप्ततिः कला अभ्यासितः। अन्यासां च घनानां कलानां फलं मया दृष्टं किन्तु युष्मत्प्रसादान्मम संमुखं वक्रया दृष्ट्या केनापि नावलोकितम्, अतो बाहुयुद्धस्य फलं न दृष्टम्; इदानीं च मम पुण्याकृष्टस्तव सभायां पद्मप्रभः समागतोऽतो यदि युष्माकं निरोधो भवति पद्मप्रभस्य च संमतं भवति तदा बाहुयुद्धकलायाः फलमालोक्यते'। केलिप्रियेण राज्ञोक्तम्-'श्रेष्ठिन्! वेगं कुरु, ऊर्ध्वो भव पद्मप्रभ!, त्वमपि स्वकलायाः फलं प्राप्नुहीति'। तदनन्तरं द्वावपि मल्लग्रन्थिं बद्ध्वा गलागलि योद्धुं प्रवृत्तौ। क्षणान्तरे श्रे० रामदेवेन निहत्य भूमौ पातितः पद्मप्रभः। 'श्रेष्ठिन्! श्रेष्ठिन्! अस्य कर्णौ लम्बौ स्तो मा त्रोटये'ति श्रीपृथ्वीराजवचनं निषेधकमप्युपहासपरतया विधायकं मत्वा तत्कर्णपालीं हस्तेन गृहीत्वा पूज्याभिमुखमवलोकितवान् रामदेवः। पूज्यैश्च स्वशिरोधूननेन 'प्रवचनोड्डाहं मा कृथा'इत्यादिवचनेन च निषिद्धः। लोकैश्च कलकलं कृत्वा परस्परमहमिकयोक्तम्-'यथाऽहो मया प्रथममेव कथितं यच्छ्रेष्ठी जेष्यति; यदनेन सावष्टम्भं पद्मप्रभाभ्यस्तषट्त्रिंशद्दण्डकलातो द्विगुणकलाभ्यासः कथितः'-इत्यादि। राजादेशात् पद्मप्रभं मुक्त्वोत्थितः श्रे० रामदेवः। सोऽपि चोत्थाय धूलिमलिनं निजं वस्त्रादि प्रास्फोटयत्, राजपुत्रैश्च श्रीपृथ्वीराजाक्षिसंज्ञानुसारेण गले गृहीत्वा पर्यस्तः स वराकः। तत्पश्चात्तस्य पततः सोपानपङ्क्तिसंसक्त्या भग्नं मस्तकमधस्तनसोपानसमीपे क्षणं मूर्च्छा समागता। केनापि वण्ठेन प्रच्छादिकाऽपहृतेति तादृशमसमञ्जसं दृष्ट्वा जिनशासनलाघवभीरुभिः श्रीजिनपतिसूरिभिर्दयापरिणामाचरक्षणादेवाऽऽत्मभक्तश्रावकहस्तेन श्वेता प्रच्छादिका दापिता तस्य। तथैकेन च वण्ठेन हस्तकादानपूर्वकमूर्ध्वीकृत्य जितमस्माकं ठक्कुरेणेति वदता द्वितीयहस्तेन दत्ता तन्मस्तके टकरा। तदनन्तरं सहस्रसंख्यघिंटमार्यैर्लोकैस्तन्मस्तके टकरां ददद्भिर्धवलगृहाद्बहिर्निष्कासितः। श्रीपूज्यैश्च श्रीपृथ्वीराजहस्ते महाश्वेतवह्निकापट्टचतुष्कोणखण्डलघुहस्तचित्रकरलिखितमहाप्रधानछत्रबन्धपटो दत्तः। राजा पुनरतिकुतूहलाच्छत्रमवलोक्य-

पृथ्वीराय ! पृथुप्रतापतपन प्रत्यर्थिपृथ्वीभुजां,
का स्पर्धा भवताऽपराद्धर्य(र्घ्य)महसा सार्धं प्रजारञ्जने।
येनाऽऽजौ हरिणेव खड्गलतिकासंपृक्तिमत्पाणिना,
दुर्वाराऽपि विदारिता करिघटा भादानकोर्वीपतेः॥ [४०]

इत्येतच्छत्रबन्धवृत्तं वाचितं पण्डितैश्चोभयथाऽपि व्याख्यातम्। तथा तस्मिन्नेव पटे चित्रकरलिखितराजहंसिकायुगलोपरिस्थितम्–

कयमलिणपक्खसंगहमसुद्धवयणं मलीमसकमं व।
माणसहियं पिअवरं परिहरियं रायहंसकुलं॥ [४१]
परिसुद्धोभयपक्खं रत्तपयं रायहंसमणुसरइ।
तं पुहविरायरणसरसि जयसिरी रायहंसि व्व॥ [४२]

इति गाथाद्वयं वाचितं स्वयं पूज्यैर्महाविस्तरेण व्याख्यातं श्रुत्वा चाऽतिप्रमोदात् 'कमेकमस्याचार्यस्याभीष्टं करोमी'ति चिन्तयित्वा राज्ञोक्तम्–'आचार्य ! ममाथवा निजगुरोः शपथोऽस्ति ते, यदि त्वमात्मनोऽभीष्टमसम्पद्यमानं ममाग्रे न कथयसि; यस्मिन् कस्मिन् वा देशे यस्मिन् कस्मिन् वा नगरे तावकं मनो रमते तदुपरि गृहाण पत्तलामिति'। श्रीपूज्यैरुक्तम्–'महाराज ! शृणुत, निजभुजोपार्जितलक्षसंख्याद्रव्यः सा० माणदेवनामा श्रावकः श्रीविक्रमपुरे वसन्नस्ति। स च मम गृहस्थसम्बन्धेन पितृव्यो भवति। तेन च मम व्रतग्रहणसमयेऽत्यादरेण भणितम्–"वत्स ! कथमहमस्मीयान् जातकाननेकधा विलासान् कुर्वतो द्रक्ष्यामीत्यभिप्रायेणानेकानि कष्टानि विपह्य मयैतावानर्थ उपार्जितः। अतो वत्स ! किमेवं त्वयाऽऽत्ममनसि विकल्पितं यत्त्वं गृहस्थवासादुद्विग्न इव लक्ष्यसे ?। कथय किं द्रम्मान् सहस्राणि दश विंशतिं दत्त्वा देशान्तरे कस्मिंश्चित् प्रेषयाम्यत्रैव वा हट्टं मण्डयामि कन्यकां वा कामपि परिणाययामि, अन्यो वा यः कश्चित्तव चेतसि मनोरथो वर्तते तं कथय यथा पूरयामीत्यादि"–मया तु तत्सर्वमवगणय्य सगुरूपदेशश्रवणोच्छलितपरमसंवेगात् सर्वसङ्गपरित्यागः कृतः। सोऽहं कथमद्य युष्माकं देशाय वा नगराय वा स्पृहयामीति'। राज्ञोक्तम्–'तर्ह्यन्यतरं किञ्चित्कार्यं भण, यथाऽहमात्मोत्पन्नं हर्षं सन्मानयामि'। उत्सुकीभूय श्रे० रामदेवेनोक्तम्–'देव ! जयपत्रार्पणविषये प्रसादः क्रियताम्'। राज्ञोक्तम्–'श्रे० रामदेव ! अद्य रसमुत्सूरं बभूव, दिनद्वयमध्ये निजकार्येणाजयमेरावागमिष्यामि। तत्रागतः सन्निश्चयेन जयपत्रमर्पयिष्यामि'। श्रेष्ठिनोक्तम्–'देवनिरोपः प्रमाणम्, परमितः स्थानाद्यथाऽस्मद्गुरूणां महाविस्तरेणाजयमेरौ प्रवेशो भवति तथाऽऽदिशत'। राज्ञोक्तम्–'मण्डलेश्वर ! त्वया तथा कर्तव्यं यथा श्रे०रामदेवगुरवो महत्यां शोभायां भवन्त्यामजयमेरौ निजोपाश्रये प्रभूता भवन्ती'त्यादिशिक्षा कइमासस्य दत्ता।

५२. तदनन्तरं ततः स्थानादुत्थाय सहस्रसंख्यतुरङ्गमाधिरूढराजपुत्रानुगम्यमानमण्डलेश्वरकइमासप्रमुखराजप्रधानैः सह प्रीतिवार्तां कुर्वन्तः, स्वकर्णाभ्यामात्मीयकीर्त्तिं शृण्वन्तः, प्रभूतलोकदीयमानाशिषो गृह्णन्तः, श्रीपृथ्वीराजसत्के मेघाडम्बरनाम्नि छत्रे प्रभावनार्थं मस्तकोपरि ध्रियमाणे, पुरमध्ये स्थाने स्थाने रङ्गभरेण प्रेक्षणीयके निष्पद्यमाने, दाने च व्याप्रियमाणे, चचर्यां दीयमानायां, धवलेषु गीयमानेषु, श्रीगौतमस्वामिगणधरप्रमुखपूर्वजसत्कगुणगणप्रशंसनपूर्वकं बिरुदावलीर्ददत्सु भट्टलोकेषु, श्रीपृथ्वीराजसभायां श्रीजिनपतिसूरिभिर्जितः पण्डितपद्मप्रभ इत्याद्यर्थप्रतिबद्धासु तत्कालनिष्पन्नासु चतुष्पदीषु पठ्यमानासु, निःस्वानैः सह पञ्चशब्देषु वाद्यमानेषु, राजादेशान्नगरशोभया शोभिते श्रीअजयमेरौ चैत्यपरिपाटिपूर्वकं पौषधशालायां समागताः श्रीपूज्याः।

५३. दिनद्वयानन्तरं प्रतिज्ञातार्थनिर्वाहकः सबलवाहनो महाराजाधिराज-श्रीपृथ्वीराजः श्रीअजयमेरौ निजधवल-

गृहे समागत्य ततः स्थानाद्धस्तिस्कन्धाधिरूढेन जयपत्रेण सह पौषधशालायामागतो ददौ च जयपत्रं श्रीपूज्यानां हस्ते। पठितश्चाशिर्वादः श्रीपूज्यैः। श्रावकैश्च कारितं महावर्धापनकम्। तस्मिंश्च वर्धापनके श्रे० रामदेवेनात्मगृहात् पारुत्थद्रम्माः षोडश सहस्राणि व्ययीकृताः। सं० १२४० विक्रमपुरे आत्मना पञ्चदशैः श्रीपूज्यैर्गणियोगतपश्चक्रे। १२४१ फलवर्धिकायां जिणनागाजित–पद्मदेव–गणदेव–यमचन्द्राणां धर्मश्री–धर्मदेव्योश्च दीक्षा दत्ता। सं० १२४२ माघसुदि १५ श्रीजिनमतोपाध्याया देवीभूताः। सं० १२४३ खेटनगरे चतुर्मासी कृता। सं० १२४४ श्रीमदणहिलपाटकनाम्नि पत्तन इष्टगोष्ठ्यां वर्तमानायां वध्यायमभयकुमारमुक्तवान् भाण्डशालिकसंभवः–'अभयकुमार! तव स्वाजन्येन तव कोटिसंख्यद्रव्याधिपत्येन तव राजमान्यतया किमस्माकं फलम्? यच्चमसद्गुरून् श्रीउज्जयन्त-शत्रुञ्जयादितीर्थेषु यात्रां न कारयसि?' एवं प्रोत्साहितः सन् वध्यायोऽपि 'भाण्डशालिक! मा कांचिदनिर्वृतिं कृथाः, करिष्यामि सर्वं भद्रम्'–इत्युक्त्वा राजकुलं गतः। तत्र च महाराजाधिराजभीमदेवं राजप्रधानं जगद्देवनामानं प्रतीहारं च विज्ञप्याजयमेरुवास्तव्यखरतरसंघयोग्यं स्वयं लेखितराजादेशं गृहीत्वाऽऽत्मगृह आगतः। तदनन्तरं वध्यायेनात्मसमीपाकारितभाण्डशालिकसमक्षं राजादेशं खरतरसंघयोग्यं श्रीजिनपतिसूरियोग्यं स्वकीयं विज्ञप्तिकाद्वयं दत्त्वा प्रधानलेखवाहकः श्रीअजयमेरौ संघपार्श्वे प्रेषितः। श्रीपूज्या अपि राजादेशदर्शनाद् वध्यायश्रीअभयकुमारस्वरकनिहस्तिकाद्वयवाचनाच्च संघप्रार्थनया च श्रीअजयमेरुवास्तव्यसंघेन सह तीर्थवन्दनार्थं चलिताः।

५४. त्रिभुवनगिरौ यशोभद्राचार्यसमीपेऽनेकान्तजयपताका–न्यायावतारादिजैनतर्क–दशरूपकादिग्रन्थान् भणित्वा, श्रीपूज्यादेशात् त्रिभुवनगिरीयसंघेन सह, तर्कभणनोपष्टम्भकारकशीलसागर–सोमदेवयतिद्वयसहितौ पं० यतिपालगणि–धर्मशीलगणी तीर्थयात्रोपरि प्रस्थितानां श्रीपूज्यानां मिलित्वा कथयतः स्म, यथा–'प्रभो! श्रीयशोभद्राचार्येण युष्मदादेशात् प्रस्थितानामस्माकमग्रे कथितं यथा–"यदि यूयं कथयत तदहमपि युष्माभिः सह यात्रायामागच्छामि, यथा श्रीगूर्जरत्रायां सञ्चरतां श्रीपूज्यानामग्रे स्थितः काहलिक इव व्रजामि येन कोऽपि प्रतिमल्लः संमुखमपि स्थातुं [न] शक्नोति ममापि च निजगुरुबहुमानं कुर्वतो लघुतरः कर्मसञ्चयो भवतीति"–अस्माभिस्तु युष्मद्विरोधाभावाभिषिद्धः श्रीमदाचार्यः'। श्रीपूज्यैरुक्तम्–'रुचिरं कुर्वीध्वं यदि तमाचार्यमानयध्वम्। भोरिदानीमपि कथमपि स आगच्छति?' तैरुक्तम्–'प्रभो! इदानीं दूरदेशे वर्तते स इति नागच्छति'। तथा, यथा चतुर्दश सहस्राणि नदीप्रवाहा गङ्गाप्रवाहे मिलन्त्येवं विक्रमपुर–उचा–मरुकोट्ट–जेसलमेरु–फलवर्धिका–डिल्ली–वागड–माण्डव्यपुरादिनगरवास्तव्यभव्यलोकसंघा अहमहमिकया श्रीअजयमेरवीयसंघस्य मिलिताः। श्रीपूज्या अपि विद्यागुणेन तपोगुणेनाचार्यमन्त्रादिशक्त्या श्रावकलोकभक्त्या संसारविरक्त्या बृहस्पतिप्रायप्राणि(वाणी?)संसक्त्या स्थाने स्थाने प्रवचनप्रभावनां कुर्वन्तः श्रीसंघेन सह प्राप्ताश्चन्द्रावत्याम्।

५५. तत्र च संघमध्यस्थितरथप्रतिमावन्दनार्थं पञ्चदशभिः साधुभिः पञ्चभिराचार्यैश्च सह प्रामाणिकाः पूर्णिमापक्षीयाः श्रीअकलङ्कदेवसूरयः समागत्य रथप्रतिमास्नानमहोत्सवदर्शनार्थमिलितलोकमेलापकदर्शनाद् व्याघुट्य दूरदेशे वृक्षस्याधस्ताद् स्थिताः। श्रीपूज्यैश्च मानुषं प्रेष्य पृच्छापितास्ते, यथा–'आचार्यमिश्राः! केन कारणेन चैत्यवन्दनामकृत्वैव यूयं व्याघुट्य स्थिताः?' इति। तैरपि प्रेषितमानुषस्याग्रे कथितं यथा–'येऽत्राचार्याः सन्ति तेऽस्माभिः सह लघुवृद्धतया व्यवहारं करिष्यन्तीति?'। तेनाप्यागत्य पूज्यानामग्रे भणितम्। पूज्यैश्च–'करिष्यते व्यवहारः, शीघ्रमागच्छते'त्यादि भणितं तन्मुखेन तेषामग्रे। तदनन्तरं ते समागत्य ज्येष्ठानुक्रमेण वन्दनानुवन्दनादिकं सर्वं कृतवन्तः। अकलङ्कदेवसूरिभिरुक्तम्–'किं नामधेया आचार्यमिश्राः?' पार्श्वस्थितेन मुनिनोक्तम्–'श्रीजिनपतिसूरिनामानः श्रीपूज्याः'। तत्पश्चात्तैरुक्तम्–'आचार्यमिश्राः! केन कारणेनेदृशमयुक्तमात्मनाम कारितम्?'। पूज्यैरुक्तम्–'कथं ज्ञायतेऽयुक्तमेतदिति?' तैरुक्तम्–'व्यक्तमेव ज्ञायते; तथाहि जिनशब्देन सामान्यकेवलिन उच्यन्ते तेषां पतिस्तीर्थङ्कर एवेति

तीर्थङ्करनाम्नाऽऽत्मानं वादयन्तः परमेश्वराणां तीर्थङ्कराणां महतीमाशातनां कुरुध्वमिति। तस्माज्जिनपतिसूरिरिति नाम युक्तम्'। श्रीपूज्यैरुक्तम्–'आचार्यमिश्राः! स्यादेवं यदि युष्माकमेवैकं विवक्षितं प्रमाणीकुर्वन्ति विद्वांसः, परं तेऽग्रतः पश्चाच्च घनं विचारयन्त्यन्यथा तेषां प्रेक्षावत्ताहानिप्रसक्तेः। यौष्माकीणां चेदृशीं वाणीं दृष्ट्वा वयमेवं मन्यामहे यदुत युष्माभिर्लोकरूपात्रयैव केवलया...(?) ग्रन्थाभ्यासः परित्यक्तः। कथमन्यथा युष्माकं जिनपतिशब्द एवंविधा विप्रतिपत्तिरुत्पद्यते ?; यतो नहि लक्षणविद्यायामेक एव तत्पुरुषनामा समासो वर्णितः। सन्त्यन्येऽपि पञ्च समासा वर्णिताः। यदुक्तम्–

षट् समासा बहुव्रीहिर्द्विगुर्द्वन्द्वस्तथाऽपरः। तत्पुरुषोऽव्ययीभावः कर्मधारय इत्यमी॥ [४३]

तथाऽन्येनापि पण्डितेन चित्री(?) प्रकटनाय षट्समासनामनिबद्धाऽऽर्या कृतेयम्–

द्विगुरपि सद्वन्द्वोऽहं गृहे च मे सततमव्ययीभावः।
तत्पुरुष! कर्म धारय येनाहं स्यां बहुव्रीहिः॥ [४४]

तैरुक्तम्–'ततः किम्?' पूज्यैरुक्तम्–'योऽर्थः क्वाप्येकेन समासेन न घटते स तत्र द्वितीयेन घटिष्यते, अतः किमित्युत्तालीभूयायुक्तमित्युक्तम्'। तैरुक्तम्–'कथमन्येन समासेन जिनपतिरिति नाम युष्मासु सङ्गतिमङ्गति?' श्रीपूज्यैरुक्तम्–'शृणुत, जिनः पतिर्यस्यासौ जिनपतिरिति बहुव्रीहिसमासे क्रियमाणे को गुणः को वा दोषो भवतीति भणत'। तैरुक्तम्–'आचार्यमिश्रा! बहुव्रीहौ क्रियमाणे न कोऽपि दोषो भवति, स्वस्य जैनत्वख्यापनलक्षणो गुणश्च भवति। परमिदृश्या मनसि कल्पितया कष्टपिष्टिकया किमिति लोको व्यामोह्यते ?; प्राञ्जलमेव जिनपत्तिसूरिरिति नाम किमिति न क्रियते?' पूज्यैरुक्तम्–'येषां चेतसि लक्षणविद्या सम्यक् परिस्फुरति तेषामग्रे समं विषमं वा किमपि नास्ति। यतस्तेऽप्रधानशब्दानपि प्रधानशब्दत्वेन समर्थयन्ति, किं पुनः प्रधानशब्देषु प्रयुज्यमानेषु वाच्यम्'। पुनरपि तैरुक्तम्–'भवत्विदमेव, परं संघेन सह यात्रा क्वापि सिद्धान्ते साधूनां विधेयतया भणिताऽस्ति, यदेवं यूयं प्रस्थिताः?' पूज्यैरुक्तम्–'किमेवमुत्पन्नशापकं युक्ताऽन्ये विद्वांसः स्तोकं घनं वा सिद्धान्तभणितमनाश्रित्य धर्मकृत्ये प्रवर्तन्ते?' तैरुक्तम्–'आचार्य! अतिधृष्टा यूयं यद्यापि सिद्धान्तबलमालम्बत'। पूज्यैरुक्तम्–'ज्ञायते लमं केचिद्धृष्टाः केचिन्न धृष्टा इति'। तैरुक्तम्–'किं युष्माभिरेतैः सिद्धान्ता दृष्टा न द्वितीयैः?' पूज्यैरुक्तम्–'यदि द्वितीयैः सिद्धान्ता दृष्टा अभविष्यन् तदा ते निश्चितं नाभविष्यन्'। तैरुक्तम्–'आचार्यमिश्रा! व्रतिना सता संघेन सह तीर्थयात्रायां न गन्तव्यमित्यादीनि निषेधकवाक्यानि सिद्धान्ते किंवा वयं दर्शयामः, किंवा यूयं विधायकाक्षराणि दर्शयथ। अथवाऽस्तु दूरे सिद्धान्तः स्वकीयगुरोरेव वचांसि मा विस्मार्ष्ट। यतस्तेनोक्तम्–

पिंडिसमहिगयसुयत्थो संविग्गो विहियसुविहियविहारो।
कइयाऽहं पंदिस्सामि सामि तं पंमणयनयरे॥ [४५]

इत्यादि। पूज्यैरुक्तम्–'आचार्यमिश्राः! किमिति पुनःप्रायेण (?) कथ्यते यदस्यं सिद्धान्ताक्षराणि दर्शयाम इति? यतः सम्यक्त्विनस्तैरेव स्वीक्रियन्ते, यदि सिद्धान्तेऽप्यन्यत्वक्षराणि दृश्यन्ते, तानि पुनर्दर्शितान्यपि न प्रमाणीक्रियन्ते विद्वद्भिरिति निर्धर्मं सम्यक्त्विनोऽप्यम्। यानि पुनः सिद्धान्तमध्ये गन्तव्यक्षराणि तान्यस्माभिरपि दृष्टानि भविष्यन्तीति न तानि दर्शयितुं सम्यक्त्विनोऽस्माकं युक्तमिति'। तैरुक्तम्–'युष्माकमपि सिद्धान्तमतिमाश्रित्यैव वयं संघेन सह यात्रायां प्रवृत्ता इति वक्तुं न युक्तम्'। पूज्यैरुक्तम्–'इदमीदृगेव, यदि स्वयमपि वयं सिद्धान्तानुसारेण युष्मान् परिच्छेदयितुं न शक्नुमः परं युष्माभिरपि सामर्थ्यमुत्साह्य मात्सर्यानीभूय च भोक्तव्यम्। यद्यस्मदीया युक्तिः सिद्धान्तानुपातिनी भवेत् तदा मानतनीया, न पुनरन्तर्गुरोरन्याग्रहः कार्यः'। तैरुक्तम्–'प्रमाणमिति'। तदनन्तरं श्रीपूज्यैरुक्तम्–'आचा-

र्यमिश्रा ! आचार्यः स एव क्रियते येनानेके देशा दृष्टा भवन्त्यनेकदेशसम्बन्धिन्यश्च भाषा ज्ञाता भवन्तीति सिद्धान्तेऽस्ति। तैरुक्तम्-'अस्तीति'। श्रीपूज्यैरुक्तम्-'कार्यकारणेन लघुवयसोऽपि वयमाचार्यपदे च प्रवेशिता इत्यतोऽधुनाऽज्ञातदेशभाषापरिज्ञानार्थं संघेन सह प्रस्थितानामस्माकं तीर्थयात्रा यदि भवति तदा शङ्खो दुग्धभृतः, कस्तूरिका कर्पूरेण वासितेत्येकमुत्तरम्; तथा संघेन गाढतरं वयमभ्यर्थिता यदुत-प्रभो! अनेकाचार्याकुलोकसंकुलायां गूर्जरत्रायां तीर्थानि सन्ति, तानि च ज्योत्कर्तुं चलितानस्मान् दृष्ट्वा कश्चिदाचार्यकस्तीर्थयात्रानिषेधाय प्रमाणयिष्यति, तदा सिद्धान्तरहस्यापरिज्ञानाद्वैदेशिकत्वाच्चास्माभिर्न किमप्युत्तरं दातुं शक्यते; अतो मा जिनशासने लाघवमभूदिति यूयं यथा तथाऽस्माभिः सह तीर्थवन्दनार्थमागच्छत-इत्यादिसंघाभ्यर्थनया वयमागता इति द्वितीयमुत्तरम्। तथा साधूनां नित्यकृत्यव्याघातसंभावनया सिद्धान्ते संघेन सह यात्रा निषिद्धेति। यदा नित्यकृत्यव्याघातो भवति तदा न क्रियत एव। अस्मिंश्च संघ उभयकालप्रतिक्रमणब्रह्मचर्यनियमैकभक्ताद्यनेकाभिग्रहग्रहणपूर्वकतीर्थानि वन्दितुं श्रावकलोकश्चागतोऽस्तीति कथमस्माकमावश्यकादिनित्यकृत्यव्याघातसंभवः ?'-इत्याद्यनेकयुक्तिप्रतिपादनप्रमोदिताः श्रीअकलङ्कदेवसूरयः प्राहुः-'आचार्यमिश्राः! खरतराचार्य इति शब्दश्रवणेनाप्यस्माभिर्ज्ञातमेव यदि(द्) यूयं पुष्टालम्बनमन्तरेण नैवमपवादमाश्रयत:, परं किन्तु मरवो लोकोऽतिस्थूलभाषी श्रूयते, अद्य च मरुस्थलात् संघेन सहाचार्या आगताः सन्तीति श्रुतम्; अतोऽम्याचार्याः कथं कथं भाषन्त इति द्रष्टुं कौतुकादागत्यास्माभिर्यूयमालपिता न निरूपाभिप्रायेणेति यदनुचितमुक्तं तत्क्षन्तव्यम्'। पूज्यैरुक्तम्-'आचार्यमिश्रा! इष्टगोष्ठ्यामपि यदपि तदपि वक्तुमायाति, किं पुनर्विवादावस्थायाम्; अतो युष्मानुद्दिश्यास्माभिरपि यत्किञ्चिदनुचितमाचरितं तत्क्षन्तव्यमिति'। तदनन्तरं तैरुक्तम्-'आचार्यमिश्राः! अद्येह युष्माकं श्रुतया रीतिं पश्यतामस्माकं चित्ताद् यदेतदस्मिन् देशे श्रूयते-खरतराणामाचार्यो वादलब्धिसम्पन्नः-इति तत्किं सत्यं किमाऽलीकमित्येवंरूपः सन्देहोऽपगतः। यतो नहि निर्मूला प्रसिद्धिर्भवति। तथाऽऽचार्यमिश्राः! साधूनां निहरणस्यातिकालो भवत्यतो मुत्कलयामः' इति। पूज्यैरुक्तम्-'अद्यास्माकं प्राघुर्णका न भविष्यथ ?' हर्षोच्चैरुक्तम्-'प्राघुर्णकास्त एवोच्यन्ते ये देशान्तरादागता भवन्ति, वयं चात्रत्या एवेति कथं युष्माकं प्राघुर्णका भवामः, यूयं पुनरस्माकं प्राघुर्णका भवन्त्विति'। पूज्यैरुक्तम्-'युक्तमेवैतद्' इत्यादिकां प्रीतिवार्तां कृत्वा हर्षितचित्ता गतास्ते निजोपाश्रयम्।

५६. द्वितीये च दिने तत्रत्यैः श्रावकैः श्रीपूज्यानामग्रे द्वादशावर्त्तवन्दनकं दातुं समागत्य श्रीपूज्या विज्ञप्ता यथा-'भगवन्तो! वन्दनकं दापयतेति'। श्रीपूज्यैर्मुद्रां धृत्वा 'यथासमाधी'त्युक्तम्। तदनन्तरं ते श्रीजिनवल्लभसूरिदर्शितमार्गागतविधिना वन्दनकं दातुं प्रवृत्ताः। हर्षवशाच्छ्रीपूज्यैरुक्तम्-'भो भो महासत्त्वा! गूर्जरत्रायामष्टपुटया मुखवस्त्रिकया वन्दनकं दीयते, युष्माभिः किमिति चतुष्पुटया दत्तम् ?'। तैरुक्तम्-'भगवन्तो! वयं श्रीअभयदेवसूरिभिरेवं शिक्षिताः'-इत्यादिका पूर्वजवार्तां श्रुत्वा कासहृदे विहृताः संघेन सह। तत्रापि चैत्यवन्दनार्थं महाप्रामाणिकः पौर्णमासिकः प्रभूतसाधुपरिकलितः श्रीतिलकप्रभसूरिः समागाम संघमध्ये। तत्र च गुरुवार्ताप्रश्नपूर्वकं स्वगुरुपादपद्मरोपाहेनोच्छलितकीर्तिपयःपूरवेलेहितक्षीर परिहितप्रधानपट्टहीर स्वर्णाभरणालङ्कृतमनसिजसदृशशरीर माण्डव्यपुरीयवरहरवलक्ष्मीधरश्रावकमङ्गुल्या दर्शयता तेन श्रीपूज्याः पृष्टा-'किमेते संघपतयः ?' इति। श्रीपूज्यैरुक्तम्-'आचार्य! श्रावकमात्रस्य संघपतिरिति नाम दातुं न युक्तम्'। तेनोक्तम्-'भाषा नाममेवमभिधा श्रूयते'। पूज्यैः सोपहासमुक्तम्-'ग्रामीणजनसुलभा भाषामाश्रित्योत्तरं दास्यसि ?' तेनोक्तम्-'किं त्वमपि लोकप्रसिद्धां भाषां वचनमात्रेण त्याजयसि ?' पूज्यैरुक्तम्-'बहुला लोकप्रसिद्धा भाषा असमञ्जस्यशुद्धित्वात्साधयनर्थः साधुभिः परिह्रियन्ते। तथाऽऽचार्य! नास्माकं लोकेषु कोऽपि मत्सरोऽस्ति, येन तेषां भाषामप्रमाणीकुर्मः; किं तर्हि व्रतिना मनाग तथैव भाषया भाष्यं यया भाष्यमाणया स्वान्यानां लाघवं न भवति'। तेनोक्तम्-'किमनया भाषया लाघवं किञ्चिद्भवति ?' पूज्यैरुक्तम्-'सर्वो-

ऽपि कोऽपि जानात्येतत्' । तेनोक्तम्–'कथम् ?' पूज्यैरुक्तम्–'आचार्य ! संघशब्देन श्रमण–श्रमणी–श्रावक–श्राविकारूपलोकसमुदायो भण्यते । यदुक्तम्–'साहूण साहुणीण य सावय-साविय चउव्विहो संघो'–इत्यादि । तस्य च पतिस्तीर्थंकर एवाऽऽचार्यो वा' । तेनोक्तम्–'केवलश्रावकमेलकेऽपि संघशब्दः प्रयुज्यमानो दृश्यते' । पूज्यैरुक्तम्–'कारणे कार्योपचाराद् दृश्यते यथा घृतमायुरित्यादि; परमुपचारबलेन यस्मिंस्तस्मिन् क्रियमाणे प्रयोगे मिथ्यादृष्टिलोकमध्ये कदाचिदुपहासो भवति, यदेष गृहस्थत्वाचस्य श्रावकस्य किमपि कुत्सितं दृष्ट्वोपहासपरतया वक्ष्यति–यदहो ! जैनानामयमादिरि(मधिपतिः ?) यदेतस्मादधोवर्तिनोऽन्ये सर्वेऽपि जैनाः, अस्य चायं प्रक्षाल(?) इति । तथाऽऽचार्य ! परत उपचारं मुक्त्वाहमन्यथापि संघपतिशब्दं श्रावके वर्तमानं दर्शयिष्यामि' । तेनोक्तम्–'कथम् ?' पूज्यैरुक्तम्–'बहुव्रीहिसमासाश्रयणेन, यथा–संघः पतिर्यस्यासौ संघपतिः श्रावकमात्रः ।' तेनोक्तम्–'ननु मया महर्द्धिके श्रावके संघपतिशब्दः प्रयुक्तः' । पूज्यैरुक्तम्–'भ्रान्तिवशात् प्रयुज्यन्त एवान्यत्रापि शब्दाः'–इत्येवमादिना प्रकारेण प्रपञ्चेनानेकसिद्धान्तयुक्तिप्रकाशनेन श्रावके प्रयुज्यमानतया संघपतिशब्दे निषिद्धे विलक्षीभूतः श्रीतिलकप्रभसूरिः । पुनरप्यालपितः सुखवार्ताप्रच्छनेन श्रीपूज्यैर्यथा–'साम्प्रतं यूयमत्रैव स्थास्यथ ?' इति । तेनापि सोपहासमुक्तम्–'आचार्य ! अत्रैवेति ब्रुवता भवताऽहो ! स्वस्य वाक्यशुद्धिनामाध्ययनार्थनैपुण्यं प्रकाशितम्' । यतस्तत्र

'तहेव सावज्जणुमोइणी गिरा ओहारिणी जा उ परोवघाइणी'

इत्यादिना ग्रन्थेन कृत्वाऽवधारिणीं वाणीं न ब्रूयान्मुनिरित्युक्तम् । भवांश्चात्रैवेति सावधारणं भाषत इति' । सरलाशयैः श्रीपूज्यैरुक्तम्–'आचार्य ! अतीव शोभना नोदना दत्ता, यतः सावधारणं वाक्यमुक्तं सत् कदाचिद् व्यभिचरत्यतो मुनिरलीकभाषी स्यात्, तथा च व्रतभङ्ग इति; परं तिलकप्रभसूरे ! भवता ममाभिप्रायो नावबुद्धोऽतः स्वाभिप्रायस्तर्कभाषया प्रकाशिष्यते । तथाऽऽचार्य ! तर्कस्य भणितस्यैतदेव फलं यच्चिरमभिनिवेशीभूय स्वकीयं वाक्यं यादृशं तादृशं वा यथा तथा समर्थ्यते । अद्य च काकतालीयन्यायेनाऽऽवयोर्गङ्गा-यमुनाप्रवाहयोरिव प्रियमेलकः संजातः, ततो यद्यभिनिवेशं मुक्त्वा तर्करीत्येष्टगोष्ठी क्रियते तदा सफली भवति' । तेनाप्युक्तम्–'प्रमाणमिति' । तदनन्तरं श्रीपूज्यैरुक्तम्–'आचार्य ! साधुः सावधारणं वचनं न ब्रूयादेव किंवा कदाचिद् ब्रूयादपि ?' तेनोक्तम्–'कस्मिन् किं किं ? आद्ये पक्षे स्ववचनव्याघातः ।

> अइयम्मि य कालम्मि य पच्चुप्पन्नमणागए ।
> निस्संकियं भवे जंतु एवमेयं तु निद्दिसे ॥ [४६]

इत्यादिसिद्धान्तविरोधश्च । द्वितीये च पक्षे न वयमुपालम्भ्याः, भवदभ्युपगमानुसारेणास्माभिरुक्तत्वात् । तथाऽऽचार्य ! यस्मिन् वाक्येऽवधारणं साक्षान्न दृश्यते तत्र स्वयमवश्यमूहनीयम्–'सर्वं वाक्यं सावधारणं'- इति न्यायाद्, अन्यथा व्यवस्था क्वापि न स्यात् । घटमानयेत्युक्ते पटमपि तदप्यानयेन्नवेद् । अपि च, तथा–अर्हन् देवः, सुसाधुर्गुरुरित्यादिवाक्येष्वपि अर्हन्नेव देवः परमपदावाप्त्या, अर्हन् देव एव नाऽदेवः, तथा सुसाधुर्गुरुरेव परमपदपथदर्शकत्वेनाश्रित इत्यादयोऽपि नियमा न स्युः । तथा सैद्धान्तिकान्यपि वाक्यानि सावधारणानि सन्ति मनोहराणि भवन्ति, यथा–"धम्मो मंगलमुक्किट्ठं" इत्यादि धर्म एव मङ्गलमुत्कृष्टं न दधिदुग्धादि; धर्मो मङ्गलमेव नामङ्गलरूपः; धर्मो मङ्गलमुत्कृष्टमेव न दधिदूर्वादिसमानमिति' । तेनोक्तम्–'आचार्य ! अयोगव्यवच्छेदार्थं वाऽन्ययोगव्यवच्छेदार्थं वाऽत्यन्तायोगव्यवच्छेदार्थं वकारः प्रयुज्यते विचक्षणैः । अत्र च प्रयुक्तेनामुनैवकारेण किं व्यवच्छिद्यते ?, न तावदयोगव्यवच्छेदाय च विशेषणात् पुरः पठित एव समर्थः स्यात्, अत्र च विशेषणस्याभावात्; नाप्यन्ययोगो वा, तस्य चास्माकमुपनिदर्शितत्वेन स्थानान्तरयोगं निषेद्धुमशक्यत्वात्; नाप्यत्यन्तायोगः, क्रियया समं पठित एव ह्यत्यन्तायोगव्यवच्छेदाय प्रयुज्यमानत्वात्; तस्मादित्थमनवद्यत्वादयुक्त एवायमेवकार इति' । श्रीपूज्यैः

सावष्टम्भमुक्तम्-'भवेदयुक्तमेवायं यदि वयं कथमपि समर्थयितुं न शक्नुमः, परमत्रानेका युक्तयो दर्शिताः, पुनरपि भवत्प्रश्नोत्तरदानपूर्वकमनेका युक्तीर्दर्शयामः। प्रतिपाद्यस्य सति सन्देहे विप्रतिपत्तौ वा तदपनोदार्थमवधारणं प्रयुज्यते विचक्षणैः। तथा हि-एके युक्तिबलेन समर्थयन्त्यस्त्यात्मेति; अपरेऽपि युक्तिबलेन कथयन्ति नास्त्यात्मेति; स्वयं च प्रत्यक्षेण नोपलभ्यते तस्मात् किमस्ति नास्ति चाऽऽत्मेति संशयानं शिष्यं प्रति, तथा यद्वस्तुनः सकाशात्तत्त्वान्यत्वाभ्यामवाच्यं तदवस्तु, यथा व्योमकमलम्, तथा च सुखादिकम्। अथाऽऽत्मनः सुखादिकं भिन्नाभिन्नमित्यसिद्धताहेतोर्यतोऽभेदे क्रियाविरोधो नित्यस्यैकरूपस्य क्रियाया असंभवात्; भेदपक्षे तु ये क्रमभाविनो न ते पराभिमतात्मसमवायिनो यथा बीजाङ्कुरादयस्तथा च सुखादयः-इत्यादिना प्रकारेण नास्त्यात्मेति विप्रतिपद्यमानं च शिष्यं प्रति सावधारणं वाक्यमुच्यते। यथा-अस्त्येवाऽऽत्मा प्रतिप्राणिस्वसंवेदनप्रमाणप्रसिद्धचैतन्यान्यथाऽनुपपत्तेरिति। स चावधारणरूप एवशब्दः कस्मिंश्चित्स्थानके प्रयुक्तः किमपि व्यवच्छिनत्ति। असत्प्रयुक्तस्त्वयमयोगान्ययोगात्यन्तयोगांस्त्रीनपि व्यवच्छिनत्ति। तथा हि-साम्प्रतं यूयमत्रैव स्थास्यथ इत्यस्माभिरुक्तं तत्र सम्भाव्यन्तैतच्छब्देनात्रेतिरूपेण मासकल्पादियोग्येतरक्षेत्रेभ्यः सकाशादस्य क्षेत्रस्य किमपि व्यवच्छिद्यते च नवा? यदि न व्यवच्छिद्यते तदाऽस्य प्रयोगो निरर्थक एव। अथ किंचिद् व्यवच्छिद्यते तदेतद्विशेषणं सञ्जातम्, प्रकरणबलाच विशेष्यं नगरमायातम्। विशेषणाच पुरः पठित एवशब्दो वर्तमानकालापेक्षयैतेन नगरेण सदा युष्मद्योगं व्यवस्थापयति, तस्मिंश्च व्यवस्थापिते, वर्तमानकालापेक्षयैवाऽन्येन नगरादिना योगं स्वयमेवकारो व्यवच्छिनत्ति। तथैवात्यन्तायोगमपीत्यनेनाभिप्रायेण साम्प्रतमित्युक्तम्। तस्माद्युक्तमेवायमेवकारः।

"अः कामचारे" तद्विषय एव शब्दे परेऽवर्णस्य लोपो भवति, यथा-इहेव तिष्ठान्यत्रेव वा तिष्ठेत्यादि। नियोगे तु, इहैव तिष्ठ मा यासीः क्वापीति'। पूज्यैर्विहस्योक्तम्-'तत्किमस्मन्नियोगादेवावता परिवारेण सह भवानत्र स्थितः?' तेनोक्तम्-'तर्हि अत्रैवेत्यपप्रयोगः'। पूज्यैरुक्तम्-'प्रयोगार्थापरिज्ञानेऽपशब्दत्वं नोद्भावनीयम्'। तेनोक्तम्-'वचनमात्रेण मय्यज्ञानता नाऽऽरोपणीया'। पूज्यैरुक्तम्-'एवमेतत्'। तेनोक्तम्-'तर्हि भण्यतामयमेवशब्दः कस्मिन्नर्थे?' पूज्यैरुक्तम्-'अनेकेष्वर्थेषु भविष्यति, परं प्रथममेकस्मिन्नर्थे भण्यते, त्वं सावधानीभूय शृणु-यथा वचनमेव वचनमात्रमित्यादिषु प्रयोगेषु स्वार्थे एवशब्दः, एवमत्रापीति। अथवाऽयमर्थः-यथा अपि संभावनायां प्रयुज्यते, एवमयमप्येवशब्दः संभावनायां प्रयुज्यते विद्वद्भिर्यथा-'वपुरेव तवाचष्टे भगवन्! वीतरागता' मित्यादि श्रीहरिभद्रसूरिवाक्येषु।

यत्र तत्रैव गत्वाऽहं भरिष्ये स्वोदरं बुधाः। मां विना यूयमत्रैव भविष्यथ तृणोपमाः॥ [४७]

इत्यादिषु वेति चेति युक्त एवायमेवकारः। तथा पृच्छाकाले हि प्रच्छकः सावधारणं वा ब्रूयान्निरवधारणं वा ब्रूयान्न तस्य वचनं विचारमर्हतीति लोकस्थितिर्यतोऽसावजानान एव पृच्छति। यस्त्वन्यदा वक्ति तस्य वचने व्यभिचारित्वादिदोषोद्भावनेन स्वशक्त्यनुसारेण कदर्थ्यते, यथा तस्य महती शोभा भवतीत्यादि विदग्धजनरीतिं विस्मारयता भवता स्वकीयं पाण्डित्यं प्रकाशितम्' इत्यादिवचनसन्दर्भेणात्मप्रयुक्तैवकारविषये उत्तराणि शतं श्रीजिनपतिसूरिमुखाम्भोजात् श्रुत्वाऽतिप्रमुदितमनसा तिलकप्रभसूरिणोक्तम्-'आचार्य! सकलायामपि गूर्जरत्रायां त्वं सिंह इव निःशङ्कः सन् विचरेर्न कोऽपि तव सम्मुखं प्रतिमल्लतया स्थास्यति, येन त्वया ममाप्यग्र एवं विजृम्भितमिति'। श्रीपूज्यपार्श्वस्थितेन मुनिना शकुनग्रन्थिर्बद्धः। अभूतपूर्वस्वोचितपण्डितगोष्ठीसमुद्भूतहर्षप्रकर्षात्तिलकप्रभसूरिः श्रीपूज्यान् प्रशंसन् स्वोपाश्रयं गतः।

५७. तत्पश्चात् संघः श्रीआशापल्ल्यां जगाम। तत्र च साधुक्षेमन्धरः स्वपुत्रप्रद्युम्नाचार्यवन्दनार्थं वादिदेवाचार्यसत्कपौषधशालायां गतः। तेनापि च वन्दनाऽनन्तरं सादरमालपितः कुशलवार्तापृच्छनेन सः। तथा-'साधो! केन कार-

ऽनेन पितृपर्यागतं वादलब्धिलब्धजगज्जयपताकश्रीदेवाचार्यप्रदर्शितमार्गं मुक्त्वा यस्मिन् तस्मिन् कुमते लग्नः?' क्षेम-न्धरेणोक्तम्–'मस्तकेन वन्दे, स्वाभिप्रायेणाहमेवं जाने यन्मया रुचिरं कृतं यत्खरतरमार्गे सर्वविद्यापारगतः सिद्धान्तानुवर्ती नव्यः श्रीजिनपतिसूरिर्गुरुत्वेनादृतः'। अमर्षवशादाचार्येणोक्तम्–'साधो! यन्मरुस्थलीमध्ये जडलोकं प्राप्य सर्वज्ञायितमनेन भवद्गुरुणा, तदुचितमस्य, यतो निर्वृक्षे देशे एरण्डोऽपि कल्पवृक्षायते; परं युष्मादृशां परमगुरुश्रीदेवसूरिवचनामृतभृतकर्णयुगलीकुल्यासंसिक्तहृदयक्षेत्रोद्गतविवेकाङ्कुराणां जिनप्रवचनप्रतिकूलप्रतिपादनप्रवीणविप्र-तारकलोकवाक्यहिममहिम्नां यदन्यथाभावो जनितस्तेनास्माकं मनो दूयतेतराम्। परं यद्यपि यूयमस्माकं मिलिता-स्तेनातिशोभनं सञ्जातम्'। सा० क्षेमन्धरेणोक्तम्–'आचार्य! मम गुरुर्मरुस्थलीं मुक्त्वा गूर्जरत्रामध्ये भवतः समीपे ढक्कायां वाद्यमानायामागतोऽस्ति; परं ज्ञायते लग्नं यदि त्वं कथमपि संमुखो भवसि'। विलक्षहास्यकरणपूर्वकमाचार्ये-णोक्तम्–'साधो! वेगं कृत्वा स्वगुरुं प्रगुणय स्वप्ररूपितस्थापनायेति'। सा० क्षेमन्धरोऽपि निजपुत्रप्रद्युम्नाचार्यप्रति-बोधनार्थाभिप्रायेण समीपमागत्य श्रीपूज्या विज्ञप्ताः, यथा–'भगवन्तो! मम पुत्रं प्रद्युम्नाचार्यमायतनानायतनविचार-करणपूर्वकं प्रतिबोध्य स्वशिष्यीकुरुतेति। अहमिदानीं वन्दनार्थं तत्पार्श्वे गतोऽभूवम्। सोऽपि च वादाभिमुख इव मया लक्षित इति'। पूज्यैरुक्तम्–'साधो! प्रमाणमिति'। संघमध्यस्थितभाण्डशालिकसंभवबाहित्रिकोद्धरणप्रमुखप्रधानपुरुषैश्च परस्परं विचार्योक्तम्–'येन मुख्येन प्रयोजनेनागता यूयं प्रथमं तत् कुरुत, पश्चाद्वादविवादादिकं कुर्यात्'। सा० क्षेम-न्धरेणोक्तमेवं भवतु। पूज्यैरुक्तमेवमपि प्रमाणमिति। सा० क्षेमन्धरेण प्रद्युम्नाचार्यसमीपे गत्वा भणितम्–'आचार्य! इदानीं संघस्तीर्थवन्दनार्थमुत्कण्ठावशादुत्तालो व्रजति, चलन्तश्च श्रीमन्तो भट्टारका भवता सममायतनानायतनविचारं करिष्यन्ति'। तेनोक्तम्–'भवतु, परमितः स्थानाद् बहिर्न गन्तव्यमिति'। तदनन्तरं सर्वोऽपि संघो महाविस्तरेण स्त-म्भनकोज्जयन्तादितीर्थेषु महाद्रव्यस्तवेन महाभावस्तवेन तीर्थानि वन्दितवान् पूजितवानिति। शत्रुञ्जये च मार्गासौ-स्थ्यादिकारणान्नगतः।

५८. ततो व्याघुट्याऽऽगच्छति संघे कौतुकवशात् केचिदग्रे भूलाऽऽशापल्लीमध्ये आगताः श्रीपूज्यपादभक्त-श्रावकाः, उपविष्टाश्च वाणिजकस्यैकस्य हट्टे। वाणिजकेनापि पृष्टाश्च ते–'संघमध्य आचार्यः कोऽप्यस्तीति?' तैरुक्तम-स्तीति। तेनोक्तम्–'भविष्यन्ति घना आचार्याः, परं प्रद्युम्नाचार्यसदृशो भरतक्षेत्रमध्ये कोऽपि नास्तीति'। उपहास्य-वशात्तैरप्युक्तम्–'श्रेष्ठिन्! सत्यमेतदुक्तम्, यथा सर्वथा भवतापि सदृशः संसारे कोऽपि नास्ति, किं पुनराचार्येण सदृश इति। ये च प्रद्युम्नाचार्यात् सर्वगुणैः समधिकास्ते कथं तेन सदृशा इति कथ्यन्ते'। तथा प्रद्युम्नाचार्यभक्ताभयड-दण्डनायकेन सर्वलोकसहितेन संघसंमुखमागत्य महाविस्तरेण प्रवेशः कारितः, श्रीपूज्यानां च धवलगृहप्राय आवासो पागच्छे दर्शितः। पूज्याश्च सपरिवारास्तत्र स्थिताः। सा० क्षेमन्धरः पुनरपि श्रीपूज्यानुज्ञया प्रद्युम्नाचार्यवन्दनार्थं तदुपाश्रये गतः। तेनापि सबहुमानमालप्य तीर्थवन्दनयात्रापृच्छनावसाने च भणितो यथा–'साधो! किं तत् स्वकीयं वचो विस्मारितम्?' क्षेमन्धरेणोक्तम्–'मस्तकेन वन्दे, कथं विस्मार्यते स्ववचः?, यदाहमनेनैव प्रयोजनेनाऽऽगतः'। तेनाऽऽत्मगांभीर्यप्रतिबोधनाभिप्रायोच्छलदौत्सुक्यादुक्तम्–'तर्हि किमिति विलम्बः क्रियते?' क्षेमन्धरेणोक्तम्–'मस्तकेन वन्दे, उत्तिष्ठेदानीमपि।' ततोऽसौ जिनपतिसूरिसमीपे समागतः, तत्र च ज्येष्ठानुक्रमेण वन्दनानुवन्दनादि-व्यवहारः संवृत्तः। श्रीपूज्यैरित्थमालापितः सः–'आचार्य! के के ग्रन्था दृष्टाः सन्ति?' तदाऽस्यात्मप्रशंसोच्छलदहंभा-वगर्वितेन तेनोक्तम्–'वर्तमानकालवर्तिनः सर्वेऽपि'। श्रीपूज्यैश्च–यदि वयं प्रथममेवास्य वचने दोषानुद्भावयिष्याम-स्तदैष आकुलव्याकुलीभूतः सन् किमपि वक्ष्यति ततोऽस्य आत्मविज्ञानादिस्वरूपं न ज्ञास्यत-इत्यादि विमृश्योक्तम्–'तथापि नामभिः कथ्यन्ताम्'। तेनोक्तम्–'ऐन्द्रचान्द्रप्रमुखानि लक्षणशास्त्राणि, माघकाव्यादिमहाकाव्यानि, पाद-स्पर्शादिकृताः, मुरारिमुख्यानि नाटकानि, जयदेवादिछन्दांसि, कन्दली-किरणावलीन्यायप्रमुखास्तर्काः, धर्म्म-

प्रकाशप्रमुखा अलङ्काराः, सिद्धान्ताश्च सर्वेऽपि' । श्रीपूज्यैश्च–'अहो ! अनेन घनं गल्लो वादितः । किमस्यैतावन्मात्रं शास्त्रपरिज्ञानमस्ति वा नवेत्युपलक्षयामः'–इति हृदये विचार्योक्तम्–'आचार्य ! लक्षणायाः किं स्वरूपं कति भेदाः ?' इत्यादि । तस्मिंश्च सर्वेऽपि काव्यप्रकाशानुसारेण ब्रुवाणे–'यदि वयमिदानीमेव निषेधनाभिप्रायेण गाढं भणिष्यामस्तदाऽसावत्रैव स्थास्यति, न करिष्यत्यायतनानायतनविचारम् , तस्मादसावद्यास्खलितप्रसरः सन् वदतु; यद्वा परामहङ्कारकोटिं रोहती'त्यादि विमृश्य श्रीपूज्यैर्न किमपि तादृशं वचनं भणितं येन स दूयते । ततस्तेन वहीं गलगर्जि कृत्वा भणितम्–'आचार्य ! अनायतनं कस्य सिद्धान्तस्य मध्ये कथितमस्ति, यदेवं भवान् वराकान् लोकान् विप्रतारयतीति ?' श्रीपूज्यैरुक्तम्–'दशवैकालिकौघनिर्युक्ति–पञ्चकल्प-व्यवहारादिसिद्धान्तमध्ये कथितमस्तीति' । तेनोक्तम्–'आचार्य ! गाढतराभ्यासवशादोघनिर्युक्तिः सकलाऽपि स्वनामसदृशी मम भूताऽस्ति, परं तन्मध्येऽनायतनं क्वापि भणितं नास्ति' । श्रीपूज्यैरुक्तम्–'आचार्य ! दूरे सन्त्वन्ये सिद्धान्ता यदि कथमपि वयमोघनिर्युक्त्यक्षरैः कृत्वा देवगृहं जिनप्रतिमा वाऽनायतनं भवतीति भवन्तं मानयामस्तदा वयं जयामः' । तेनोक्तम्–'प्रमाणं परमिदानीमुत्सूरं बभूव, प्रभाते वार्ता । पूज्यैरुक्तम्–'एवं भवतु' । स च सा० क्षेमन्धरदत्तहस्तः स्वपौषधशालायां जगाम । तत्र च श्रीपूज्यपादस्थित गृहोपरि बद्धं पट्टमुद्दिश्य सा० क्षेमन्धरे शृण्वति सा० रासलपित्रा सा० धणेश्वरेणोक्तम्–'प्रातर्ज्ञास्यते पादबद्धस्य चीरकटकस्य प्रमाणम्' । प्रोच्छलितकोपारक्तनेत्रेण सा० क्षेमन्धरेणोक्तम्–'अरे लम्पक ! त्वदीयस्य बृहत्तरस्याऽपि मानोऽस्ति श्रीपूज्यपादस्थितं चीरकटकम्'। प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्–'साधो ! कीदृशेन कारणेनात्मनोऽपि मध्ये कलहः क्रियते ? । प्रातः सर्वमपि भद्रं भविष्यति । सर्वेषामपि मानानि प्रमाणानि ज्ञास्यते' । तदनन्तरं सा० क्षेमन्धरो वन्दित्वा श्रीपूज्यान्त आगतः । तत्र च–

यदपसरति मेषः कारणं तत् प्रहर्तुं, मृगपतिरपि कोपात् संकुचत्युत्पतिष्णुः ।
हृदयनिहितवैरा गूढमन्त्रोपचाराः, किमपि विगणयन्तो बुद्धिमन्तः सहन्ते ॥ [४८]

इत्यादिधीरपुरुषसमाचारमजानानाः साधवः श्रावकाश्च । श्रीपूज्यानामग्रे भणन्ति–'मस्तकेन वन्दे' । स्वकपोलायलीमास्फाल्य तेनोक्तम्–'युष्माभिः किमिति किमपि न भणितम् ?' पूज्यैरुक्तम्–'भो ! स्थिरीभव, न एकेनैव स्वमेन रात्रिर्विभास्यति' । प्रद्युम्नाचार्येण चाकारितस्वपक्षानुयायिप्रभृताचार्यपण्डितैः सह जाज्वल्यमानेषु प्रदीपेषु सकलामपि रजनीमोघनिर्युक्तिसूत्रवृत्तिपुस्तकानि वाचितानि परमनायतनस्वरूपप्रतिपादकं स्थानकं न लब्धम् । पश्चात्पूज्यानां पार्श्वे मानुषं प्रेषितम् । पूज्यैश्च तदीयपृच्छानुसारेणोद्देशः कथितः । तैरपि पूज्योपदिष्टमुद्देशं गवेषयद्भिर्लब्धं स्थानकम् । अनायतनप्रतिपादकगाथासम्बद्धवृत्त्यक्षराण्यन्यगाथावृत्त्यक्षरैः सह संयोज्य तेन चिन्तितानि । प्रातःक्षणे च सहस्रसंख्यलोकानुगम्यमानमार्गः, अभयडदण्डनायकदत्तहस्तकः समाहूतदेशान्तरीयानेकाचार्यपरिकरितः प्रद्युम्नाचार्यः समाजगाम श्रीपूज्यालङ्कृत आवासे । अधस्तनभूमिकायां च क्षुद्रत्वेन शीघ्रमुपविष्टाः सर्वेऽप्याचार्याः । श्रीपूज्या अप्युपरितनभूमिकातः स्वपरिवारेण सह तत्राययुः । वैयावृत्त्यकरेण जिनागरगणिना तत्र तेषां तादृशं कपटमालोक्य श्रीपूज्या विज्ञप्ताः–'प्रभो ! क्व निषद्यां ददे ?' पूज्यैरुक्तम्–'अन्यत्किमप्युपवेशनस्थानकं न दृश्यतेऽतोऽत्रैव देहि' । तेनोक्तम्–'प्रभो ! संमुखा योगिनी भविष्यति' । 'भवतु श्रीजिनदत्तसूरिर्भलिष्यति, त्वं देहि निषद्यामत्रैवेति' । तदनन्तरं श्रीपूज्यास्तत्रोपविष्टाः । सा० क्षेमन्धर-वाहित्रिकोद्धरणाभ्यां हस्तौ योजयित्वा श्रीपूज्या विज्ञप्ताः, यथा–'प्रभो ! ईदृग्मेलापको घनेभ्यो दिनेभ्योऽद्य संजातोऽस्माभिर्दृष्टः, अतो यदि गीर्वाणभाषया यूयं ब्रूत तदाऽस्मत्कर्णयोः सुखं भवति' । श्रीपूज्यैरुक्तम्–'न किमप्येतद्विरूपमस्ति, परं परतः प्रद्युम्नाचार्याणामग्रे कथयत' । तदनन्तरं ताभ्यां प्रद्युम्नाचार्यं वन्दित्वा भणितम्–'मस्तकेन वन्दे, किल लोकमध्य एवं श्रूयते यदुत देवाः सर्वदैव संस्कृतभाषया परस्परं भाषन्ते परं ते न दृश्यन्ते; अतोऽस्माकं महत् कुतूहलमस्तीति यदि यूयमस्मासु महान्तमनुग्रहं कृत्वा संस्कृतभाषया ब्रूत, तदा

ऽस्माकं देवदर्शनेच्छा पूर्यते; यतो युवाभ्यां द्वाभ्यामपि रूपेण देवा निर्जिताः'। विहस्य प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्-'अहो श्राद्धाः किं यूयं संस्कृतभाषामध्ये परिच्छिन्त ?' ताभ्यामुक्तम्-'मस्तकेन वन्दे, यद् यूयं भणथ तत् सत्यमेव। यतो मरुस्थलोत्पन्ना बदरस्य वृन्तमधस्तादुपरिष्टाद्वा भवतीत्यपि न जानन्ति। परं तथापि, भट्टारकाः! क यूयं क वयम्, पुनरधास्मद्भाग्याद् युष्माकं सर्वेषामपि संयोगो बभूवेति, यदि कथमप्यस्मत्कर्णयोः सुखं जनयत तदाऽतिसमाधानं भवति; यतः क पुनरपीदृशः संयोगः संभाव्यते'-इत्यादि; श्रावकोपरोधात् प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्-'प्रमाणमिति'। तदनन्तरं श्रीपूज्यैस्तत्समीपे खटिका-संपुटिके दृष्ट्वोक्तम्-'केनाभिप्रायेणैष खटिकाखण्ड आनीतः ?' प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्-'कदाचित् संस्कृतभाषया ब्रुवता कश्चिदपशब्दः पतति, तस्य साधनकृते'। श्रीपूज्यैरुक्तम्-'यो हि मुखोपरि शब्दं साधयितुमसमर्थस्तस्य संस्कृतभाषया वक्तुं कोऽधिकारः ?, तस्मात् परतः क्षिप्यताम्। तथैषा संपुटी किमर्थमानीता ?' प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्-'पतिष्यदपशब्दलेखनार्थम्'। श्रीपूज्यैरास्फाल्योक्तम्-'यो हि पतितानपशब्दानात्महृदयेऽवधारितुं न शक्नोति तस्य वादादिषु का जिगीषा ?, तस्मात् संपुट्यपि परतः क्रियताम्'-इत्याक्षिप्य परतः कारिते खटिका-संपुटिके। तत्र च तर्करीत्याऽनायतनस्थापन-निषेधनार्थं संस्कृतभाषया तयोर्ब्रुवतोर्भरतेश्वर-बाहुबल्योरिव महासंरम्भेण वाग्युद्धं संजातम्। तत्र च यादृशं किमपि प्रद्युम्नाचार्येणोक्तं तादृशं सर्वमपि कुतूहलिना प्रद्युम्नाचार्यकृतवादस्थलेषु द्रष्टव्यम्। यथा श्रीजिनपतिसूरिभिः प्रद्युम्नाचार्यवचनानि निराकृत्य सर्वलोकसमक्षं खरतरमार्गः स्थापितस्तथा प्रद्युम्नाचार्यकृतवादस्थलोपरि श्रीजिनपतिसूरिकृतवादस्थलानि द्रष्टव्यानि। यथा महान् प्रमोदो भवति। अत्र च गौरवभिया न लिखितानि। यतः श्रावकोपरोधादित्थमेता वार्ता लिख्यन्ते, अतः श्रावकोपयोगिन्य एव वार्ता लेख्याः; वादस्थले लिखिते त्वेता वार्ता अपि दुर्ग्राह्याः स्युरिति।

तथापि किंचिदुच्यते। प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्-'यत्र देवगृहादौ साक्षात् साधवो वसन्ति तद् भवत्यनायतनम्, यत्र तु बहिःस्थितैरेव सारा क्रियते तत्र का वार्तेति ?'। श्रीपूज्यैः सोपहासमुक्तम्, यथा-'आचार्य! साराशब्दं प्रयुञ्जानेन भवता वर्तमानकालवर्तिशास्त्रपरिज्ञानता स्वकीया प्रकाशिता'। तेनोक्तम्-'किं साराशब्दो नास्ति ?' पूज्यैरुक्तम्-'नास्त्येव'। तेनोक्तम्-'सर्वलोकप्रसिद्धं शब्दं वचनमात्रेणाचार्य! माऽपलापीः'। पूज्यैरुक्तम्-'को लोकः ?-किं हलधर-गोपालादिस्त्वयाभिप्रेतः ?, किं वा लक्षणादिविद्यापारदृश्वा पण्डितगणः ?। यद्याद्यपक्षस्तदा गीर्वाणभाषान्तराले हलधरादिभाषां ब्रुवाणस्त्वमात्मानं पण्डितसभामध्ये लघुं करोषि; अथ द्वितीयः पक्षस्तर्हि कश्चित्पण्डितं साक्षिणं कुरु; अथवा क्वापि केनापि पण्डितेन प्रयुक्तं दर्शयेति'। आकुलव्याकुलीभूतेन तेनोक्तम्-'सारणवारणेत्यादि'। श्रीपूज्यैः सोपहासमुक्तम्-'अहो! वर्तमानकालशास्त्रदर्शिता'-इत्यादि। तदनन्तरं विलक्षीभूतेन तेनोक्तम्-'सिद्धान्तानुयायिनि विचारे प्रारब्धे कीदृशीयं शब्दापशब्दचिन्ता ?, प्रस्तुत एव सिद्धान्तः किमिति न वाच्यते ?' पूज्यैरुक्तम्-'एवं क्रियताम्'। तेन च मण्डिता स्थापनिका धृता च तदुपर्योघनिर्युक्तिसूत्रवृत्तिपुस्तकसत्कसर्वपत्रभृता कपरिका। पूज्यैरुक्तम्-'को वाचयिष्यति ?' तेन कूटाभिप्रायेणोक्तम्-'अहं वाचयिष्यामि'। सरलाशयैः श्रीपूज्यैश्चिन्तितम्-अहो! किमस्य क्षोभवशान्मतिविलासः (?) साम्प्रतमभूत्, यदसावस्माकमग्रे वाचकत्वाङ्गीकारेण स्वस्य लघुतां न गणितवानिति। भवतु वा। प्रकटमुक्तम्-'एवं कुर्विति'। तदनन्तरम्-

> नाणस्स दंसणस्स य चरणस्स य तत्थ होइ वाघाओ।
> वज्जिज्ज वज्जभीरू अणाययणवज्जओ खिप्पं॥ [४९]

जत्थ साहम्मिया बहवे भिन्नचित्ता अणारिया। मूलगुणप्पडिसेवी अणाययणं तं वियाणाहि॥ [५०]

जत्थ साहम्मिया बहवे भिन्नचित्ता अणारिया। उत्तरगुणपडिसेवी अणाययणं तं वियाणाहि॥ [५१]

जत्थ साहम्मिया बहवे भिन्नचित्ता अणारिया। लिंगवेसपडिच्छन्ना अणाययणं तं वियाणाहि॥[५२]
आययणं पि य दुविहं दव्वे भावे य होइ नायव्वं। दव्वम्मि जिणहराई भावे मूलुत्तरगुणेसु॥ [५३]
जत्थ साहम्मिया बहवे भिन्नचित्ता बहुस्सुया। चरित्तायारसंपन्ना आययणं तं वियाणाहि॥ [५४]
सुंदरजणसंसग्गी सीलदरिद्दं कुणइ य सीलड्ढं। जह मेरुगिरीलग्गं तणं पि कणयत्तणमुवेइ॥ [५५]

इत्यादिगाथावृत्तीः पूज्योपदर्शिता वाचयितुं प्रवृत्तः प्रद्युम्नाचार्यः। पूज्याश्चास्खलितवाण्या व्याख्यातुं प्रवृत्ताः। तदनु स्वमतस्थापनाभिप्रायरचितकूटबुद्धिनाऽन्यां गाथां वाचयित्वा प्रस्तुतपत्रद्वयोत्पाटनपूर्वकमन्यतरगाथासत्कवृत्तिं वाचयितुं प्रवृत्तः प्रद्युम्नाचार्यः। श्रीमत्पूज्यपार्श्वोपविष्टेन श्रीजिनहितोपाध्यायेन हस्ते गृहीत्वोक्तम्, यथा–'आचार्य! पाश्चात्यं पत्रद्वयं वाचयित्वेदं पत्रं वाच्यम्'। सोऽपि व्याकुलतया गतस्मृतिः पत्राण्यग्रतः पश्चाच्च करोति। अत्रावसरे मातुलतया प्रतिपन्नमभयडदण्डनायकं लोकप्रसिद्धमामेत्यक्षरैः सम्बोध्य हेडावाहकेन श्रीमालवंशीयेन वीरणागेन भणितम्, यथा–'त्वदीये नगरे स एव किं निगृह्यते यो रात्रौ चौर्यं करोति? यस्तु दिवसे दीप्ते चौर्यं करोति स मुत्कलः'। तदनन्तरं संभ्रमवशाद्दिगवलोकनं कृत्वाऽभयडदण्डनायकेनोक्तम्–'हेडावाहक! किमेतद् भवता भणितम्?' वीरणागेनोक्तम्–'मामा! पश्य पश्य, आचार्येण पत्रद्वयमपलपितम्'। कोपावेगादभयडदण्डनायकेन हस्तस्थितया चर्मयष्ट्या पृष्ठप्रदेशे आहतो वीरणागः। प्रद्युम्नाचार्योऽपि प्रस्तुतं वाचयितुं प्रवृत्तः। विस्तरेण व्याचक्षाणेषु श्रीपूज्येषु श्रीपूज्यभाग्यप्राग्भारप्रेरितेन प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्–'आचार्य! अनया रीत्या देवगृहमेवानायतनं भवति, न तु जिनप्रतिमाः युष्माभिस्तु प्रतिमाऽप्यनायतनत्वेन भणिता'। श्रीपूज्यैर्विहस्योक्तम्–'स्थिरीभव, आचार्य! यदत्र सभायामात्ममुखेन भवता देवगृहमनायतनं भवतीति कथितं तेनास्माकं सर्वेऽपि मनोरथाः सिद्धाः। प्रतिमाऽप्यनायतनत्वेन भणिता'। श्रीपूज्यैर्विहस्योक्तम्.....द्धा ज्ञेया। प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्–'किं वचनमात्रेण किं वा कयाऽपि युक्त्या?' श्रीपूज्यैरुक्तम्–'निर्युक्तिकं वचनं हलधरादय एव भाषन्ते न वयम्'। तेनोक्तम्–'तर्हि युक्तिं ब्रूहि'। श्रीपूज्यैर्विमृश्योक्तम्–

एवमिणं उवगरणं धारेमाणो विहीइ परिसुद्धं।
होइ गुणाणाययणं अविहि असुद्धे अणाययणं॥ [५६]

अस्याश्च गाथाया व्याख्यानं श्रुत्वा विमना इव मौनं कृत्वा स्थितः प्रद्युम्नाचार्यः। तदनन्तरं सा० क्षेमन्धरेण हस्तयोजनपूर्वकमुक्तम्–'मस्तकेन वन्दे, जिनप्रतिमाऽनायतनं भवति वा नवेति?' प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्–'साधो! अस्या गाथाया अनुसारेणेदं ज्ञायते, यदुत जैनी प्रतिमाऽपि भवत्यनायतनमिति'। तत्पश्चात् क्षेमन्धरेण नेत्रयोरानन्दाश्रु बिभ्रता स्वकीयमस्तककेशैः कृत्वा प्रद्युम्नाचार्यपादावुद्घृष्टौ, पुत्रस्नेहाच्च भणितम्–'वत्स! एतावन्ति दिनानि श्रीजिनदत्तसूरिमार्गे लग्नस्य मम भूतानि परं मम मनसि न परिणतम्। यदुत लक्षसंख्यद्रव्यव्ययेन कृतोत्तुङ्गतोरणं देवगृहं निष्पादितमप्यविधिप्रवृत्तिवशादनायतनं भवतीति। इदानीं च तव मुखात् तादृशमपि देवगृहमनायतनं भवतीति श्रुत्वा महान् प्रमोदः संजातः'। प्रद्युम्नाचार्येणोक्तम्–'साधो क्षेमन्धर! अन्येषां सिद्धान्तानामक्षराणि दर्शयित्वा देवगृहमनायतनं न भवतीति परिच्छेदयिष्यामि'। श्रीपूज्यानामग्रे भणितम्–'आचार्य! अस्मन्नामाङ्किता रास–काव्य–चतुष्पद्यादयो न कारयितव्या न पाठयितव्याश्च'। तदनन्तरं श्रीपूज्यैः सा० क्षेमन्धरदाक्षिण्याद्दुच्चैःस्वरेणोक्तम्–'अहो! यः कश्चिदस्माकमाज्ञां मनुते तेन प्रद्युम्नाचार्यपराजयनरूपार्थप्रतिबद्ध रास–काव्य–चतुष्पद्यादयो न कर्तव्या न पठितव्याः'। आर्द्रहृदयत्वान्नेत्रयोरश्रुप्रवाहं बिभ्रता सा० क्षेमन्धरेणोक्तम्–'वत्स! न मया भवन्तं विषोपयितुमारब्धो वादः, किन्तु विद्यापात्रमात्मपुत्रं लब्धाचार्यपदं प्रतिबोध्य युगप्रधानगुरोः श्रीजिनपतिसूरेः शिष्यं कारयितुम्'–इत्यादि वदत्सु तेष्व-

तिप्रमुदितैः श्राद्धैः साधुभिश्च सह अभयडदण्डनायकदत्तहस्तकास्ततः स्थानादुत्थायोपरितनभूमिकायां प्रभूताः श्रीपूज्याः, नागरिकलोकोऽपि। तत्र च पूज्यान् वन्दित्वा, अभयडदण्डनायकोऽधस्तादागतः। प्रद्युम्नाचार्योऽपि सा० क्षेमन्धरदत्तहस्तको मनःखेदोद्भवन्मुखकालिमगुणो लज्जावशाद् भूमिमवलोकयन् स्वपौषधशालायां गतः। इतरोऽपि कौतुकार्थी लोकः स्वकीये स्वकीये गृहे गतः।

५९. स्वकीयगुरुप्रद्युम्नाचार्यहृदयस्थकष्टदर्शनादसुखिन्यभयडदण्डनायके सकलमपि नगरं शून्यमिव जातम्। यहिश्च संघमध्येऽत्यानन्दोऽभवत्। भां० संभव-वैद्यसहदेव-ठ० हरिपाल-सा० क्षेमन्धर-वाहित्रिकोद्धरण-सा० सोमदेवादिसमुदायेन महाविस्तरेण विजयसूचकं वर्धापनकं च कारितम्-'अहो! एते परतो गता मदीयं गुरुं विगोपयिष्यन्त्यतो यद्यत्रैव कथमपि शिक्ष्यन्ते तदा भद्रं भवती'ति हृदि विमृश्याऽभयडदण्डनायकेन मालव्यदेशमध्यस्थिते गूर्जरीये कटके प्रतीहारजगद्देवपार्श्वे विज्ञप्तिकादानपूर्वकं मानुषं प्रेष्य द्वितीये दिने संघमध्ये दापिता राजाज्ञा, यथा-'राजाधिराजश्रीभीमदेवस्याज्ञाऽस्ति यदि यूयमितः स्थानादस्माभिरमुत्कलिताः सन्तो यास्यथेति'। धृतं च राजपुत्रशतमेकं गुप्तवृत्त्या संघस्य प्राहरिकपदे। संघोऽपि स्वचेतसि यदपि तदपि संभावयितुं प्रवृत्तः। विजयदर्शनोच्छलितपरमानन्दवशाद् भाण्डशालिकसंभवः श्रीपूज्यानां पार्श्वे समागत्य हर्षप्रकर्षोद्भवद्गद्गदस्वरेण भणितुं प्रवृत्तः, यथा-'प्रभो! जानामि तावकीनं पराक्रमम्, यतः सिंहस्य पोतकाः सिंहा एव भवन्ति न शृगालाः; परं कपटबहुला गूर्जरत्रास्तत्र च येनापि तेनापि समं माऽऽस्फाल्यताम्। कापटिकगूर्जरलोककूटप्रयोगात् कूटा चेद्वचनीयता तादृशी भवति यादृश्या स्वकीयं मुखमुद्घाटयितुं न शक्यते-इत्याशङ्क्य मया वादकरणविषयेऽनुमतिर्न दत्ता। भवता च प्रभो! अतीव शोभनं कृतं यद् गूर्जरत्रामध्यप्रदेशे समस्ताचार्यमुकुटभूतं प्रद्युम्नसूरिं सकललोकसमक्षं निर्जित्योर्ध्वी कृता स्वकीयाङ्गुलिका। प्रभो! तवैकेन चरित्रेण घनमानन्दितस्य स्वर्गस्थस्य श्रीजिनदत्तसूरेरद्य विस्मृतो निश्चितममृतपानाभिलापः। प्रभो! तावकीनं धैर्यमालोक्य शासनदेवताऽप्यद्यात्मानं सजीवभूतं मन्यते। प्रभो! त्वदीयामीदृशीं वादलब्धिं दृष्ट्वा भगवती सरस्वत्यपि स्वप्रसादस्य माहात्म्यं ज्ञातवती। प्रभो! तवेदृशं साहसमवेक्ष्य पुरन्दरादयो देवा अपि भवतो वरप्रदानोत्सुकाः संजाताः'-इत्यादिकां बह्वीं प्रशंसां कृतवान् भां० संभवः। श्रीमालवंशभूषणवैद्यसहदेव-व्य० लक्ष्मीधर-ठ० हरिपाल-सा० क्षेमन्धर-वाहित्रिकोद्धरणादयोऽपि संघप्रधानपुरुषाः श्रीपूज्यानां पार्श्वे समागत्याभयडदण्डनायकस्य दुष्टमभिप्रायं कथयामासुः। श्रीपूज्यैर्विमृश्योक्तम्-'अहो श्राद्धाः! अनिवृत्तिः काऽपि न कार्या। श्रीजिनदत्तसूरिपादप्रसादात् सर्वं भद्रं भविष्यति। परं परमेश्वरश्रीपार्श्वाराधनार्थं स्वाध्यायकायोत्सर्गादिधर्मकृत्यैपूद्यता यूयं भवतेति'। श्रीपूज्योपदेशाद्धर्मकृत्योद्यते संघे सति सुखेन जातानि चतुर्दश दिनानि परं निर्गमः कोऽपि न संजातः। तदनन्तरं संघमध्यस्थितलोकमध्यादौष्ट्रिकाः शते द्वे संघस्य श्रेयःकृते श्वःकल्ये किमपि साहसं तादृशं करिष्यामो येन संघः सर्वोऽपि स्वकीये स्वकीये स्थानके प्रभूतो भविष्यतीत्यभिप्रायेण प्रगुणीभूताः।

इतश्च-अभयडदण्डनायकप्रेषितमानुषेण कटकमध्ये गत्वा श्रीजगद्देवप्रतीहारपादयोः पुरो धृता स्वस्वामिविज्ञप्तिका। श्रीजगद्देवनिरोपाद् वाचयितुं लग्नः पारिग्रहिकः, यथा-अत्र देशे साम्प्रतमतिमहर्द्धिकः सपादलक्षीयो बहुलोकः समागतोऽस्ति। यदि युष्माकं निरोपो भवति तदा राजकीयानां घोटकानां कृते दालिं करोमीति'। श्रुत्वा च कोपाधिरूढेन श्रीजगद्देवेन तत्क्षणादेव स्वकीयपारिग्रहिकहस्तेन लिखितो राजादेशः। लिखितं च तत्र-'मया महता कष्टेन साम्प्रतं श्रीपृथ्वीराजेन सह सन्धिः कृतोऽस्त्यतो यदि सपादलक्षीयस्य लोकस्य हस्तं लास्यसि तदा गर्दभोदरे त्वां सेवयिष्यामि'-इति राजादेशेन सह प्रेषितो मानुषः। पश्चात् तेनापि चोचालगत्या गत्वा दत्तो दण्डनायकहस्ते राजादेशः। यापयित्वा च तं दण्डनायकेन बहुमानपूर्वकं मुत्कलितः सन् संघः समागतः श्रीमदणहिल्लपाटकनामपत्तने। तत्र च श्रीपूज्यैः स्वगोत्रीयाध्यात्मिकादिदर्शनाचार्याः स्वमण्डल्यां समुद्देशं कारयित्वा वस्त्रदानपूर्वकं सम्मानिताः।

६०. ततः संघेन सह लवणखेटे प्रभूताः श्रीपूज्याः। तत्र च पूर्णदेवगणि-मानचन्द्रगणि-गुणभद्रगणीनां क्रमेण दत्तं वाचनाचार्यपदम्। सं० १२४५ फाल्गुने पुष्करिण्यां धर्मदेव-कुलचन्द्र-सहदेव-सोमप्रभ-सूरप्रभ-कीर्त्तिचन्द्र-श्रीप्रभ-सिद्धसेन-रामदेव-चन्द्रप्रभाणां संयमश्री-शान्तमति-रत्नमतीनां च दीक्षा दत्ता। सं० १२४६ श्रीपत्तने श्रीमहावीरप्रतिमा स्थापिता। सं० १२४७, (?) सं० १२४८ लवणखेटे जिनहितस्योपाध्यायपदं प्रदत्तं। सं० १२४९ पुष्करिण्यां मलयचन्द्रो दीक्षितः। सं० १२५० विक्रमपुरे पद्मप्रभसाधोराचार्यपदं दत्तं-श्रीसर्वदेवसूरिरिति नाम कृतम्। सं० १२५१ माण्डव्यपुरे व्यवहारकलक्ष्मीधरादिप्रभृतश्रावकाणां मालारोपणादि विस्तरेण कृतम्।

६१. ततोऽजयमेरौ विहारः। तत्र च म्लेच्छोपद्रवे मासद्वयं यावन्महाकष्टस्थितौ पत्तने समागत्य भीमपल्ल्यां चतुर्मासी कृता। कुहियपग्रामे जिनपालगणेर्वाचनाचार्यपदं दत्तम्। लवणखेटे राणकश्रीकेल्हणकृतसामवादोपरोधाद्दक्षिणावर्त्तारात्रिकावतारणं मानितम्। सं०१२५२ पत्तने विनयानन्दगणिर्दीक्षितः। सं०१२५३ भाण्डागारिकनेमिचन्द्रश्रावकः प्रतिबोधितः। पत्तनभङ्गानन्तरं धाटीग्रामे चतुर्मासी कृता। सं० १२५४ श्रीधारायां श्रीशान्तिनाथदेवगृहे विधिः प्रवर्तितः। तर्कोपन्यासैश्च महावीरनामा दिगम्बरो रञ्जितः। रत्नश्रीप्रवर्तिनी दीक्षिता। नागद्रहे चतुर्मासी कृता। सं० १२५६ चैत्र वदि ५ लवणखेटे नेमिचन्द्र-देवचन्द्र-धर्मकीर्ति-देवेन्द्रनामानो व्रतिनः कृताः। सं० १२५७ श्रीशान्तिनाथदेवगृहे प्रतिष्ठारम्भः प्रधानशकुनाभावे विलम्बितः। सं० १२५८ चैत्र वदि ५ शान्तिनाथविधिचैत्ये श्रीशानाथप्रतिमा प्रतिष्ठिता, शिखरश्च। चैत्र वदि २ वीरप्रभ-देवकीर्तिगणी दीक्षितौ। सं० १२६० आषाढ वदि ६ वीरप्रभगणि-देवकीर्तिगण्योरुपस्थापना कृता। सुमतिगणि-पूर्णभद्रगण्योर्व्रतं दत्तम्। आनन्दश्रियो महत्तरापदं दत्तम्। श्रीजेसलमेरौ देवगृहे फाल्गुन सुदि २ श्रीपार्श्वनाथप्रतिमा स्थापिता। स्थापना च सा० जगद्धरेण महाविस्तरेण कारिता। सं० १२६३ फाल्गुन वदि ४ महं० कुलधरकारितश्रीमहावीरप्रतिमा लवणखेटे प्रतिष्ठिता। नरचन्द्र-रामचन्द्र-पूर्णचन्द्राणां विवेकश्री-मङ्गलमति-कल्याणश्री-जिनश्रीसाध्वीनां दीक्षा दत्ता, धर्मदेव्याः प्रवर्तिनीपदं च। ठ० आभ्रल-प्रभृतिवाग्गडीयसमुदायः श्रीपूज्यपादवन्दनार्थमागतो लवणखेटे। सं० १२६५ मुनिचन्द्र-मानभद्रगणी दीक्षितौ, सुन्दरमतिरासमतिश्च। सं० १२६६ विक्रमपुरे भावदेव-जिनभद्र-विजयचन्द्रनामानो व्रतिनः कृताः। गुणशीलस्य वाचनाचार्यपदं दत्तम्, ज्ञानश्रियश्च दीक्षा। सं० १२६९ श्रीजावालिपुरे श्रीविधिचैत्यालये महता विस्तरेण महं० कुलधरकारितश्रीमहावीरप्रतिमा स्थापिता। श्रीजिनपालगणेरुपाध्यायपदं दत्तम्। धर्मदेवीप्रवर्तिन्याश्च महत्तरापदं दत्तं प्रभावतीति नाम कृतम्। महेन्द्र-गुणकीर्ति-मानदेवानां चन्द्रश्री-केवलश्र्योश्च दीक्षा दत्ता। ततो विक्रमपुरे विहारः।

६२. सं० १२७० वाग्गडीयसमुदायप्रार्थनया श्रीवाग्गडदेशे विहृताः। दारिद्रेरके शतसंख्यश्रावक-श्राविकाणां सम्यक्त्वारोपण-मालारोपण-परिग्रहपरिमाणदानोपधानविधापनादिधर्मकृत्यकृते महाविस्तरेण सप्त नन्द्यः कृताः। सं० १२७१ बृहद्द्वारे संमुखागतश्रीआसराजराणकप्रमुखप्रभूतलोकैः सह महाविस्तरेण ठ० विजयश्रावककारितायां महत्याम्प्रुत्सर्पणायां प्रविष्टाः श्रीपूज्याः। नन्द्यादिकं च दारिद्रेरकवत्तत्र कृतम्। मिथ्यादृष्टिगोत्रदेवतादिमिथ्यात्वकृत्यपरिहारकारापणेन समुदायस्य महान् प्रमोदो जनितः। सं० १२७३ तत्रैव बृहद्द्वारे लौकिकदशाहिकापर्वोपरि गङ्गायात्राभिमुखेषु तत्रागतेषु बहुषु राणकेषु सत्सु नगरकोट्टीयराजाधिराजश्रीपृथ्वीचन्द्रसाक्षेत(सहायात ?) काश्मीरीयेन श्रीजिनप्रियोपाध्यायशिष्यजिनदासापरनामश्रीजिनभद्रसूरिप्रोत्साहितेन पण्डितमनोदानन्देन श्रीजिनपतिसूरिपौषधशालाद्वारे पत्रावलम्बनं बद्धुं ब्राह्मण एकः प्रेषितः। सोऽपि द्वितीयार्द्धे प्रहरसमये वसतिद्वार आगत्य पत्रावलम्बनं बद्धुं प्रवृत्तः। विस्मयवशाद् दूरदेशे गत्वा धर्मरुचिगणिना संभाषितो ब्राह्मणः, यथा-'बटो! किं करोषि?' निर्भयः सन् स प्राह-'पण्डितमनोदानन्दो युष्मद्गुरूनुद्दिश्य पत्रावलम्बनं करोति'। धर्मरुचिगणिना सोपहासमुक्तम्-'बटो! मदीयसन्देशमेकं पण्डितस्याग्रे कथयेर्यथा-पण्डितश्रीजिनपतिसूरिशिष्येण धर्मरुचिगणिना मम मुखेनेदं

भाणितम्, यथा–पण्डितराज ! मनोदानन्द ! यदि मदीये भणिते लगसि तदद्यपश्चाच्छालालम्बनं कुर्याः, मा पत्रावलम्बनं कृथाः; अन्यथा दन्ता भक्ष्यन्तीति" । मनोदानन्दपण्डितस्वरूपं सर्वं पृष्ट्वा मुक्तः सन् गन्तुं प्रवृत्तो बटुः । धर्मरुचिगणिना सर्वं पूज्यानामग्रे निवेदितम् । श्रीपूज्यपादसमीपोपविष्टठक्कुरविजयकश्रावकेण पत्रावलम्बनवार्तां श्रुत्वा स्वकीयो मानुषः प्रेषितः । कथितं तस्याग्रे यथा–'अहो ! त्वमस्य बटोः पादे लग्नो व्रजेः । कस्मिन् कस्मिन् कटक एष बटुर्व्रजतीति परिभावयेः । वयं पृष्ठलग्ना एवागच्छामः स्म'–इत्यादिशिक्षां गृहीत्वा गतो मानुषो बटुपादैः । संभ्रमादासनादुत्थाय–'भो भोः साधवः ! शीघ्रं प्रावृणुत'–इति भणन्तः स्वयं प्रावृताः श्रीपूज्याः । श्रीजिनपालोपाध्यायेन ठ० विजयकश्रावकेण विज्ञप्ताश्च, यथा–'प्रभो ! साम्प्रतं भोजनवेला वर्तते, साधवश्च विहृत्य समागताः सन्त्यतो भोजनं कुरुः तत्पश्चात् तत्र यास्यत' इति । तदुपरोधाद् भोजनं कृत्वोत्थिताः श्रीपूज्याः । श्रीजिनपालोपाध्यायैर्वन्दनापूर्वकं पादयोर्लगित्वा विज्ञप्ताः, यथा–'प्रभो ! मनोदानन्दपण्डितजयनार्थं मां प्रेषयत, यथाऽहं यामि युष्माकं प्रसादाच्च जेष्यामि; सहानीतानामस्माकं क उपयोगो यद्यूयमेकैकेन मानुषेण सह स्वयमुत्तिष्ठध्वम् । तथा प्रभो ! तस्मिन् वराके मनोदानन्दे युष्माकं कः संरम्भः । यतः–

कोपादेकतलाघातनिपातमत्तदन्तिनः । हरेर्हरिणयुद्धेषु कियान् व्याक्षेपविस्तरः ॥ [५७]

राजनीतावपि प्रथमं पदातयो युध्यन्ते पश्चाच्च नायकाः । श्रीपूज्यैरुक्तम्–'उपाध्यायमिश्राः ! न ज्ञायते पण्डितस्य स्वरूपम्, यथा पण्डितः कीदृशोऽस्ति' । उपाध्यायेनोक्तम्–'प्रभो ! भवतु पण्डितो यादृशस्तादृशो वा । सर्वत्र युष्माकं प्रसादो विजयते' । श्रीपूज्यैरुक्तम्–'वयमपि तत्रागमिष्यामः, परं भवद्भिस्तत्र वक्तव्यमिति' । उपाध्यायेनोक्तम्–'प्रभो ! युष्मासु संनिहितेषु सत्सु मम जिह्वा लज्जावशाद् वक्तुं न वहति, अतो यूयमत्रैव तिष्ठत' इत्यादि । श्रीजिनपालोपाध्यायविहितोपरोधात् प्रसन्नमानसैः श्रीपूज्यैर्मन्त्रध्यानपूर्वकं मस्तके हस्तं दत्त्वा धर्मरुचिगणि–वीरभद्रगणि–सुमतिगणिभिः, ठ० विजयकप्रमुखप्रधानश्रावकैश्च सह मनोदानन्दपण्डितजयनार्थं प्रेषितः श्रीजिनपालोपाध्यायः । सुरवार्ताप्रच्छननिमित्तसमागतानेकराणकावस्थानमण्डिते नगरकोट्टीयराजाधिराजश्रीपृथ्वीचन्द्रसभामण्डपे प्राप्तः श्रीजिनपालोपाध्यायः सपरिवारः ।

६३. श्रीपृथ्वीचन्द्रराजानमुपश्लोक्य तत्रस्थः पण्डितमनोदानन्दो भाषितः श्रीमदुपाध्यायेन, यथा–'पण्डितराज ! किमर्थमस्मद्वसतिद्वारे पत्रावलम्बनं दत्तम् ?' तेनोक्तम्–'जयनार्थम्' । उपाध्यायेनोक्तम्–'तर्हि कुरु कस्यापि पक्षस्याङ्गीकारम्' । तेनोक्तम्–'युष्मान् दर्शनबाह्यत्वेन स्थापयिष्यामीति मम पक्षः' । श्रीउपाध्यायेनोक्तम्–'कुरु प्रमेयमिति' । तदनन्तरं तेनोक्तम्–'विवादाध्यासिता दर्शनबाह्याः, प्रयुक्ताचारविकलत्वान्म्लेच्छवदिति' । श्रीमदुपाध्यायेन विहस्योक्तम्–'पण्डितराज मनोदानन्द ! त्वदुक्तेऽस्मिन्ननुमाने कति दूषणानि दर्शये ?' तेनोक्तम्–'यथाशक्ति दर्शयेः, परं तत्समर्थनायां समर्थेन भाव्यम्' । श्रीमदुपाध्यायेनोक्तम्–'पण्डितराज ! सावधानीभूय श्रूयताम्, यथा–विवादाध्यासिता दर्शनबाह्याः, प्रयुक्ताचारविकलत्वान्म्लेच्छवदिति–भवतोक्तम्, तत्र प्रयुक्ताचारविकलत्वादिति हेतुरनैकान्तिकः, षड्दर्शनबाह्यत्वे साध्ये षड्दर्शनाभ्यन्तरवर्तित्वेनाभ्युपगतेषु बौद्ध–चार्वाकादिषु विपक्षभूतेष्वस्य हेतोर्गमनात् । तथा साधनविकलो दृष्टान्तः । तथा हि–त्वदुक्ताचारवैकल्यं म्लेच्छेष्वेकदेशापेक्षया सामस्त्यापेक्षया वा भवेत् ? । न तावदाद्यविकल्पः, म्लेच्छा अपि हि स्वजात्यनुयायिनां लोकाचारं किमपि कुर्वाणा दृश्यन्ते । लोकाचारश्च सर्वोऽपि वैदिक एवेत्यसिद्धो हेतुर्दृष्टान्तः । अथवा सामस्त्यापेक्षया, तर्हि भवानपि दर्शनबाह्यः, नहि भवानपि सर्वमपि वैदिकमाचारं कर्तुं शक्नोति'–इत्यादिना प्रकारेण तर्करीत्या श्रुवाणेन समस्तराजलोकचेतसि चमत्कारमुत्पादयता श्रीमदुपाध्यायेनानेकदूषणोद्भावनेन कदर्थितेऽपि प्राथमिकेऽनुमाने, द्वाविंशत्यन्यान्यनुमानानि भणितुं प्रवृत्तः पं० मनोदानन्दः । प्रभूतप्रवे-

मात्प्रभावेन श्रीमदुपाध्यायेन स्थाने स्थाने ज्वलन्तीषु दीप्तासु दीपिकासु समस्तराजलोकसमक्षमसिद्धविरुद्धानैकान्तिकादिदूषणोद्भावनेन तान्यपि निराकृत्य जितो मनोदानन्दः। प्रधानानुमानभणनपूर्वकमात्मा च स्थापितो दर्शनास्पन्तरवर्तित्वेनोपाध्यायेन। उत्तरास्फुरणे वैलक्ष्याचिन्तितुं प्रवृत्तः पण्डितः, यथा–'अहो! तथाविधवैदग्ध्याभावादेते राजानो यं कंचिद् यतिब्रुवाणं पश्यन्ति तमुद्दिश्य भाषन्ते यथाऽयं भद्रो वादीति; तस्मादहमपि किमपि ब्रुवन्नस्मि यथाऽमी जानन्ति पण्डितमनोदानन्दो गाढो वाग्मी'–इति विचिन्त्य–

शब्दब्रह्म यदेकं यच्चैतन्यं च सर्वभूतानाम्।
यत्परिणामस्त्रिभुवनमखिलमिदं जयति सा वाणी॥ [५८]

इत्यादि पठितुं प्रवृत्तः। ततश्च श्रीमदुपाध्यायेन कोपावेगादुक्तम्–'अरे वठरशेखर! किमेतदसम्बद्धं भाषसे? मया त्वां षड्दर्शनबाह्यः कृतः प्रमाणसामर्थ्येन; यदि तव काऽपि शक्तिरस्ति तदा स्वकीयपत्रावलम्बनसमर्थनाय प्रमाणानुयायि किञ्चिद् ब्रूहि। पूर्वपठितगुणनेऽपि वयमेव समर्थाः'। तदनन्तरं श्रीमदुपाध्यायवचनेन श्रीजिनवल्लभसूरिकृतचित्रकूटीयप्रशस्ति–संघपट्ट–धर्मशिक्षादिसंस्कृतप्रकरणान्युदात्तस्वरेण गुणयतो धर्मरुचिगणि–वीरप्रभगणि–सुमतिगणीन् दृष्ट्वा तत्रोपविष्टान्यराजभिरुक्तम्–'अहो! एते सर्वेऽपि पण्डिताः' इति। मनोदानन्दपण्डितमुखे कालिमानमवलोक्य राजाधिराजश्रीपृथ्वीचन्द्रेण चिन्तितम्, यथा–'अहो! न दृश्यते शोभना मनोदानन्दस्य मुखच्छाया। अतो यद्येष हारयिष्यति ततो महल्लाघवं मम भविष्यति। तस्मादिदानीमेवानयोः समश्रीकतां करोमीति'–चिन्तनानन्तरं च श्रीमदुपाध्यायानुद्दिश्योक्तम्–'बृहन्त ऋषयो यूयमिति'। मनोदानन्दमुद्दिश्योक्तम्–'बृहन्तः पण्डिता यूयमिति'। श्रीपृथ्वीचन्द्रराजवचनं श्रुत्वा श्रीमदुपाध्यायेन चिन्तितम्, यथा–'अहो! अद्यैतावत्प्रमाणेन संरम्भेण रात्रिप्रहरत्रयं जागरित्वाऽपि न किमपि फलं संप्राप्तम्, यदित्थं निर्वचनीकृतेनापि मनोदानन्देन समं मम समश्रीकता कृता राज्ञा स्वपण्डितपक्षपातात्। भवतु, तथापि जयपत्रमगृहीत्वा मयेतः स्थानान्नोत्थातव्यमिति'। प्रकटं च स्वस्कन्धास्फालनपूर्वकमुक्तम्–'महाराज! किमेतदुच्यते?। मय्यूर्ध्वे सत्यन्यो भरते सकलेऽपि न कश्चित्पण्डितो भवति। यद्येष पण्डितस्तदा मया सह लक्षणमार्गेण तर्कमार्गेण साहित्यमार्गेण वा वदतु, अन्यथा स्वकीयमिदं पत्रावलम्बनं पाटयतु। अरे यज्ञोपवीतमात्रवहनशक्ते मनोदानन्द! श्रीजिनपतिसूरेरुपरि पत्रावलम्बनं करोषि? न जानासि रे वटो! यदनेन सर्वविद्यानिर्णयदायकाः श्रीप्रद्युम्नाचार्यसदृशाः पण्डितराजाः सकललोकसमक्षं धूलीं चर्विताः'। अत्रान्तरे श्रीपृथ्वीचन्द्रेण पत्रावलम्बनं गृहीत्वा पाटितम्। श्रीमदुपाध्यायेनोक्तम्–'महाराज! न तुष्यामो वयं पत्रावलम्बनपाटनमात्रेण'। राज्ञोक्तम्–'कथं तुष्यथ?' उपाध्यायेनोक्तम्–'जयपत्रलाभेन; यतो महाराज! अस्माकमीदृशी दर्शनव्यवस्थाऽस्ति, यः कश्चिदस्मदुपाश्रयद्वार एकस्मिन् दिने पत्रावलम्बनं बध्नाति तस्यैव हस्तेन द्वितीये दिने स्वोपाश्रयद्वारे जयपत्रमुद्ग्राह्यते। अतो महाराज! यथा न्यायश्रीकरणैकसंमत्याऽस्मद्दर्शनव्यवस्था वृद्धिं प्राप्नोति तव सभायां तथा विधीयताम्'। राज्ञा च लघूकृतस्वपण्डितमनोदानन्दमुखकालिमावलोकनोच्छलितमानसिकदुःखेनापि न्यायविचारप्रवीणपार्श्वस्थितप्रभूतप्रधानलोकोपरोधात् स्वकीयपारिग्रहिकहस्तेन लेखयित्वा दत्तं जयपत्रं श्रीजिनपालोपाध्यायानां हस्ते। उपाध्यायैश्च धर्मलाभाशीर्वाददानपूर्वकं बहुलमुपश्लोकितो महाराजाधिराजश्रीपृथ्वीचन्द्रः। ततः स्थानादुत्थाय प्रातः क्षणे पंचशब्दवादनादिवर्द्धापनपूर्वकं गृहीतजयपत्राः सपरिवाराः श्रीजिनपालोपाध्यायाः समागताः श्रीपूज्यानां समीपे। श्रीपूज्यैश्च स्वशिष्यनिष्पादितजिनशासनप्रभावनोद्भूतप्रभूतप्रमोदान्महासंभ्रमेणालापिताः श्रीमदुपाध्यायाः। सं० १२७३ ज्येष्ठवदि १३ शान्तिनाथजन्मकल्याणके कारितं च वर्धापनकमानन्दभरनिर्भरेण तत्रत्यसमुदायेन।

६४. सं० १२७४ बृहद्द्वारादागच्छद्भिरन्तरा भावदेवमुनिर्दीक्षितः। सा० थिरदेवप्रार्थनया दारिद्रेरके चतुर्मासी

कृता। तत्रापि नन्दयः पूर्ववत्। सं० १२७५ जावालिपुरे ज्येष्ठसुदि १२ भुवनश्रीगणिनी-जगमति-मङ्गलश्रीसाध्वीत्रयेणसह विमलचन्द्रगणि-पद्मदेवगणी दीक्षितौ। सं० १२७७ श्रीप्रह्लादनपुरे प्रभूताः प्रभावनाः कृता। अन्यदा नाभ्यधस्तनप्रदेशोद्भूतग्रन्थिदोषोत्थितवेदनावशसंजातमूत्रसंग्रहरोगसत्ककष्टादात्मन आयुषो गमनमवगम्य श्रीपूज्यैर्दत्ता यथोचिता शिक्षा चतुर्विधस्यापि संघस्य। मिथ्यादुष्कृतं च दत्त्वा भणितं च संघस्याग्रे-'संघेन मनोमध्ये काऽप्यनिर्वृत्तिर्न कार्या-यद्गुरोरिदानीं कथं भविष्यति,यतो येषां प्राणेनानेकैर्लोकैः सममास्फाल्यास्फाल्योक्तं ते देवीभूता इति। यतः पश्चादपि श्रीसर्वदेवसूरि-श्रीजिनहितोपाध्याय-श्रीजिनपालोपाध्याया वयमिव सर्वेषामप्युत्तरं दातुं क्षमाः, युष्माकं मनोरथान् पूरयितुं समर्थाः सन्ति। तथा वाचनाचार्यसूरप्रभ-कीर्तिचन्द्र-वीरप्रभगणि-सुमतिगणिनामानश्चत्वारः शिष्या महाप्रधाना निष्पन्ना वर्तन्ते। येषामेकैकोऽप्याकाशस्य पततो धरणे क्षमः। परमस्माकं स्वकीयपदयोग्यं परिभावयतां वीरप्रभगणिः समागच्छति। वयमपि साम्प्रतं साबाधा वर्तामहे। अतो यदि संघः कथयति तदिदानीमपि स्वकीयपदे वीरप्रभगणिमुपवेशयामः'। शोकहर्षप्रकर्षाकुलचित्तेन संघेन विज्ञप्ताः श्रीपूज्याः, यथा-'स्वामिन्! यद्युष्माकं परिभावयतां समागच्छति तदस्माकं प्रमाणम्, परमिदानीमौत्सुक्येन क्रियमाणमाचार्यपदस्थापनमतिशोभायुक्तं न संभाव्यते। अतो यदि युष्माकं निरोपो भवति तदाऽत्रत्यसमुदायलेखदर्शनसमागतसमस्तदेशवास्तव्यखरतरसमुदायैरानन्दभरेण स्थाने विधीयमानासु महतीपूत्सर्पिणीषु वीरप्रभगणेराचार्यपदस्थापना महाविस्तरेण कार्यते'। श्रीपूज्यैरुक्तम्-'यत्समुदायस्य पर्यालोचयतः समागच्छति तत्प्रमाणम्'। तदनन्तरं समस्तलोकक्षमितक्षामणपूर्वकमनशनविधिना निखिललोकचेतसि चमत्कारं कृत्वा [सं० १२७७ आषाढ सुदि १०] दिवं गताः श्रीजिनपतिसूरयः।

६५. तदनन्तरं श्रीपूज्यविरहोच्छलितपरमदुःखेन शून्यान्तःकरणेनापि पाश्चात्य[कृत्य]कृते श्रीपूज्याननेकमण्डपिकामण्डिते विमानेऽध्यारोप्य स्थाने स्थाने च वारविलासिनीभिस्तत्कालसुरसेन स्वरेण हृदयार्द्रीकरणप्रवीणमेघरागादिचोकरागेण दैवोपालम्भाद्यर्थनिबन्धनमधुमधुरेषु गीतेषु गीयमानेषु उच्छाल्यमानेषु च नानाविधेषु बहुषु वनफलेषु, पञ्चशब्देषु च वाद्यमानेषु नेतुमारेभे समस्तलोकसहितेन चतुर्विधेन संघेन।

अत्रान्तरे कणपीठमध्ये साबाधशरीरश्रीपूज्यवार्ताश्रवणादुच्चालीभूय जावालिपुरादागतः प्रधानसाधुसहितः श्रीजिनहितोपाध्यायः। स च तत्र तादृगवस्थान् श्रीपूज्यानवलोक्य शोकभरविह्वलीभवन्मानसेन श्रीपूज्यगुणगणस्मरणपूर्वकं नानाप्रकारान् विलापान् कर्तुं प्रवृत्तः। यथा-

श्रीजिनशासनकाननसंवर्द्धिविलासलालसे वसता।
हा श्रीजिनपतिसूरे!, किमेतदसमञ्जसमवेक्षे?॥ [५९]

जिनपतिसूरे! भवता श्रीपृथ्वीराजनृपसदःसरसि।
पद्मप्रभासिवदने नाऽरमिव जयश्रिया सार्धम्॥ [६०]

मथितप्रथितप्रतिवादिजातजलधेः प्रभो! समुद्धृत्य।
श्रीसंघमनःकुण्डे न्यधात् त्वमानन्दपीयूषम्॥ [६१]

बुधबुद्धिचक्रवाकी षट्तर्कीसरिति तर्कचक्रेण।
क्रीडति यथेच्छमुदिते जिनपतिसूरे! त्वयि दिनेशे॥ [६२]

तव दिव्यकाव्यदृष्टावेकविधं सौमनस्यमुल्लसति।
द्राक् सुमनसां च तत्प्रतिपक्षाणां च प्रभो! चित्रम्॥ [६३]

धातुविभक्त्यनपेक्षं क्रियाकलापं त्वनन्यसाध्यमपि।
यं साधयत् जिनपते! चमत्कृते कस्य नो जातः॥ [६४]

मयि सति कीदृक् चासन्नयमत्र कविरिति नाम वहत्तीति ।
रोषादसुराचार्यं जेतुं किं जिनपते ! स्वरगाः ? ॥ [६५]
भगवंस्त्वयि दिवि गच्छति हर्षात्त्वदभिमुखमक्षताः क्षिप्ताः ।
सुररमणीभिर्मन्ये सारीभूतास्त एवाग्रे ॥ [६६]
इन्द्रानुरोधवशतो मध्ये स्वर्गं ययौ भवानित्थम् ।
जिनपतिसूरे ! सन्तो दाक्षिण्यघना भवन्ति यतः ॥ [६७]
धामपदधातलग्नेन्द्राण्यवतारितशरावपुटखण्डाः ।
स्वःश्रीविवाहकार्यं तव नूनं दिव्युद्भूताः ॥ [६८]
जिनजननदिनस्नानाधानेच्छातः किमाकुलीभूय ।
त्वं पञ्चत्वं प्राप्तः सुरपतिवज्जिनपतिर्भगवान् ? ॥ [६९]
त्वदभिमुखमिव क्षिप्तानाशानारीभिरक्षतान् नूनम् ।
उपभोक्तुं वियदजिरे विचरति चन्द्रो मराल इव ॥ [७०]
नास्तिकमतकृदमरगुरुजयनायैवासि जिनपते ! स्वरगाः ।
परमेतज्जगदधुना विना भवन्तं कथं भावि ? ॥ [७१]
हा ! हा ! श्रीमज्जिनपतिसूरे ! सूरे त्वयीत्थमस्तमिते ।
अहह कथं भविता नीतिचक्रवाकी वराकीयम् ॥ [७२]
करतलधृतदीनास्ये श्रीशासनदेवि ! मा कृथाः कष्टम् ।
यन्मन्ये तव पुण्यैर्जिनपतिसूरिर्दिवमयासीत् ॥ [७३]
रे दैव ! जगन्मातुः श्रीवाग्देव्या अपि त्वयात्रेपि ? ।
ना मन्ये यदमुष्याः सर्वस्वं जिनपतिरहारि ॥ [७४]

इत्यादिशोकविलापभरोच्छलितमूर्च्छावसाने च धैर्यालम्बनपूर्वकं श्रीपूज्यपादौ वन्दित्वा पाश्चात्यकरणार्थं तैः सह शुद्धे स्थंडिले जगाम सपरिवारः श्रीजिनहितोपाध्यायः । तत्र च कृत्यं समस्तमपि कृत्वा स्वोपाश्रयगमनपूर्वकं श्रीगौतमस्वामिगणधरादिमहापुरुषचरितोत्कीर्तनेन सकलमपि लोकमाह्लादयति स्म । ततश्चतुर्मासी कृता जावालिपुरे ।

६६. ततः कालान्तरे श्रीसंघेन सह श्रीजावालिपुरे श्रीजिनहितोपाध्याय-श्रीजिनपालोपाध्यायादि-प्रधानसाधुसमन्वितः श्रीसर्वदेवसूरि॰ समस्तसंघसम्मत्या श्रीजिनपतिसूरिगुरूपदिष्टरीत्याऽऽचार्यपदोपयोगिपद्-त्रिंशद्गुणकलितसौभाग्यभाजनमुपादेयवाक्यं दशविधयतिधर्मादिभूतक्षमाकेलिभवन वीरप्रभगणि भक्तिभरसमागत-समस्तदेशवास्तव्यभव्यलोकसंघैः स्थाने स्थाने मण्डितेषु सत्रागारेषु, दीयमानेषु रासकेषु, गीयमानेषु युगप्र-धानगुरु [..] अमारिघोषणाया निष्पाद्यमानायाम् , सहस्रसंख्यद्रव्यार्पणेन याचकवाञ्छासु पूर्यमाणासु, प्रधानरूपवेषलक्ष्म्या शक्रेण सह स्पर्धमानेषु लोकेषु, महामिथ्यादृष्टिभिरपि निरन्तर प्रशस्यमाने जिनशासने, स्व-स्वदेवावहेलापरेप्परेषु दर्शनेषु, खरतरमार्गसत्कबिरुदावलीं पठत्सु भट्टलोकेषु, नानाविधास्वाशिस्सु दीयमानासु, तलिकातोरणादिशोभाभूषिते श्रीमहावीरदेवभवने तीर्थप्रभावनानिमित्त श्रीजिनपतिसूरिपट्टे माघसुदि ६ उपवेशयामास । कृतं च तस्य पूर्वगुरूपदिष्टं श्रीजिनेश्वरसूरिरिति नाम । आनन्दभरनिर्भरेण च संघेन कारिता महत्युत्सर्पणा ।

* * * * *

६७. श्रीजिनेश्वरसूरीणां च संक्षेपवाचनेयम्-सं० १२७८ माघ सुदि ६,श्रीमज्जिनेश्वरसूरीणां पदस्थापना। माघ सुदि ९, यशःकलशगणि-विनयरुचिगणि-बुद्धिसागरगणि-रत्नकीर्त्तिगणि-तिलकप्रभगणि-रत्नप्रभगण्यमरकीर्तिगणि [नामानः] एते सप्त साधवो दीक्षिताः श्रीजावालिपुरे। श्रीमाले सा० यशोधवलेन सह विहृत्य ज्येष्ठ सुदि १२,श्रीविजय-हेमप्रभ-श्रीतिलकप्रभ-श्रीविवेकप्रभ-चारित्रमालागणिनी-ज्ञानमाला [गणिनी]-सत्यमालागणिनीनां दीक्षा। आषाढ सुदि १०, पुनः श्रीश्रीमाले सा० जगद्धरसत्कसमवसरणप्रतिष्ठा श्रीशान्तिनाथस्थापना च। श्रीजावालिपुरे देवगृहप्रारम्भश्च। जावालिपुरे १२७९ माघ सुदि ५, अर्हद्दत्तगणि-विवेकश्रीगणिनी-शीलमालागणिनी-चन्द्रमालागणिनी-विनयमालागणिनीनां दीक्षा। श्रीमाले १२८० माघ सुदि १२, श्रीशान्तिनाथभवने ध्वजारोपः। श्रीऋषभनाथ-श्रीगौतमस्वामि-श्रीजिनपतिसूरिमेघनादक्षेत्रपाल-पद्मावतीप्रतिमानां प्रतिष्ठा। फाल्गुन वदि १, कुमुदचन्द्र-कनकचन्द्र-पूर्णश्रीगणिनी-हेमश्रीगणिनीनां दीक्षा। वैशाख सुदि १४, श्रीप्रह्लादनपुरे सकलनगरे(?) स्तूपे जिनपतिसूरिप्रतिमा स्थापिता, विस्तरेण श्रीजिनहितोपाध्यायद्वारेण। सं०१२८१ वैशाख सुदि ६, जावालिपुरे विजयकीर्त्ति-उदयकीर्त्ति-गुणसागर-परमानन्द-कमलश्रीगणिनीनां दीक्षा। ज्येष्ठ सुदि ९, जावालिपुरे श्रीमहावीरभवने ध्वजारोपः। १२८३ माघ वदि २, वाहडमेरौ श्रीऋषभदेवभवने ध्वजारोपः। माघ वदि ६, श्रीसूरप्रभोपाध्यायपदं मङ्गलमतिगणिन्याः प्रवर्तिनीपदं च, वीरकलशगणि-नन्दिवर्धन-विजयवर्धनगणिदीक्षा। १२८४ बीजापुरे श्रीवासुपूज्यदेवस्थापना, आषाढ सुदि २, अमृतकीर्तिगणि-सिद्धकीर्तिगणि-चारित्रसुन्दरिगणिनी-धर्मसुन्दरिगणिनीदीक्षा। सं० १२८५ ज्येष्ठ सुदि २, कीर्तिकलशगणि-पूर्णकलशगणि-उदयश्रीगणिनीदीक्षा। ज्येष्ठ सुदि ९, बीजापुरे श्रीवासुपूज्यभवने जलानयनादिमहर्द्ध्या ध्वजारोपः। १२८६ फाल्गुन वदि ५,बीजापुरे विद्याचन्द्र-न्यायचन्द्रा ऽभयचन्द्रगणिदीक्षा। १२८७ फाल्गुन सुदि ५,प्रह्लादनपुरे जयसेन-देवसेन-प्रबोधचन्द्राशोकचन्द्रगणि-कुलश्रीगणिनी-प्रमोदश्रीगणिनीदीक्षा। १२८८ भाद्रपद सुदि १०, स्तूपध्वजप्रतिष्ठा श्रीजावालिपुरे। आश्विन सुदि १०, स्तूपे ध्वजारोपः प्रह्लादनपुरे साधुभुवनपालेन समुदायसहितेन राजपुत्रश्रीजगसीहसान्निध्येन महामहोत्सवेन कारितः श्रीजिनपालोपाध्यायद्वारेण। पौष सुदि ११, जावालिपुरे शरच्चन्द्र-कुशलचन्द्र-कल्याणकलश-प्रसन्नचन्द्र-लक्ष्मीतिलकगणि-वीरतिलक-रत्नतिलक-धर्ममति-विनयमतिगणिनी-विद्यामतिगणिनी-चारित्रमतिगणिनीदीक्षा। चित्रकूटे ज्येष्ठ सुदि १२, अजितसेन-गुणसेन-अमृतमूर्ति-धर्ममूर्ति-राजीमती-हेमावली-कनकावली-रत्नावलीगणिनी-मुक्तावलीगणिनीदीक्षा। आषाढ वदि २, श्रीऋषभदेव-श्रीनेमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथप्रतिष्ठा साधुलक्ष्मीधर-सा०राहाभ्यां कारिता। सहस्र ८ लक्ष्मीधरेण वेचिताः (व्ययीकृताः)। राजनिस्वानेषु वाद्यमानेषु जलानयनम्। १२८९ उज्जयन्त-शत्रुञ्जय-स्तम्भनकतीर्थेषु यात्रा ठ०अभयराज-सा०राल्हासाहाय्येन कृता। स्तम्भतीर्थे च वादियमदण्डनामदिगम्बरवादिना [सह] पण्डितगोष्ठी। महामात्यश्रीवस्तुपालस्य सपरिवारस्य श्रीपूज्यानां संमुखागमनेन प्रभावना च। १२९१ वैशाख सुदि१०, जावालिपुरे यतिकलश-क्षमाचन्द्र-शीलरत्न-धर्मरत्न-चारित्ररत्न-मेघकुमारगणि-अभयतिलकगणि-श्रीकुमार-शीलसुन्दरिगणिनी-चन्दनसुन्दरिदीक्षा। ज्येष्ठ वदि २, मूलार्के श्रीविजयदेवसूरीणामाचार्यपदम्। १२९४ श्रीसंघहितोपाध्यायस्य पदम्। १२९६ फाल्गुन वदि५, प्रह्लादनपुरे प्रमोदमूर्ति-प्रबोधमूर्ति-देवमूर्तिगणीनां महर्द्ध्या दीक्षा। ज्येष्ठ सुदि१०, श्रीशान्तिनाथप्रतिष्ठा, साम्प्रतं पत्तन उपविष्टोऽस्ति। १२९७ चैत्रसुदि १४, देवतिलक-धर्मतिलकदीक्षा प्रह्लादनपुरे। १२९८ वैशाख ११, जावालिपुरे स्वर्णदण्डे ध्वजारोपो मह०कुलधरेण समुदायसहितेन वसायगुणचन्द्रेण कारितः। १२९९ प्रथमाश्विन वदि २, महामन्त्रिकुलधरस्य सकलराजलोकनगरलोकाश्चर्याम्भोधिप्रोल्लासपार्वणेन्दुसोदरेण महामहोत्सवेन दीक्षा, तस्य च कुलतिलकमुनिरिति नाम संजातम्। १३०४ वैशाखसुदि१४, विजयवर्धनगणेराचार्यपदस्थापना,जिनरत्नाचार्य इति नाम। त्रिलोकहित-जीवहित-धर्माकर-हर्षदत्त-संघप्रमोद-विवेकसमुद्र-देवगुरुभक्त-चारित्रगिरि-सर्वज्ञभक्त-त्रिलोकानन्ददीक्षा। १३०५ आषाढ सुदि १०, श्रीमहावीर-श्रीऋषभनाथ-

श्रीनेमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथबिम्बानां नन्दीश्वरस्य च प्रह्लादनपुरे प्रतिष्ठा।

इति श्रीजिनचन्द्रसूरि-श्रीजिनपतिसूरि-श्रीजिनेश्वरसूरिसत्कभजनमनश्चमत्कारिप्रभावनावार्त्तानामपरिमितत्वेऽपि तन्मध्यवर्त्तिन्यः कतिचित् स्थूलाः स्थूला वार्ताः श्रीचतुर्विधसंघप्रमोदार्थम्।

ढिल्लीवास्तव्यसाधुसाहुलिसुत सा० हेमाभ्यर्थनया।
जिनपालोपाध्यायैरित्थं ग्रथिताः स्वगुरुवार्ताः॥ [७५]

लोकभाषानुसारिण्यः सुखबोध्या भवन्त्यतः। इत्येकवचनस्थाने क्वाऽपि [च] बहूक्तिरपि॥ [७६]

बालावबोधनायैव सन्ध्यभावः कचित्कृतः। इति शुद्धिकचेनोभिः सद्भिर्ज्ञेयं स्वचेतसि॥ [७७]

बुद्धये शुद्धये ज्ञानवृद्धयै जनसमृद्धये। चतुर्विधस्य संघस्य भण्यमाना भवन्त्यतः॥ [७८]

॥ उद्देशतो ग्रं० (?) १२४ ॥

६८. सं० १३०६ ज्येष्ठ सुदि १३, श्रीश्रीमाले कुन्थुनाथारनाथप्रतिमाप्रतिष्ठा। द्वितीयवेलाध्वजारोपणं च कारितं सा० धीधाकेन।

सं० १३०९ श्रीप्रह्लादनपुरे मार्गशीर्ष सुदि १२, समाधिशेखर-गुणशेखर-देवशेखर-साधुभक्त-वीरवल्लभमुनीनां तथा मुक्तिसुन्दरिसाध्वीदीक्षा। तस्मिन्नेव वर्षे माघ सुदि १०, श्रीशान्तिनाथ-अजितनाथ-धर्मनाथ-वासुपूज्य-मुनिसुव्रत-सीमन्धरस्वामि-पद्मनाभप्रतिमायाः प्रतिष्ठा कारिता च सा० विमलचन्द्राहीरादिसमुदायेन। तथा हि-साधुविमलचन्द्रेण श्रीशान्तिनाथो नगरकोट्टप्रासादस्थो महाद्रव्यव्ययेन प्रतिष्ठापितः, अजितनाथो वल०माधारणेन, धर्मनाथो विमलचन्द्रपुत्रक्षेमसिंहेन, वासुपूज्यः सर्वश्राविकाभिः, मुनिसुव्रतो गोष्ठिकरुयेहडेन, सीमन्धरस्वामी गोष्ठिकहीराकेण, पद्मनाभो महाभावसारेण हालाकेन श्रीप्रह्लादनपुरे। तस्मिन्नेव संवत्सरे वाग्भटमेरौ श्रीआदिनाथशिखरोपरि स्वर्णदण्ड-स्वर्णकलशौ प्रतिष्ठापितौ, सहजापुत्रेण वस्थडेन महोत्सवेन च तत्र गत्वाऽऽरोपितौ।

सं० १३१० वैशाख सुदि ११, श्रीजावालिपुरे चारित्रवल्लभ-हेमपर्वत-अचलचित्त-लोभनिधि-मोदमन्दिर-गजकीर्ति-रत्नाकर-गतमोह-देवप्रमोद-वीराणन्द-विगतदोष-राजललित-बहुचरित्र-विमलप्रज्ञ-रत्ननिधाना इति पञ्चदश साधवः कृताः। चारित्रवल्लभ-विमलप्रज्ञौ पितृ पुत्रावेतन्मध्याज्ज्ञेयौ। तस्मिन्नेव वैशाखे १३ स्वातिनक्षत्रे शनौ वारे श्रीमहावीरविधिचैत्ये राजश्रीउदयसिंहदेवादिराजलोकसमागमे मह०जैत्रसिंहे राजमान्ये सति श्रीप्रह्लादनपुरीय-वागडीयप्रमुखसमर्थसमुदायमेलापके सति चतुर्विंशतिजिनालय-सप्ततिशत-संमेत-नन्दीश्वर-तीर्थरूपमातृ-हीरासत्कश्रीनेमिनाथ-उज्जयिनीसत्कश्रीमहावीर-श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ श्रे०हरिपालसत्कसुधर्मस्वामि-श्रीजिनदत्तसूरि-सीमन्धरस्वामि-युगमन्धरस्वामिप्रभृतिनानाप्रतिमानां महामहोत्सवेन प्रतिष्ठा जज्ञे। प्रमोदश्रीगणिन्या महत्तरापदं च लक्ष्मीनिधिनाम कृतम्, ज्ञानमालागणिन्याः प्रवर्तिनीपदम्।

सं० १३११ वैशाख सुदि ६, श्रीप्रह्लादनपुरे श्रीचन्द्रप्रभस्वामिविधिचैत्ये श्रीभीमपल्लीप्रासादस्थितश्रीमहावीरप्रतिमा साधुमदनपालेन महामहोत्सवेन निजभुजोपार्जितद्रव्यव्ययेन प्रतिष्ठापिता। श्रीऋषभनाथः समुदायेन, अनन्तनाथो बोहित्थेन, अभिनन्दनो मोल्हाकेन, वाग्भटमेरुनिमित्तं श्रीनेमिनाथ आम्नासहोदरेण भावसारेण केल्हणेन, श्रीजिनदत्तसूरिप्रतिमा हरिपालल‍घुभ्रात्रा श्रे० कुमारपालेन। श्रीप्रह्लादनपुरे श्रीजिनपालोपाध्यायानामनशनपूर्वं योगमनम्।

सं० १३१२ वैशाख सुदि १५, चंद्रकीर्तिगणेरुपाध्यायपदं श्रीचन्द्रतिलकोपाध्याय इति नाम कृतम्, वाचना-

चार्यपदं प्रबोधचन्द्रगणि-लक्ष्मीतिलकगण्योश्च संजातम्। तदनन्तरं ज्येष्ठ वदि १, उपशमचित्त-पवित्रचित्त-आचारनिधि-त्रिलोकनिधिदीक्षा।

सं० १३१३ फाल्गुन सुदि ४, श्रीया(जा)बालिपुरे स्वर्णगिर्युपरि महाप्रासादे वाहित्रिकोद्धरणप्रतिष्ठापितश्रीशान्तिनाथस्थापना। चैत्र सुदि १४,कनककीर्त्ति-विबुधराज-राजशेखर-गुणशेखर-जयलक्ष्मी-कल्याणनिधि-प्रमोदलक्ष्मी-गच्छवृद्धिदीक्षा। अनन्तरं वैशाख वदि १, श्रीअजितनाथप्रतिमा प्रतिष्ठापिता। पद्म-मूलिगाभ्यां बहुद्रव्यव्ययेन स्थापिता द्वितीयदेवगृहे। ततः प्रह्लादनपुरे आषाढ सुदि १०, भावनातिलक-भरतकीर्त्तिदीक्षा। श्रीभीमपल्ल्यां च तस्मिन्नेव दिने श्रीमहावीरस्थापना च।

सं० १३१४ माघ सुदि १३, कनकगिर्युपरिनिर्मापितप्रधानप्रासादोपरि ध्वजारोपः। श्रीउदयसिंहराजप्रसादपूर्वकं निर्विघ्नं संजातं। आषाढ सुदि १०, सकलहित-राजदर्शनसाध्वोर्बुद्धिसमृद्धि-ऋद्धिसुन्दरि-रत्नवृष्टिसाध्वीनां च श्रीप्रह्लादनपुरे महाविस्तरेण प्रव्रज्या।

सं० १३१६ श्रीजाबालिपुरे माघ सुदि१, धर्मसुन्दरिगणिन्याः प्रवर्तिनीपदम्। माघ सुदि ३, पूर्णशेखर-कनककलशयोः प्रव्रज्या। माघ सुदि६, स्वर्णगिरौ श्रीशान्तिनाथप्रासादे स्वर्णकलश-स्वर्णदण्डारोपणं पद्म-मूलिगाभ्यां श्रीचाचिगदेवराज्ये कारितम्। आषाढ सुदि ११, श्रीबीजापुरे श्रीवासुपूज्यजिनमन्दिरे स्वर्णकलश-स्वर्णदण्डध्वजारोपणं विशेषेण श्रीसोमभक्त्रिणा कारितम्।

सं० १३१७ माघ सुदि १२, लक्ष्मीतिलकगणेरुपाध्यायपदं महर्द्ध्या पद्माकरस्य दीक्षा च। माघ सुदि १४, श्रीजाबालिपुरालङ्कारश्रीमहावीरजिनेन्द्रप्रासादचतुर्विंशतिदेवगृहिकासु स्वर्णकलश-स्वर्णदण्डध्वजानामारोपणं सर्वसमुदायेन कारितम्। फाल्गुन सुदि १२, श्रीशान्तनपुरे श्रीअजितस्वामिप्रासादे ध्वजप्रतिष्ठारोपौ वा० पूर्णकलशगणिद्वारेण। श्रीभीमपल्ल्यां श्रीमण्डलिकराज्ये दण्डाधिपतिश्रीमीलगण (सीलण ?) सान्निध्येन अनेकप्रह्लादनपुरादिसमुदायमेलकेन सा०खीमडसुत सा० जगद्धर-तदङ्गजरत्न सा० भुवनेन समुदायसहितेन महर्द्ध्या, वैशाख सुदि १० दशम्यां सोमवारे, श्रीमहावीरकेवलज्ञानमहोत्सवदिने, मन्दिरतिलकनामश्रीवर्धमानजिनप्रासादशिखरे स्वर्णदण्ड-स्वर्णकलशप्रतिष्ठा तयोरध्यारोपश्च कारितः। तथा श्रेष्ठिहरिपालेन तद्भ्रात्रा श्रेष्ठिकुमारपालेन श्रीसरस्वतीप्रतिमा अनन्यविद्याचक्रवर्तिकल्पा शशाङ्कशुभ्रप्रभाऽनल्पा सकलसंघसुबुद्धिप्रदायिनी एकपञ्चाशदङ्गुलप्रमाणा महर्द्ध्या प्रतिष्ठापिता। अङ्गुलिकत्रिंशत्प्रमाणा श्रीशान्तिनाथप्रतिमा सा० राजदेवेन, ऋषभनाथप्रतिमा मूलदेव-क्षेमन्धराभ्याम्, श्रीमहावीरप्रतिमा सावदेवपुत्रेण पूर्णसिंहेन, आजडसुतबोधाकेन श्रीपार्श्वनाथप्रतिमा, धारसिंहेन श्रीपार्श्वनाथप्रतिमा भीमभुजबलपराक्रमक्षेत्रपालबिम्बं च, श्रीऋषभनाथ महावीरप्रतिमे पूनाणीऊदाकेन, चतुर्विंशतिपट्टाजितप्रतिमे सा० बालचन्द्रेण, श्रीऋषभनाथप्रतिमा श्रेष्ठिधान्धलेन भावडसुतेन, शान्तिनाथप्रतिमा वो० शान्तिगेन, श्रीऋषभनाथप्रतिमा आमणागेन, महावीरप्रतिमात्रयं साढलपुत्रधनपालेन, वमा० मोजाकेन शान्तिनाथप्रतिमा, श्रेष्ठिहरिपाल कुमारपालाभ्यां जिनदत्तसूरिमूर्त्ति-चन्द्रप्रभस्वामिप्रतिमे, रूपचन्द्रसुतनरपतिना श्रीनेमिनाथबिम्बं, स्तम्भ० धनपालेन, चण्डे० बीजाकेन, अम्बिकाप्रतिमा समुदायेन। द्वादश्यां सौम्यमूर्त्ति-न्यायलक्ष्मीदीक्षा।

संवत १३१८ पौष सुदि ३, संयमकस्य दीक्षा धर्मसूर्तिगणेर्वाचनाचार्यपदं च।

सं० १३१९ मार्ग० सुदि ७, अभयतिलकगणेरुपाध्यायपदम्। तस्मिन्नेव वर्षे श्रीअभयतिलकोपाध्यायैः पं० देवमूर्त्यादिसाधुपरिवृतैरुज्जयिन्यां विहृत्य तपोमतीयं पं० विद्यानन्दं निर्जित्य प्रासुकं शीतलं जलं यतिरस-[कल्पत ?] इति सिद्धान्तबलेन व्यवसाप्य च जयपत्रं गृहीतम्। तस्य च प्रह्लादनपुरादिषु विस्तरेण प्रवेश-

कोत्सवः। सं० १३१९ माघ वदि ५, विजयसिद्धिसाध्व्या दीक्षा। माघ वदि ६, श्रीचन्द्रप्रभस्वामिप्रतिमा अजितनाथप्रतिमा सुमतिनाथप्रतिमा श्रेष्ठिबुधचन्द्रेण महामहोत्सवेन प्रतिष्ठापिता। श्रीऋषभनाथप्रतिमा सा० भुवनपालेन, धर्मनाथप्रतिमा जिसधरसुतेन जीविगश्रावकेण, सुपार्श्वप्रतिमा रत्न-पेथडश्रावकाभ्याम्, श्रीजिनवल्लभसूरिमूर्तिः सिद्धान्तयक्षमूर्तिश्च श्रेष्ठिहरिपाल-तद्भ्रातृश्रेष्ठिकुमारपालाभ्याम्। श्रीपत्तने श्रीशान्तिनाथदेवप्रासादे अक्षततृतीयायां दण्डकलशारोपः सा० अभयचन्द्रेण कारापितः।

सं० १३२१ फाल्गुन सुदि २, गुरौ चित्तसमाधि-क्षान्तिनिधिसाध्व्योर्दीक्षा। सं० १३२१ फाल्गुन वदि ११, श्रीप्रह्लादनपुरे आलयप्रतिमात्रयस्य दण्डस्य च प्रतिष्ठां कारयित्वा जेसलमेरवास्तव्यसमुदायेन सा० असोधवलकारिते देवगृहशिखरे जेसलमेरौ ज्येष्ठ सुदि १२ श्रीपार्श्वनाथस्य स्थापना दण्डध्वजारोपश्च कारितः। सं० १३२१ ज्येष्ठ सुदि १५, चारित्रशेखर–लक्ष्मीनिवास–रत्नावतारसाधवो दीक्षिता विक्रमपुरे।

सं० १३२२ माघ सुदि १४, त्रिदशानन्द-शान्तमूर्त्ति-त्रिभुवनानन्द-कीर्त्तिमण्डल-सुबुद्धिराज-सर्वराज-वीरप्रिय-जयवल्लभ-लक्ष्मीराज-हेमसेननामानो दश साधवः, मुक्तिवल्लभा-नेमिभक्ति-मङ्गलनिधि-प्रियदर्शनाभिधानाश्चतस्रः साध्व्यश्च कृताः। श्रीविक्रमपुरे वैशाखसुदि ६ वीरसुन्दरी साध्वी च।

१३२३ मार्ग० वदि ५, नेमिध्वजसाधुः, विनयसिद्धि-आगमवृद्धिसाध्व्यौ च कृताः। जावालिपुरे, सं०१३२३ वैशाख सुदि १३, देवमूर्त्तिगणेर्वाचनाचार्यपदम्; द्वितीयज्येष्ठ सुदि १०, जेसलमेरुश्रीपार्श्वविधिचैत्यारोपार्थं स्वर्णदण्ड-कलशयोः सा० नेमिकुमार–सा० गणदेवकारितयोः प्रतिष्ठा; विवेकसमुद्रगणेर्वाचनाचार्यपदस्थापना च कृता। आषाढ वदि १, हीराकरसाधुः कृतः।

सं० १३२४ वर्षे मार्ग० वदि २ शनौ, कुलभूषणसाधु-हेमभूषणसाधुद्वयम्, अनन्तलक्ष्मी-व्रतलक्ष्मी-एकलक्ष्मी–प्रधानलक्ष्मी इति साध्वीपञ्चकं (चतुष्टयं ?) च महर्द्ध्या श्रीजावालिपुरे कृतम्।

सं० १३२५ वैशाख सुदि १०, श्रीजावालिपुरे श्रीमहावीरविधिचैत्ये श्रीप्रह्लादनपुरीय-स्तम्भतीर्थीय-श्रीमेदपाटीय-श्रीउच्चीय-श्रीवाग्गडीयप्रमुखसर्वसमुदायमेलापके व्रतग्रहण-मालारोप-सम्यक्त्वारोप-सामायिकारोपादिनन्दी महाविस्तरेण संजज्ञे। तत्र गजेन्द्रबल इति साधुः, पद्मावतीति साध्वी च कृता। तथा वैशाख सुदि १४, श्रीमहावीरविधिचैत्य एव चतुर्विंशतिजिनबिम्बानां चतुर्विंशतिध्वजदण्डानां सीमन्धरस्वामि-युगमन्धरस्वामि-बाहु-सुबाहुबिम्बानाम्, अन्येषां च प्रभूतबिम्बानां महाविस्तरेण प्रतिष्ठा जज्ञे। तथा ज्येष्ठ वदि ४, सुवर्णगिरौ श्रीशान्तिनाथविधिचैत्ये चतुर्विंशतिदेवगृहिकामध्ये तेषामेव चतुर्विंशतिजिनबिम्बानां सीमन्धरस्वामि-युगमन्धरस्वामि-बाहु-सुबाहुबिम्बानां सर्वसमुदायमेलकेन महामहोत्सवेन विस्तरेण स्थापनामहोत्सवः संजातः। तत्रैव च दिने धर्मतिलकगणेर्वाचनाचार्यपदम्। तथा वैशाख सुदि १४, श्रीजेसलमेरौ श्रीपार्श्वनाथविधिचैत्ये सा० नेमिकुमार–सा० गणदेवकारितयोः सुवर्णदण्ड-सुवर्णकलशयोः सविशेषमहोत्सवो विस्तरेण संजातः।

६९. सं० १३२६ वर्षे, सा० भुवनपालसुत सा० अभयचन्द्रविरचितेन, मं० अजितसुत मं० देदासुश्रावकाङ्गीकृत–तपच्छेवाणप्राग्भारेण, सा०अभयचन्द्र-महं० अजितसुत महं०देदा सा०राजदेव-श्रेष्ठिकुमारपाल-सा०नीम्बदेवसुतसा० श्रीपति–सा० मूलिग–सा० धनपालप्रमुखेण चतुर्दिग्भवेन विधिसंघेन सह तद्वाडम्यर्थनया श्रीशत्रुञ्जयादितीर्थयात्रार्थं श्रीजिनेश्वरसूरिगुरुषु श्रीजिनरत्नाचार्य-श्रीचन्द्रतिलकोपाध्याय-कुमुदचन्द्रप्रभृतिसाधु २३ पर्युपास्यमानेषु, श्रीलक्ष्मीनिधिमहत्तराप्रमुखसाध्वी१३परिवृतेषु, चैत्र वदि१३,श्रीप्रह्लादनपुरात् प्रचलितेषु,स्थाने स्थाने श्रीविधिसंघे चमत्कारकारिणीं विधिमार्गप्रभावनां कुर्वाणे श्रीतारणमहातीर्थे महं० देदाकेन द्रं० १५०० इन्द्रपदम्, पूनाकसुतेन सा० पेथडेन

द्रं० ४०० मन्त्रिपदम्, कुलचन्द्रसुतवीजडेन द्रं० १०० सारथिपदम्, सा०राजाकेन द्रं० ११० भाण्डागारिकपदम्, महं देदाश्राविकाद्वयेन द्रं० ३०० आद्यचामरधारिपदम्, सा० जयदेव-तेजपालभार्याभ्यां पाश्चात्यचामरधारिपदं तिलकेन; तेजपालेन ९०छत्रधरपदं महामहोत्सवेन गृहीतम्। श्रीबीजापुरे श्रीवासुपूज्यविधिचैत्ये सा०श्रीपतिना द्रं० ३१६ माला गृहीता। द्रम्मसहस्र ३ आयपदे जाताः। श्रीस्तम्भनकमहातीर्थे बहुगुणभ्रात्रा धकणेन द्रं०६१६ इन्द्रपदम्, साकरिया-सहजपालेन द्रं०१४० मन्त्रिपदम्, सा०पाल्हश्रावकेण द्रं०२३२ चामरधारिचतुष्कपदम्, द्रं०८० प्रतीहारपदं सांगण-पुत्रेण, द्रं० ७० सारथिपदं पाल्हपुत्रेण, भां० राजाकपुत्रनावन्धरेण द्रं० ८० भाण्डागारिकपदम्, बहुगुणेन द्रं० ४० छत्रधरपदम्, कां०पारसपुत्रसोमाकेन द्रं० ५० स्थगिकावाहकपदं गृहीतम्। सर्वसंख्यया पदेषु द्रं० १३०८, आयपदे ५००० संघेन सफलीकृतानि।

श्रीशत्रुञ्जयमहातीर्थे सा० मूलिगेन द्रं० १४७४ इन्द्रपदम्, महं० देदाकपुत्रमहं० पूनसीहेन द्रं० ८०० मन्त्रि-पदम्, भां० राजापुत्रहरिसलेन द्रं० ४२० भाण्डागारिकपदं गृहीतम्। सालाकेन २७४ प्रतीहारपदम्, महं० साम-न्तपुत्रआह्लणसिंहेन २२४ सारथिपदम्, सा० धनपालपुत्रभीन्धाकेन ११६ छत्रधरपदम्, छो०देहडेन २८० पार-धियपदम्, पद्मसिंहेन द्रं० १०० स्थगिकावाहकपदम्, बहुगुणेन ४५० आद्यचामरधारिपदम्, भां० राजाकेन १००, सां०रूपाकेन १०० पाश्चात्यचामरधारिपदम्। सर्वाग्रेण पदेषु ५३३८। सा० पाल्हश्रावकेण ३८ लेप्यमयमूलनायक-युगादिदेवमुखोद्घाटनमाला, सा० पद्मसुतसाहुदाहडेन २०४ मूलनायकयुगादिदेवमाला, महं देदाजनन्या हीरलश्रावि-कया ५०० मरुदेवीस्वामिनीमाला, सा०राजदेवजनन्या तीवी(?)श्राविकया १४० पुण्डरीकगणधरमाला, तत्पुत्रेण मूल-राजेन १७० कपर्दियक्षमाला गृहीता। सर्वसंख्ययाऽऽयपदे द्रं०१७०००।

श्रीउज्जयन्तमहातीर्थे सा०श्रीपतिना द्रं० २१०० इन्द्रपदम्, श्रेष्ठिहरिपालपुत्रपूर्णपालेन ६१६ मन्त्रिपदम्, पाल्ह-भ्रा० २९० प्रतीहारपदम्, भां० राजपुत्रेण आटाभिधेन ५०० भाण्डागारिकपदम्, कां० मनोरथेन २६० सारथि-पदम्, सा० राजदेवभ्रातृपुत्रेण भुवणाकेन १५० पारिधियपदम्, सा० राजदेवेन पु० सलखणेन १४० स्थगिकावा-हकपदम्, धनदेवेन ११३ छत्रधरपदम्, सा० श्रीपतिना २०० प्रथमचामरधारिपदम्, ८५ चतुर्थचामरधारिपदम्, च। पं०सा० बहुगुणेन १६० द्वितीयचामरधारिपदम्, ९० तृतीयचामरधारिपदं च। पं० हांसिलसुत पं० देहडेन ५१६ श्रीनेमिनाथमुखोद्घाटनमाला, सा० अभयचन्द्रमात्रा त्रिहुण(?)पालहीश्राविकया २४० राजीमतीमाला, सा० श्रीपतिमात्रा मोहूश्राविकया ३५ अम्बिकामाला, पाल्हणसुतदेवकुमारेण १४४ साम्बमाला, सा० अभयचन्द्रपुत्रवीर-धवलेन १८० प्रद्युम्नमाला, सा०राजदेवभ्रात्रा मोनाकेन ३११ कल्याणत्रयमाला, सा० पाल्हभगिन्या गगलश्राविकया २५० श्रीशत्रुञ्जयऋषभदेवमाला, सा० पाल्हमात्रा पाहीश्राविकया १२४ मरुदेवीमाला, सा० उदापुत्रसीमसिंहेन १०८ पुण्डरीकमाला, सा० धणपालेन ११६ अवलोकनाशिखरमाला, सा० राजदेवभ्रातृगुणधरपुत्रवीजडेन ६४ कपर्दियक्षमाला गृहीता। एवं सर्वाग्रेण ७०९७। शत्रुञ्जये देवभाण्डागारे उद्ग्राहः सहस्र २०, उज्जयन्ते सहस्र १७ संजाताः।

श्रीजिनेश्वरसूरिभिः श्रीउज्जयन्ते श्रीनेमिनाथराजकुलो ज्येष्ठवदि.....प्रबोधसमुद्र-विनयसमुद्रयोः पद्मस्य दीक्षामहोत्सवो मालारोपणादिमहोत्सवश्च कृतः। ततो देवपत्तने पतियाणंदकं यादिकसंदना विस्तरेण चतुर्विधसंघसहितैः श्रीजिनेश्वरसूरिभिः महत्ली(?)[हि]ताग्नि चैत्यपरिपाटी कृता। सोऽपि पतियाणानन्दप्रमुखः प्रतिबोधिताः।

एवं स्थाने स्थाने महाप्रभावनाकरणतः सकलाहतनिजजन्मसामर्थ्येन समस्तसंघलोकेन विधिमार्गसंघेन सह तीर्थ-यात्रां विधाय, आषाढ सुदि ९, सा० अभयचन्द्रेण देवालयस्य श्रीजिनेश्वरसूरियुग चतुर्विधसंघसमन्वितस्य प्रवे-

शक्महोत्सवः सकलनगरालोकचमत्कारकारी [कृतः] श्रीप्रह्लादनपुरे महता विस्तरेण महोत्सवेन श्रीजिनेश्वरसूरिसुगुरुप्रसादान्निर्विघ्नश्रेयसेऽस्तु।

सुमेरौ निर्मेरैरपि सपदि जग्मे तरुवरैः-
शृंगव्या दिव्यन्ते सलिलनिधौ चिन्तामणिगणैः।
कलौ काले वीक्ष्यानवधिमभितो याचकगणं
न तस्थौ केनाऽपि स्थिरमभयचन्द्रस्तु विजयी॥ [७९]

धैर्यं ते स विलोकतामभय! यः शैलेन्द्रधैर्योत्मना,
गाम्भीर्यं स तवेक्षतां जलनिधेर्गाम्भीर्यमिच्छुश्च यः।
भक्तिं देवगुरौ स पश्यतु तव श्रीश्रेणिकं यः स्तुते,
यात्रां तीर्थपतेः स वेत्तु भवतो यः स सांप्रतीं ज्ञीप्सति॥ [८०]

सं० १३२८ वैशाख सुदि १४, श्रीजावालिपुरे सा० क्षेमसिंहेन श्रीचन्द्रप्रभस्वामिमहाबिम्बस्य, महं पूर्णसिंहेन श्रीऋषभदेवस्य, महं ब्रह्मदेवेन श्रीमहावीरबिम्बस्य प्रतिष्ठामहोत्सवः कारितः। ज्येष्ठ वदि ४, हेमप्रभा साध्वी कृता। सं० १३३० वैशाख वदि ६, प्रबोधमूर्त्तिगणेर्वाचनाचार्यपदम्, कल्याणऋद्धिगणिन्याः प्रवर्तिनीपदम्। वैशाख वदि ८, श्रीस्वर्णगिरौ श्रीचन्द्रप्रभस्वामिमहाबिम्बं शिखरमध्ये स्थापितम्।

७०. एवं प्रतिदिनचमत्कृतविश्वविश्वचित्तानि नैरानि सच्चरित्राणि कुर्वन्तः, श्रीमहावीरतीर्थराजतीर्थं प्रभावयन्तः, प्रोच्छलद्व्यापच्छहरिरौद्रसंसारमहाम्भोधिमज्जज्जन्तुजातं निस्तारयन्तः, समस्तप्राणिप्राज्यमनोराज्यमालाः कल्पद्रुवरपूरयन्तः, स्ववाक्चातुरीतर्जितदेवसूरयः प्रभुश्रीजिनेश्वरसूरयो लोकोत्तरज्ञानसारभाण्डागाराः श्रीजावालिपुरस्थिताः स्वान्त्यसमयं ज्ञात्वा सर्वसंघसमक्षं संक्षेपेण स्वहस्तेनानेकगुणमणिनिधिं वा० प्रबोधमूर्त्तिगणिं १३३१ आश्विनकृष्णपञ्चम्यां प्रातः स्वपदे समस्थापयत्। श्रीजिनप्रबोधसूरिरिति नाम ददुः। श्रीप्रह्लादनपुरस्थितान् श्रीजिनरत्नाचार्यानेवमादिशंश्च यच्चतुर्मास्यनन्तरे सर्वगच्छं समुदायं च मेलयित्वा युष्माभिः प्रधानलग्ने यथाविधि विस्तरेण [सूरिपदस्थापना] कार्या। ततः श्रीपूज्यैरनशनं प्रतिपन्नम्। तदनन्तर विशेषतः श्रीमत्पञ्चपरमेष्ठिनमस्कारमन्त्रराज ध्यायन्तोऽनेका आराधना गुणयन्तः सर्वसत्त्वान् क्षमयन्तः शुभध्यानाग्रमारूढा आश्विनकृष्णषष्ठ्या रात्रिप्रथमघटिकाद्वये गते श्रीपूज्याः स्वर्गाङ्गणविभूषणा बभूवुः।

ततः प्रभाते समुदायेन सर्वराजलोकसहितेन स्थाने स्थाने प्रेक्षणीयके संजायमाने नान्दीतूर्ये वाद्यमाने श्रीमत्पूज्यसंस्कारमहोत्सवः सर्वजनचमत्कारकः कृतः। तत्र च सर्वसमुदायसहितेन सा० क्षेमसिंहेन स्तूपः कारितः।

*

७१. ततश्चतुर्मास्यनन्तर श्रीजिनरत्नाचार्याः श्रीजिनेश्वरसूरिसुगुरूपदिष्टश्रीजिनप्रबोधसूरिविस्तरपदस्थापनां चिकीर्षवः श्रीजावालिपुरे समागमन्। ततः सर्वदिक्समुदायमेलापके श्रीचन्द्रतिलकोपाध्याय श्रीतिलकोपाध्याय वा० पद्मदेवगणिप्रमुखानेकसाधुमेलापके च प्रतिदिनं दीनानाथदुःस्थितलक्ष्मीदानश्रीचतुर्विधसंघसत्कारविधानादिषु महोत्सवेषु जगज्जनमनोमयूरताण्डवाडम्बराम्भोधरेषु भव्यिकलोकैर्विधीयमानेषु, सं० १३३१ फाल्गुन वदि ८म्यां, श्रीजिनरत्नाचार्यैः श्रीजिनप्रबोधसूरीणा पदस्थापना चक्रे। ततः श्रीजिनप्रबोधसूरिभिः फाल्गुन सुदि ५, स्थिरकीर्त्ति भुवनकीर्त्तिमुनी केवलप्रभा हर्षप्रभा जयप्रभा यशःप्रभासाध्व्यश्च दीक्षिताः।

सं० १३३२ ज्येष्ठ वदि १, शुक्रे श्रीजावालिपुरे सर्वदेशसमुदायमेलापके महाविस्तरेण सा० क्षेमसिंहश्रावकोत्तंसेन नमि-विनमिपरिवृतश्रीयुगादिजिन-श्रीमहावीर-अवलोकनाशिखर-श्रीनेमिनाथबिम्बानाम् शाम्ब-प्रद्युम्नमूर्त्योः श्रीजिनेश्वरसूरिमूर्त्तेर्धनदयक्षमूर्त्ति-श्रीसुवर्णगिरि-श्रीचन्द्रप्रभस्वामि-वैजयन्त्याश्च प्रतिष्ठा कारिता। श्रीयोगिनीपुरवास्तव्यदलिकहरुश्रावकेण श्रीनेमिनाथस्य, सा० हरिचन्द्रश्रावकेण श्रीशान्तिनाथस्य, अन्येषामपि प्रभूतबिम्बानां प्रतिष्ठा जज्ञे। ज्येष्ठ वदि ६, श्रीसुवर्णगिरौ श्रीचन्द्रप्रभस्वामिध्वजारोपः। ज्येष्ठ वदि ९, स्तूपे श्रीजिनेश्वरसूरिमूर्त्तेः स्थापना। तस्मिन्नेव दिने विमलप्रज्ञस्योपाध्यायपदम्, राजतिलकस्य च वाचनाचार्यपदम्। ज्येष्ठ सुदि ३, गच्छकीर्त्ति-चारित्रकीर्त्ति-क्षेमकीर्त्तिमुनयो लब्धिमाला-पुण्यमालासाध्व्यौ च दीक्षिताः।

७२. सं० १३३३ माघ वदि १३, श्रीजावालिपुरे कुशलश्रीगणिन्याः प्रवर्त्तिनीपदम्। अत्रैव संवत्सरे सा० विमलचन्द्रसुत सा० क्षेमसिंह-सा० चाहडविरचितेन मन्त्रिदेदासुतमन्त्रिमहणसिंहनिर्व्यूढपच्छेवाणप्राग्भारेण सा०क्षेमसिंह-सा० चाहड-सा० हेमचन्द्र-श्रेष्ठिहरिपाल-योगिनीपुरवास्तव्य सा०जेणूसुत सा० पूर्णपाल-सौवर्णिकधान्धलसुतसा० भीम-मन्त्रिदेदापुत्रमन्त्रिमहणसिंहप्रमुखेन सर्वदिग्भवेन विधिसंघेन सह तद्गाढोपरोधेन श्रीशत्रुञ्जयादिमहातीर्थयात्रायै श्रीजिनप्रबोधसूरिसुगुरुषु श्रीजिनरत्नाचार्येषु श्रीलक्ष्मीतिलकोपाध्याय-श्रीविमलप्रज्ञोपाध्याय-वा० पद्मदेवगणि-वा० राजतिलकगणिप्रमुखसाधु २७ सेव्यमानचरणारविन्देषु, प्र० ज्ञानमालागणिनी-प्र०कुशलश्री-प्र०कल्याणऋद्धिप्रभृतिसाध्वी २१ परिवृतेषु, चैत्र वदि ५ श्रीजावाल(लि)पुरात् प्रस्थितेषु, स्थाने स्थाने श्रीविधिसंघसर्वजनमनश्चमत्कारकारिणीं विधिमार्गप्रभावनां विदधानेषु, श्रीश्रीमाले श्रीशान्तिनाथविधिचैत्ये द्रं० १४७४ विधिसंघेन सफलीकृताः।

तथा श्रीप्रह्लादनपुरादिषु विस्तरेण चैत्यपरिपाट्यादिना प्रभावनां विधाय, श्रीतारणतीर्थे सा० नीम्बदेवसुत सा० हेमाकेन द्रं० ११७४ इन्द्रपदम्, इन्द्रपरिवारेण द्रं० २१०० मन्त्र्यादिपदं गृहीतम्। कलशाद्यायपदे सर्वसंख्ययोद्देशतो द्रं० ५२७४ विधिसंघेन सफलिताः। तथा वीजापुरे श्रीवासुपूज्यविधिचैत्ये उद्देशतो द्रं० सहस्र ४ मालादिग्रहणेन श्रीसमुदायेन कृतार्था विदधिरे। तथा श्रीस्तम्भनकमहातीर्थे गोष्ठिकक्षेमन्धरसुत गो० यशोधवलेन द्रं०११७४ इन्द्रपदम्। इन्द्रपरिवारेण द्रं० २४०० मन्त्र्यादिपदं गृहीतम्। कलशाद्यायपदे सर्वसंख्ययोद्देशतो द्रं० सहस्र ७ संघेन कृतार्थी चक्रिरे। तथा भृगुकच्छे द्रं० ४७०० समुदायेन स्थिरीकृताः।

तथा श्रीशत्रुञ्जये श्रीयुगादिदेवचैत्ये योगिनीपुरवास्तव्य सा०पूनपालेन द्रं० ३२०० इन्द्रपदम्, इन्द्रपरिवारेण द्रं० सहस्र ३ मन्त्र्यादिपदं जगृहे। श्रेष्ठिहरिपालेन द्रं० ४२०० पाद्यपदे। उद्देशतः कलशाद्यायपदे सर्वाग्रेण द्रं० सहस्र २५ श्रीसंघेनाऽक्षया निर्ममिरे।

तथा युगादिदेवपुरतः श्रीजिनप्रबोधसूरिभिर्ज्येष्ठ वदि ७ जीवानन्दसाधोः पुण्यमाला-यशोमाला धर्ममालालक्ष्मीमालासाध्वीनां च दीक्षामहोत्सवो मालारोपणादिमहोत्सवश्च विस्तरेण विधिमार्गप्रभावनाय चक्रे। श्रीश्रेयांसविधिचैत्ये द्रं० ७०८, तथा उज्जयन्ते सा० मूलिगसुत सा० कुमारपालेन द्रं० ७५० इन्द्रपदम्, इन्द्रपरिवारेण २१५० मन्त्र्यादिपदम्। सा० हेमचन्द्रेण स्वामातृराजूनिमित्तं द्रं०सहस्र २ नेमिनाथमाला जगृहे। उद्देशतः कलशाद्यायपदे सर्वाग्रेण द्रं० सहस्र २३ श्रीसंघेन शाश्वतीकृताः।

एवं स्थाने स्थाने प्रवचनप्रोत्सर्पणाकारिप्रभावनाविधानतः सफलीकृतनिजजन्म-द्रव्य-कलासामर्थ्येन सम्पूर्णमनोरथेन श्रीविधिसंघेन सह महातीर्थयात्रां विधाय सा० क्षेमसिंहेन श्रीजावालिपुरे आषाढ सुदि १४ श्रीदेवालयस्य श्रीजिनप्रबोधसूरिप्रमुखचतुर्विधसंघसमन्वितस्य विधिमार्गप्रभावनया निर्विघ्नं निर्मापितः प्रवेशकमहोत्सवः। समस्तसंघप्रमोदायाभवदाचन्द्रार्कम्।

७३. सं० १३३४ मार्ग सुदि १३, रत्नवृष्टिगणिन्याः प्रवर्तिनीपदम्। श्रीभीमपल्ल्यां वैशाख वदि ५, श्रीनेमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथबिम्बयोः, श्रीजिनदत्तसूरिमूर्त्तेः, श्रीशान्तिनाथदेवगृहध्वजादण्डस्य च सा०राजदेवेन, श्रीगौतमस्वामिमूर्त्तेः सा० वयजलेन, प्रतिष्ठामहोत्सवः सर्वसमुदायमेलकेन महामहोत्सवेन कारितः। वैशाख वदि ९ मङ्गलकलशसाधोर्दीक्षा। ज्येष्ठ सुदि २, वाहडमेरौ विहारः। सं० १३३५ मार्ग० वदि ४, पद्मकीर्ति-सुधाकलश-तिलककीर्ति-लक्ष्मीकलश-नेमिप्रभ-हेमतिलक-नेमितिलकसाधूनां विस्तरेण दीक्षा।

७४. पौष सुदि ९, श्रीचित्रकूटे विहारः। तस्मिंश्च दिने सौवर्णिकधान्धल तत्पुत्र भां० वाहडश्रावकाभ्यां सकलराजलोकसकलनागरिकलोके......सविस्तरः प्रवेशकमहोत्सवः कारितः। फाल्गुन वदि ५, श्रीसमरसिंहमहाराजराज्ये प्रत्यासन्ननगरग्रामसमुदायमेलापके समस्तब्रह्मलोक-जटाधर-राजपुत्र-प्रधानक्षेत्रसिंह-कर्णराजप्रमुखराजलोकनागरिकलोकेषु मध्येभूय महोत्सवं कुर्वाणेषु सर्वदेवगृहसत्केषु एकादशसु मेघाडम्बर-छत्रेषु जनितशोभातिशयेषु स्थाने स्थाने व्याप्तदिगन्तेषु समुच्छलद्द्वादशविधनान्दीनिनादेषु सम्पूर्णविश्वमनोरथवितानं यथेच्छं प्रवर्तमाने दाने जगन्मनश्चमत्कारकारिजलयात्रापूर्वं चतुरशीतौ श्रीमुनिसुव्रतस्वामि-युगादिदेव-अजितनाथ-वासुपूज्यबिम्बानाम्, श्रीमहावीरसमवसरणस्य, सा० धनचन्द्रसुत सा० समुद्धारकारित श्रीपू(स ?)र्णगिरिश्रीशान्तिनाथविधिचैत्यसंस्थितश्रीशान्तिनाथपित्तलामयसमवसरणस्य, अन्यासां बहूनां प्रतिमानां शाम्बमूर्त्ति-दण्डाष्टकस्य च विधिमार्गजयजयारवकारकः सविस्तरं प्रतिष्ठामहोत्सवः संजातः। तस्मिन्नेव दिने चतुरशीतौ श्रीयुगादिदेव-श्रीनेमिनाथयोः स्थापना। फाल्गुन सुदि ५ चतुरशीतौ श्रीयुगादिदेव-श्रीनेमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथानां शाम्ब-प्रद्युम्नमुन्योरम्बिकायाश्च प्रासादेषु चप(त्व?)रहट्टी अम्बिकायाश्च ध्वजारोपमहोत्सवः सकलराज्यधुराधरणधौरेयराजपुत्रश्रीअरसिंहसान्निध्यात् तीर्थप्रोत्सर्पणाकारी सम्पन्नः। एते च सर्वे महामहोत्सवाः सौवर्णिकधान्धल-तत्पुत्ररत्नभां० वाहडाभ्यां सकलसमुदायसहिताभ्यां प्रभूतस्वस्वापतेयसफलीकरणेन कारिताः।

यद्रदहाग्रामे श्रीजिनदत्तसूरिप्रतिष्ठिते श्रीपार्श्वनाथविधिचैत्ये सा० आह्लाकेन महण-शान्झणादिपुत्रसहितेन कृतनवोद्धारे चित्रकूटे प्रतिष्ठितस्य दण्डस्य, फाल्गुन सुदि १४, विस्तरेणाध्यारोपः संजातः। जाहेडाग्रामे चैत्र सुदि १३, सम्यक्त्वारोपादिनन्दिमहोत्सवः सा० सोमलश्रावकेण सा० कुमारप्रभृतिस्वकुटुम्बसहितेन सविस्तरः कारितः। वरडियास्थाने, वैशाख वदि ६, श्रीपुण्डरीक-श्रीगौतमस्वामि-प्रद्युम्नमुनि-जिनवल्लभसूरि-जिनदत्तसूरि-जिनेश्वरसूरिमूर्तीनां सरस्वत्याश्च सविस्तरजलयात्रापूर्वं विस्तरेण निर्विघ्नं प्रतिष्ठामहोत्सवः, वैशाख वदि ७, मोहविजय-मुनिवल्लभयोर्दीक्षा, हेमप्रभगणेर्वाचनाचार्यपदं च संपन्नानि।

७५. सं० १३३६ ज्येष्ठसुदि ९ श्रीमत्पूज्यैर्युगप्रधान श्रीआर्यरक्षितचरित्रं संस्मरद्भिः स्वपितुः साधुश्रीचन्द्रस्य प्रान्त्यसमयं विज्ञाय श्रीचित्रकूटान्महता वेगेन श्रीप्रह्लादनपुरे समागत्य नद्धाण्याकूटदेवपत्तनीयाद्यनेकग्रामसंघमहामेलापकेन दीनानाथमनोमनोरथान् पूरयन्तः सप्तक्षेत्र्यां स्वं स्वं सफलीकुर्वन्तः, प्रभूतवस्तुदानप्रदानेन द्वादशविधनान्दीनिनादवादं विवादयतः, अनवरतशुद्धशीलालङ्कारधारकस्य, पुण्यरागाङ्गरागसुरभीकृताङ्गस्य, नानाविधस्वाध्यायरसताम्बूलेन सुभगस्य, सा० श्रीचन्द्रपरमश्रावकस्य संयमश्रीः प्रदत्ता। तेन च पुण्यात्मना प्रकटितप्रशेदितसोमदेवचरित्रेण प्रतिक्षणं वर्धमानसंवेगरसेन उच्चण्डव्यालवत्(?)कपालजालोपममपुण्यवतां दुष्प्रापं व्रतं प्राप्य सप्तदशभिरात्मप्रहारैर्निर्दलितसप्तदशविधासंयममहासुभटेन निरतिचारप्रतिपालितकृतप्रान्त्यप्रत्याख्यानेन कृतनवनिधानधनामृतपानेन अपूर्वचारित्रेण जगत्त्रयचित्रायता स्तम्भतीर्थाद्यनेकसंघानां वन्दारुभव्यजनवृन्दान् स्वकुलस्यानादसौवर्णकलशेन महामुनिना श्रीकलशेन श्रीपञ्चपरमेष्ठिमहामन्त्रपरमध्याने सोपानश्रेण्यारोहणं स्वर्गाद्रिसदस्याक्रमणमलंकृतं।

७६. सं० १३३७ वैशाख वदि ९ श्रीमज्जिनप्रबोधसूरिसुगुरुभिः श्रीसकलगूर्जरत्रापुरवरं श्रीबीजापुरं स्वचरणविचरणैः पावनीचक्रे । तस्मिंश्च सुवासरे सा० मोहन–श्रेष्ठिआसपालप्रमुखसमस्तसमुदायेन मन्त्रिविन्ध्यादित्य-ठ०उदयदेव-भां० लक्ष्मीधरप्रमुखराज्यधुरन्धरसकलनागरिकमहाजनमेलापकेन व्याप्तरोदसीरन्ध्रेषु विविधजनजनितानन्देषु, द्वादशविधनान्दीनिनादेषु जृम्भमाणेषु नानाविधविलासिनीजनवारेण स्थाने स्थाने प्रवरप्रेक्षणीयकेषु क्रियमाणेषु, उदात्तस्वरेण दानावर्जितभट्टलोकादिषु पठत्सु सत्सु, उत्तमदेशनानिनादानन्दितैर्मन्त्रिविन्ध्यादित्य-ठक्कुरोदयदेवप्रमुखराजपुरुषकुञ्जरैः संस्तूयमानानां धृतश्वेतातपत्रजिनेश्वरानुगानां सकलनगरमध्ये देवाधिदेवान् नमस्कुर्वाणानां श्रीमत्पूज्यानां महामिथ्यात्वोत्कटतयाऽदृष्टपूर्वत्वात् सकलपौरपुरन्ध्रीजनमनःक्षोभावहो नानाविधयाचकजनानां मनोऽभिलापपूरको त्रिविधभव्यप्राणिमनोहारको लीलयैव निर्दलितविघ्नैः(घ्नः?) लोकोत्तरः प्रभूतस्वस्वापतेयसफलीकरणेन सरङ्गः प्रवेशकमहामहोत्सवः कारितः ।

७७. तथा ज्येष्ठ वदि ४ शुक्रे, श्रीसारङ्गदेवमहाराजाधिराजरामराज्ये विजयमाने महामात्यमल्लदेवप्रतिशरीर-मं०विन्ध्यादित्ये शास्तरि सकलपृथ्वीतलसारश्रीगूर्जरत्रावनितानानापुरालङ्कारकिरीटायमानश्रीबीजापुरस्य माणिक्यभूते श्रीवासुपूज्यविधिचैत्ये अहमहमिकया नानाविधदेशसमायातमहर्द्धिकसंघमहामेलापकेषु, याचमानजनेन वाद्यमानदीप्रनान्दीनिनादविवादप्रारब्धकोलाहलपरिपूर्यमाणेषु दिगङ्गनाकर्णकोटरेषु, हर्षाङ्कुरपूरपूरितमनोमङ्गलपाठकजनपठ्यमानविरुदावलीपरःसहस्रेषु, स्थाने स्थाने प्रमुदितजनेन दीयमानेषु प्रधानरासकेषु, नानाविपणिमार्गेषु गीयमानेषु विविधप्रवरचर्चरीश्रेणिशतेषु, मथितमहामिथ्यात्वप्रबलमहामोहादिसुभटेषु जिनशासनमहाराजशास्त्रेषु, छत्रत्रयचामरालम्बादिषु अग्रतो ध्रियमाणेषु, पुरोवर्त्तिमहामन्त्रिविन्ध्यादित्य–ठ०उदयदेवप्रमुखराज्यधुरन्धरैर्महामहोत्सवेषु स्वयं कार्यमाणेषु, कौतुकाक्षिप्तविविधपौरजनसमाजैः स्थगितनानाप्रकारनिगमगृहभित्तिमालाट्टालदेवकुलवितानेषु, सकलावनीतलचमत्कारकारी भव्यलोकजनमनोहारी अभूतपूर्वो जलानयनमहोत्सवः सरङ्गः सम्पन्नः । द्वितीयदिने तथैव महामहोत्सवेषु संजायमानेषु, अवारितसत्रेषु क्रियमाणेषु, अमारिघोषणायां प्रवर्तमानायां चतुर्विंशतिश्रीजिनालयबिम्बानां ध्वजदण्डानां च, जोयलानिमित्तं श्रीपार्श्वनाथस्य, अन्येषां प्रभूतबिम्बानां भूयिष्ठप्रतिमानां च, श्रीवृत्तप्रबोध–श्रीपञ्जिकाप्रबोध–श्रीबौद्धाधिकारविवरणादिश्रीमत्पूज्योपज्ञसुग्रन्थदर्शनोदितचित्तेन तुरगपदचिन्तितसमस्याऽनुलोमप्रतिलोमाद्यनेकभङ्गिकथितश्लोककथनाद्यनेकावधानप्रतिपादनचञ्चुना कृष्णपण्डितेन क्षणे प्रतिदिनमनेकपण्डितगोष्ठ्या मन्त्रिविन्ध्यादित्यादिसभासु च नानावृत्तैः पवित्रैः संस्तूयमानश्रीमत्पूज्यनिष्प्रतिमध्यानाधिरोहप्ररोहशतकोटिकोटिना निर्दलितकलिकालानुभावकिञ्चिदुत्थितप्रत्यूहसमूहशैलो विधिमार्गजयजयारवपूर्वकः सरङ्गः सप्रभावः प्रतिष्ठामहोत्सवः समजनिष्ट । एते सर्वेऽपि महोत्सवाः सा०मोहण-श्रेष्ठिआसपालप्रभृतिसकलसंघेनासंख्यस्वकीयासारसंसारसारसफलीकरणेन कारिताः । अस्मिन् महसि श्रीवासुपूज्यविधिचैत्ये द्रं० सहस्र ३० उत्पन्नाः । द्वादश्यामानन्दमूर्त्तिपुण्यमूर्त्तिमुन्योर्दीक्षादानमहोत्सवः सम्पन्नः ।

७८. सं०१३३९ फाल्गुन सुदि ५, मन्त्रिपूर्णसिंह-भां० राजा-गो० जिसहड-देवसीह-मोहाप्रमुखश्रीजावालिपुरीयसर्वसंघेन श्रीप्रह्लादनपुरीय–श्रीबीजापुरीय–श्रीश्रीमालपुरीय–रामशयनीय–श्रीशम्यानयनीय–श्रीवाग्भटमेरवीय–श्रीरत्नपुरीयानेकनगरग्रामशकटपञ्चशतीमेलापकैरनघैः सर्वविधिमार्गसंघैः सह प्रस्थाय श्रीजिनरत्नाचार्य–देवाचार्य–वाचनाचार्यविवेकसमुद्रगणिप्रमुखनानामुनिमतल्लिकोदग्रनिकरविराजमानैः, उच्छेदयद्भिः सकलानि तमःपटलानि, विकाशयद्भिः समस्तजनतावदनकुमुदकाननानि, कुर्वद्भिर्वाक्यसुधावृष्ट्या परमनिर्वृतिलक्ष्मीं समस्तजननयनचकोरनिकरस्य, युगप्रधानश्रीजिनप्रबोधसूरिसुगुरुराजपादैः पावित्र्यभाजा, प्रतिपुरं प्रतिग्रामं विधिमार्गजयजयाकारकारिणं स्वकीयं विभवं सफलयता फाल्गुनचतुर्मासके सर्वविश्वसारे सकलवसुधातलवर्त्तिरामणीयकाधारे श्रीअर्बुदगिरीन्द्रवरे श्रीयु-

गादिदेव-श्रीनेमिनाथतीर्थचक्रिणौ नमश्चक्राते। ततो विस्मृतगृहप्राग्भारेण हर्षाङ्कुरपूरितशरीरेण समस्तश्रीसंघेन सर्वस्वापतेयसारपुण्यानुबन्धिपुण्यसारोपार्जनया त्रैलोक्योपरि स्वं मन्यमानेन श्रीइन्द्रपदादिभिः सर्वमहोभिः सुदिनेष्व-ष्टसु दिनेषु धुम्रस्योद्देशतः सप्त सहस्राणि सफलीचक्रिरे। तदनन्तरं श्रीमत्पूज्यप्रसादात् सफलीकृतनिजजन्मभिर्भवो दलितदुर्गतिसंभरः सम्पूर्णाखर्वसर्वमनोरथः श्रीजावालिपुरे सम्पन्नमहाप्रवेशकमहोत्सवः क्षेमेण सर्वोऽपि संघः प्राविशत।

७९. तस्मिन्नेव वत्सरे ज्येष्ठ वदि ४, जगचन्द्रमुनिः कुमुदलक्ष्मी भुवनलक्ष्मीसाध्व्यौ च दीक्षिताः। पञ्चम्यां चन्द-नसुन्दरीगणिन्या महत्तरापदं प्रदत्तं तस्याश्च श्रीचन्दनश्रीरिति नाम जज्ञे। ततः संमुखीनायातश्रीसोममहाराजाभ्यर्थ-नया श्रीशम्यानयने चतुर्मासीं विधाय, अतुलबलक्षोणिपालमालामौलिमाणिक्यकिरणकदम्बपानीयपूरप्लुतचरणकमला-नां सम्पादितभव्यभव्यलोकनिरुपमसम्यक्त्वकमलानां सकलसैन्यपरिवारपरिकलितसंमुखायातप्रमुदितश्रीकर्णमहानरे-न्द्राणां श्रीजिनप्रबोधसूरिमुनीन्द्राणां श्रीजेसलमेरौ सं० १३४० फाल्गुनचतुर्मासके महता विस्तरेण प्रवेशकमहोत्सवः समपनीपद्यत।

तत्र च वैशाखसुदिअक्षततृतीयादिने श्रीउच्चापुरीय-श्रीविक्रमपुरीय-श्रीजावालिपुरीयाद्यनेकसंघमेलापकेन सर्व-समुदायमहिताभ्यां सा० नेमिकुमार-सा० गणदेवाभ्यां महर्द्धा कृतसर्वमहोत्सवाभ्यां चतुर्विंशतिजिनालयस्याष्टापदा-देश्च बिम्बानां ध्वजदण्डाना च गरिष्ठप्रतिष्ठामहोत्सवः कारितः सर्वमहोत्सवैः। श्रीदेवगृहायपदे द्रं० सहस्र ६ समु-त्पन्नाः। ज्येष्ठ वदि ४, मेरुकलशमुनि धर्मकलशमुनि-लब्धिकलशमुनीनां पुण्यसुन्दरी-रत्नसुन्दरी-भुवनसुन्दरी-हर्षसु-न्दरीसाध्वीनां दीक्षामहोत्सव उत्पेदे। श्रीकर्णदेवमहाराजोपरोधेन चतुर्मासीं तत्रैव विधाय नानाविधधर्मदेशनया सकलनगरलोकस्य चित्तेषु चमत्कारमुत्पाद्य श्रीविक्रमपुरसमुदायगाढाभ्यर्थनया युगप्रधानश्रीजिनदत्तसूरिसंस्थापितं मरु-स्थलीकल्पद्रुमं श्रीमहावीरवरतीर्थं महता विस्तरेण श्रीविक्रमपुरे प्रविश्य जिनप्रबोधसूरयो वन्दितवन्तः। तत्र श्रीउच्चा-पुरीय-श्रीमरुकोट्टीयप्रभृतिनानासमुदायमेलके श्रीमहावीरविधिचैत्ये महता विस्तरेण सम्यक्त्वारोप-मालारोपण-दीक्षा-दानादिमहानन्दिमहोत्सवः सं० १३४१ फाल्गुनकृष्णैकादश्यां श्रीजिनप्रबोधसूरिभिश्चक्रे। तत्र च नन्दिमहोत्सवे विन-यसुन्दर-सोमसुन्दर-लब्धिसुन्दर-चन्द्रमूर्त्ति-मेघसुन्दरनामानः क्षुल्लकाः पञ्च, धर्मप्रभा-देवप्रभाख्ये क्षुल्लिके द्वे च संजाते।

तत्र च श्रीमहावीरतीर्थे प्रभावयतां ज्ञानध्यानबलेन समस्तजनमनःस्वाश्चर्यमुत्पादयतां स्वपक्ष-परपक्षाराध्य-मानचरणानां पवित्रचरणानां श्रीपूज्यानां महान् दाहज्वरः संजातः। ततो ध्यानबलेन स्वायुःपरिमाणं स्वल्पं सम्यक् परिज्ञायाविच्छिन्नप्रयाणैः श्रीपूज्याः श्रीजावालिपुरे समायाताः। तत्र च सकललोकचमत्कारकारिणि श्रीवर्धमान-स्वामिनो महातीर्थे वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीतूर्येषु, गीयमानेषु प्रवरगीतेषु, दीयमानेषु धवलेषु, नृत्यमानासु प्रवर-पुराङ्गनासु, वितीर्यमाणेषु दीनानाथदु स्थितानां महादानेषु, मिलितेषु नानापुरग्रामसंघेषु, नानाविधावदातानुकृतपू-र्वसूरिभिः श्रीजिनप्रबोधसूरिभिः, सद्रूपलक्ष्मीतर्जितकलाकेलयः समस्तभव्याम्बुजप्रकाशनहेलयो नानागुणरत्ननिधयः प्रवरगम्भीरिमाधरीकृतवार्धयः श्रीजिनचन्द्रसूरयः सं० १३४१ श्रीयुगादिदेवपारणकपवित्रितायां वैशाखशुक्लाक्षततृती-यायां स्वपदे महाविस्तरेण स्थापिताः। तस्मिन्नेव दिने राजशेखरगणेर्वाचनाचार्यपदं प्रदत्तम्। ततश्चाष्टम्यां श्रीम-त्पूज्यैः सकलसंघेन सह विस्तरेण मिथ्यादुष्कृतं दत्तम्। ततश्च दिने दिने वर्धमानशुभभावादिज्ञातसांसारिकभावा-नित्यस्वभावाः सुसाधुभिर्निरन्तर श्राव्यमाणसमाराधनाः सम्यग्विहितश्रीदेवगुरुपादपद्माराधनाः सज्ज्ञानलक्ष्मीकण्ठ-कन्दलहाराः स्वबदनकमलोच्चारितपञ्चपरमेष्ठिनमस्काराः कीर्त्तिधवलितक्षोणयः श्रीजिनप्रबोधसूरयो राधशुक्लैकादश्यां स्वर्गाङ्गणभूषणा बभूवुः।

*

८०. तदनन्तरं सं० १३४२ वैशाखशुक्लदशम्यां, श्रीजावालिपुरे श्रीमहावीरविधिचैत्ये श्रीजिनचन्द्रसूरिभिर्महामहोत्सवेन श्रीतिचन्द्र-सुखकीर्तिनामकं क्षुल्लकद्वयं जयमञ्जरी-रत्नमञ्जरी-शीलमञ्जरीनामकं क्षुल्लिकात्रयं च विहितम्। तस्मिन्नेव दिने वाचनाचार्यमिश्राणां विवेकसमुद्रगणीनामभिषेकपदम्, सर्वराजगणेर्वाचनाचार्यपदम्, बुद्धिसमृद्धिगणिन्याश्च प्रवर्त्तिनीपदं च प्रदत्तम्। सप्तम्यां च सम्यक्त्वारोप-मालारोपण-सामायिकारोप-साधुसाध्वीउत्थापनानन्दिमहोत्सवश्चक्रे।

तथा ज्येष्ठकृष्णनवम्यां साधुराजक्षेमसिंहेन कारितस्य रत्नमयस्य श्रीअजितस्वामिबिम्बस्य सप्तविंशत्यङ्गुलप्रमाणस्य तेनैव कारितानां श्रीयुगादिदेव-श्रीनेमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथबिम्बानां च, महामं० देदाकारितश्रीयुगादिदेव-श्रीनेमिनाथ-श्रीपार्श्वनाथबिम्बानाम्, भाण्डागारिकछाहडकारितस्य श्रीशान्तिनाथबिम्बस्य महत्तमस्य, वैद्यदेहडिकारिताष्टापदध्वजादण्डस्य, अन्येषां च बहूनां बिम्बानां महता विस्तरेण श्रीसामन्तसिंहविजयराज्ये सकललोकमनश्चमत्कारी निःशेषपापहारी श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः प्रतिष्ठामहोत्सवो विहितः। अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे विशेषतोऽतिप्रसन्नश्रीसामन्तसिंहमहाराजसान्निध्येन सकलस्वपक्ष-परपक्षाह्लादकः सकलविधिमार्गप्रोत्सर्पणामुत्पादकः प्रभूततरद्रव्यसफलीकरणेन सा० क्षेमसिंहप्रमुखसमस्तश्रावकैर्विधिमार्गप्रभावकैः प्रमोदभरमेदुरैः सद्भावनाबन्धुरैः श्रीइन्द्रमहोत्सवः कारितः। ज्येष्ठकृष्णैकादश्यां च वा०देवमूर्तिगणेः श्रीअभिषेकपदं मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवश्च संजातः।

सं० १३४४ श्रीजावालिपुरे श्रीमहावीरविधिचैत्ये मार्गशीर्ष सुदि १०, सा० कुमारपालपु०पं० स्थिरकीर्त्तिगणेः श्रीजिनचन्द्रसूरिभिर्विस्तरेण आचार्यपदं दत्तम्-श्रीदिवाकराचार्या इति नाम।

सं० १३४५ आषाढ सुदि ३, मतिचन्द्र-धर्मकीर्त्त्योर्दीक्षा। वैशाख वदि १, पुण्यतिलक-भुवनतिलकयोश्चारित्रलक्ष्मीसाध्व्याश्च दीक्षा। राजदर्शनगणेर्वाचनाचार्यपदं च।

सं० १३४६ माघ वदि १, सा० क्षेमसिंहभा०(भ्रा०?) बाहडकारितस्वर्णगिरि[स्थ]श्रीचन्द्रप्रभस्वामिदेवगृहपार्श्वस्थितयोः श्रीयुगादिदेव-श्रीनेमिनाथबिम्बयोर्मण्डपस्तम्भेषु च समेतशिखरविंशतिबिम्बानां च स्थापनामहोत्सवः। फाल्गुन सुदि ८, सा० बाहड-भ्रा० भीमा-भ्रा० जगसिंह-भ्रा० खेतसिंहसुश्रावककारिते प्रासादे श्रीशम्यानयने चाहट (चाह?) मानान्वयवंशे श्रीसोमेश्वरमहाराजकारितविस्तरप्रवेशमहोत्सवस्य श्रीशान्तिनाथदेवस्य विस्तरेण स्थापनामहोत्सवः। देवबल्लभ-चारित्रतिलक-कुशलकीर्तिसाधूनां रत्नश्रीसाध्व्याश्च दीक्षा। मालारोपणादिमहोत्सवश्च। चैत्र सुदि १, श्रीप्रह्लादनपुरे सर्वत्र आबद्धोर्ध्वितपताकोत्करे निःस्वानेषु वाद्यमानेषु सं० माधवप्रमुखसकलनगरलोकसंमुखागमनपूर्वं सा० अभयचन्द्रप्रमुखसमुदायेन प्रवेशमहोत्सवः कारितः। वैशाख वदि १४, श्रीभीमपल्ल्यां श्रीप्रह्लादनपुरवरप्रवेशनमहोत्सवः। वैशाख सुदि ७, सा० अभयचन्द्रकारिताद्भुतशिलमयश्रीयुगादिदेवबिम्ब-श्रीचतुर्विंशतिजिनालय-चतुर्विंशतिबिम्ब-इन्द्रध्वज-श्रीअनन्तनाथदण्डध्वज-श्रीजिनप्रबोधसूरिस्तूप-मूर्त्ति-दण्डध्वजानेकशिलमयपित्तलामयबिम्बानां विस्तरेण प्रतिष्ठामहोत्सवश्च। ज्येष्ठ वदि ७, नरचन्द्र-राजचन्द्र-मुनिचन्द्र-पुण्यचन्द्रसाधूनां मुक्तिलक्ष्मी-युक्तिश्रीसाध्व्योश्च महाप्रभावनापूर्वं दीक्षा च।

सं० १३४७ मार्गशीर्ष सुदि ६, श्रीप्रह्लादनपुरे सुमतिकीर्त्तिदीक्षा, नरचन्द्रादिसाधुसाध्वीनामुपस्थापना-मालारोपणादिमहोत्सवश्च। ततो मार्गशीर्ष सुदि १४, सांदिगच्छकायां स्थाने स्थाने तलिकातोरणालङ्कृतायां सं० चन्द्रापुत्र सं० राहपालेन सकलमहाजनपरिग्रहसाधुजनादिमेलापकेन प्रवेशमहोत्सवः कारितः। सं० राहपालेन समस्तसंघमेलापकेन श्रीतारणगढ़ीश्रीतारङ्गश्रीअजितस्वामितीर्थयात्रा कारिता। पौष वदि ५, श्रीजावालिपुरे सा० लखमसिंह-भ्रा० आसपालप्रमुखसमुदायेन सांदिगच्छप्रवेशमहोत्सवः कारितः। श्रीजावालिपुरे श्रीजिनप्रबोधसूरिस्तूपे मूर्तिस्थापनामहोत्सवो दण्डध्वजारोपमहोत्सवश्च माघ सुदि ११ सा० अभयचन्द्रेण कारितः। चैत्र वदि ६, श्रीजावालिपुरे अमरप्रभ-पद्म-

रत्न-विजयरत्नसाधवो मुक्तिचन्द्रिका साध्वी च स्तम्भतीर्थ-आशापल्ली-वागड-वटपद्रकादिसंघमेलापकेन विस्तरेण दीक्षिता, मालारोप-परिग्रहपरिमाणादिनन्दिमहोत्सवश्च संजातः।

सं० १३४८ वैशाख सुदि ३, श्रीप्रह्लादनपुरे वीरशेखरस्य अमृतश्रीसाध्व्याश्च दीक्षा, त्रिदशकीर्त्तिगणेर्वाचनाचार्यपदम्। तस्मिन्नेव वर्षे श्रीपूज्यैः सुधाकलश-मुनिवल्लभसाधुपरिवृतैर्गणियोगतपश्चक्रे।

सं० १३४९ भाद्रपद वदि ८, साधर्मिकमित्राकारस्य संघपुरुषस्य सा० अभयचन्द्रसुश्रावकस्य संस्तारकदीक्षा, अभयशेखर इति नाम। मार्गशीर्ष वदि २, यशःकीर्तिदीक्षा।

सं० १३५० वैशाख सुदि ९, करहेटक-अर्बुदादिविहितविस्तरतीर्थयात्रासफलीकृतजन्मजीवितस्य वरडियानगरसर्वाधिकारिणो नवलक्षकुलोत्तंसस्य भा० झांझणसुश्रावकस्य सकलस्वपक्ष-परपक्षचमत्कारकारिणी संस्तारकदीक्षा, नरतिलकराजर्षिरिति नाम।

सं० १३५१ माघ वदि १, श्रीप्रह्लादनपुरे श्रीयुगादिदेवविधिचैत्ये मं० तिहुणसत्कश्रीयुगादिदेव-श्रेष्ठिवीजासत्कश्रीमहावीरबिम्बप्रमुखाद्भुतबिम्बानां चत्वारिंशदधिकपञ्चशतीप्रमाणानां मह० तिहुण-श्रे० वीजासुश्रावकाभ्यां समुदायसहिताभ्यां विस्तरेण प्रतिष्ठामहामहोत्सवः कारितः। पञ्चम्यां श्रीपूज्यानामनेकसाधुसाध्वीश्रावकश्राविकापरिवृतानां मालारोपमहामहोत्सवनन्दिः, निश्चकीर्त्तिसाधोर्हेमलक्ष्मीसाध्व्याश्च दीक्षा। ८००(?)

८१. सं० १३५२ जिनचन्द्रसूरिगुरूपदेशेन वा० राजशेखरगणिः सुबुद्धिराजगणि-हेमतिलकगणि-पुण्यकीर्तिगणि-रत्नसुन्दरमुनिसहितः श्रीबृहद्ग्रामे विहृतवान्। ततश्च तत्रत्यठ० रत्नपाल-सा० चाहडप्रधानश्रावकप्रेरिताभ्यां सभ्रातृ-हेमराज-भागिनेयचांपूश्रावकाभ्यां सपरिवाराभ्यां सा० बोहिथपुत्रेण सा० मूलदेवश्रावकेण श्रीकौशाम्बी-वाणारसी-काकिन्दी-राजगृह-पावापुरी-नालन्दा-क्षत्रियकुण्डग्राम-अयोध्या-रत्नपुरादिनगरेषु जिनजन्मादिपवित्रितेषु तीर्थयात्रा कृता। तैः श्रावकैः सार्धं समुदायसहितपूर्वविहितहस्तिनागपुरयात्रेण वा० राजशेखरगणिना सपरिवारेणैतानि तीर्थानि वन्दितानि। राजगृहसमीपे उद्दंडविहारे चतुर्मासी कृता, मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवश्च कृतः। तथा तत्रैव वर्षे नानाद्भुतपुण्यवल्लीश्रीभीमपल्लीतः सा० धनपालसुश्रावकसत्पुत्र सा० भडसीह-सा० सामलश्रावककृतसंघेन श्रीप्रह्लादनपुरीय-भीमपल्लीय-श्रीपत्तनीय-सत्यपुरीयाद्यनेकस्वपक्ष-परपक्षमेलापकेन च सार्धं प्रस्थाय वाक्चातुरीपराभूतगीर्वाणोपाध्याय-श्रीविवेकसमुद्रोपाध्यायप्रमुखसुसाधुमण्डलीपरिवृतैर्जगत्पूज्यैः श्रीमत्पूज्यैः श्रीशङ्खेश्वरपुरालङ्कारचूडामणिश्चिन्तातीतवस्तुसम्पादनापहस्तितचिन्तामणिः संसारदुःखदावाग्निपाथः श्रीपार्श्वनाथः प्रणतः। तत्र च श्रीसंघेन स्नात्र-पूजाउद्यापनक ध्वजारोपादिमहोत्सवा विहिताः। ततः सर्वसंघसमन्विताः श्रीमत्पूज्याः श्रीपत्तने समाजग्मुः। तत्र च श्रीशान्तिनाथविधिचैत्ये सविस्तरध्वजारोपादिमहोत्सवपूर्वकनानाविधवाद्यमाननान्दीतूर्यप्रवर्तमानाङ्गनाचक्रनृत्येषु सकलपत्तनमध्यस्थसमस्तचैत्येषु विस्तरेण चैत्यपरिपाटीं विधाय, श्रीपूज्याः श्रीभीमपल्ल्यां समायाताः। पश्चाच्छ्रीवीजापुरीयसमुदायाभ्यर्थनया वीजापुरे चतुर्मासी कृता। तत्र च सं० १३५ [३] मार्गशीर्षकृष्णपञ्चम्यां श्रीवासुपूज्यविधिचैत्ये मुनिसिंह-तपःसिंह-जयसिंहसाधवो दीक्षिताः, मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवश्च संजातः।

ततः श्रीजावालिपुरे तत्समुदायाभ्यर्थनया विहारः। तस्मिन्नेव संवत्सरे सा० सलखणश्रावकपुत्ररत्न सा० सीहाश्रावक-माण्डव्यपुरीय सा० झाझणसत्पुत्रसा० मोहनश्रावकाभ्यां निर्मितसंघेन श्रीजावालिपुरीय-श्रीशम्यानयनीय-श्रीजेसलमेरवीय-श्रीनागपुरीय-रुणापुरीय-श्रीमालीय-सत्यपुरीय-प्रह्लादनपुरीय-भीमपल्लीयाद्यनेकमहर्द्धिक-श्रीमालज्ञातिमण्डनश्रीयोगिनीपुरवास्तव्य सा० बाहासुश्रावकपुत्र सा० लोहदेवप्रमुखप्रभूतश्रावकमेलापकविभूषितेन मार्गानवरतविरचितावारितसत्रचैत्यपरिपाट्यनेकमहामहोत्सवेन श्रीजावालिपुराद् वैशाखकृष्णपञ्चम्यां प्रस्थाय, प्रभूतमुनिमण्ड-

-लीसंसेव्यमानैः श्रीचतुर्विधश्रीश्रमणसंघस्तूयमानैर्जगत्पूज्यैः श्रीमत्पूज्यैः श्रीअर्बुदालङ्कारकारिणौ समस्तदौर्गत्यविदारिणौ श्रीयुगादिदेव-श्रीनेमिनाथजिनेश्वरौ नमस्कृतौ। ततोऽपहस्तितकलिकालमहाचौरेण महादानपराभूतदेवतरुवरेण परमवासनाक्षालितानेकभवसहस्रसंचितदुष्पापौघेन श्रीसमस्तविधिमार्गसंघेन श्रीइन्द्रपद-स्नात्र-ध्वजारोपादिमहोत्सवैरुद्देशतो द्रम्म द्वादश सहस्राणि कृतार्थीकृतानि। तदनन्तरं हर्षाङ्कुरपूरितः स्वसुकृतमहाराजपूजितः सदानघः श्रीविधिमार्गसंघः क्षेमेण श्रीजावालिपुरे विस्तरेण प्रविष्टः।

सं० १३५४ ज्येष्ठ वदि १०, श्रीजावालिपुरे श्रीमहावीरविधिचैत्ये सा० सलखणपुत्र सा० सीहाकारितो दीक्षा-मालारोपणादिमहोत्सवः संजातः। तस्मिन्महसि वीरचन्द्र-उदयचन्द्र-अमृतचन्द्रसाधूनां जयसुन्दरीसाध्व्याश्च दीक्षादानोत्सवः सम्पन्नः। तस्मिन्नेव वत्सरे आषाढशुक्लद्वितीयायां सिरियाणकग्रामे श्रीमहावीरप्रासादोद्धार-श्रीमहावीरबिम्बस्थापना श्रे०माढाश्रावकपुत्रेण श्रे०जोधाश्रावकेण महाविस्तरेण कारिता। सं० १३५५।

सं० १३५६ राजाधिराजश्रीजैत्रसिंहविज्ञप्त्या मार्गशीर्षसितचतुर्थ्यां श्रीजेसलमेरौ श्रीपूज्याः समायाताः। तत्र च श्रीमहाराजजैत्रसिंहेन योजनद्वयसंमुखागमनेन बहुमानपूर्वकं सा० नेमिकुमारप्रमुखसमस्तसमुदायेन च प्रभूतद्रव्यवेचनेन विधिमार्गप्रभावनापूर्वकं निःस्वानादितूर्येषु वाद्यमानेषु, पठत्सु बन्दिवृन्देषु, स्थाने स्थाने संजायमाननयनमनःप्रह्लादकारिप्रेक्षणीयकेषु, श्रावकश्राविकाभिर्विस्तार्यमाणेषु रास-गीत-धवलमङ्गलेषु, स्वपक्ष-परपक्षचेतश्चमत्कारकारी श्रीपूज्यानां प्रवेशकमहोत्सवः संजातः।

सं० १३५७ मार्गशीर्षशुक्लनवम्यां श्रीमहाराजजैत्रसिंहप्रेषितनिःस्वानादिषु वाद्यमानेषु दीक्षा-मालारोपणादिमहामहोत्सवः संजातः। तत्र श्रे०लखम-भां०गजपुत्रौ जयहंस-पद्महंसनामानौ दीक्षितौ।

सं० १३५८ माघशुक्लदशम्यां श्रीपार्श्वनाथविधिचैत्ये महाविस्तरेण निःस्वानादिषु वाद्यमानेषु श्रीसमेतशिखरादिबिम्बानां प्रतिष्ठामहोत्सवः श्रीमत्पूज्यैः कृतः। सा० केशवपुत्रेण सा० तोलीश्रावकेण कारापितः, फाल्गुनशुक्लपञ्चम्यां मालारोपण-सम्यक्त्वारोपादिमहोत्सवश्च सम्पन्नः।

ततः सं० १३५९ फाल्गुन वदि ११, श्रीवाहडमेरौ सा० मोकलसिंह सा० वीजडप्रमुखसमुदायाभ्यर्थनया श्रीपूज्याः श्रीयुगादिदेवतीर्थं नमस्कृतवन्तः।

तत्र च सं० १३६० माघ वदि १०, सा० वीजड-सा० थिरदेवादिसुश्रावकैः प्रभूतद्रव्यवेचनेन श्रीजिनशासनप्रभावनापूर्वं मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवः सविस्तरः कारितः। ततश्च श्रीशीतलदेवमहाराजविज्ञप्त्या मं० नाणचन्द्र-मं० कुमारपाल-श्रे०पूर्णादिसमुदायाभ्यर्थनया च श्रीशम्यानयने श्रीशान्तिनाथदेवतीर्थं श्रीपूज्यैर्नमश्चक्रे।

ततः सं० १३६१ शान्तिनाथविधिचैत्ये मं० नाणचन्द्र-मं० कुमारपाल-भां० पद्म-श्रे०पूर्ण-सा० रूपचन्द्रप्रमुखसमुदायेन द्वितीयवैशाख सुदि ६, श्रीजावालिपुरीय-सपादलक्षीयप्रमुखनानानगरग्रामवास्तव्यसंघमेलापकेन श्रीपार्श्वनाथप्रमुखनानाबिम्बानां प्रतिष्ठामहोत्सवः, दशम्यां च मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवः सकलस्वपक्ष-परपक्षचमत्कारकारी श्रीदेवगुरुप्रसादान्निर्विघ्नः कारितः। अस्मिन्महोत्सवे पं० लक्ष्मीनिवासगणि-पं० हेमभूषणगण्योर्वाचनाचार्यपदं दत्तमिति।

८२. ततः श्रीजावालिपुरीयसमुदायाभ्यर्थनया श्रीजावालिपुरे श्रीमहा[वीर]देवं श्रीपूज्या नमश्चक्रुः। तत्र च सं० १३६४ वैशाखकृष्णत्रयोदश्यां, मं० सुजनसिंह-सा० सुभट-मं०नयनसिंह-मं० दुस्साज-मं० मोजराज-सा० सीहाप्रमुखसमस्तश्रीसमुदायविहितनानाप्रोत्सर्पणापूर्वकं श्रीमत्पूज्यैर्नानाश्रीशत्रुञ्जयादिमहातीर्थनमस्करणसमुपार्जितगण्यपुण्यप्राग्भारवा०राजशेखरगणेर्वाचनाचार्यपदं प्रददे। स्वपक्ष-परपक्षचमत्कारी मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवश्च श्रीसमुदा-

देहडानुज ठ० थिरदेवपुत्रिकायाः श्रीजिनचन्द्रसूरिस्वहस्तकमलदीक्षिताया रत्नमञ्जरीगणिन्या महत्तरापदं प्रदत्तम्—श्रीजयर्द्धिमहत्तरेति नाम विहितम्, प्रियदर्शनगणिन्याः प्रवर्तिनीपदं च।

ततः श्रीसमुदायाभ्यर्थनया श्रीपूज्याः पत्तनपुरवरे समायाताः। तत्र च सं० १३६९ मार्गशीर्षासितषष्ठ्यां स्वपक्ष-परपक्षचेतश्चमत्कारकारकेण श्रीसमुदायविधापितमहोत्सवेन 'जयति जिनशासनम्' इति समुत्साहपूर्वकं श्रीपूज्यैर्जगत्पूज्यश्चन्दनमूर्ति-भुवनमूर्ति-सारमूर्ति-हीरमूर्तिनामकं क्षुल्लकचतुष्टयं विहितम्, केवलप्रभागणिन्याः प्रवर्तिनीपदं च प्रदत्तम्, मालारोपणादिमहानन्दिमहोत्सवश्च कृतः।

सं० १३७० माघशुक्लैकादश्यां पुनः श्रीसमुदायकारितसकलस्वपक्ष-परपक्षचेतश्चमत्कारकारी दीक्षामालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवः सकलजगत्कल्पद्रुमावतारैः श्रीमत्पूज्यैः कृतः। तस्मिन्महोत्सवे निधानमुनेर्यशोनिधि-महानिधि-साध्वीद्वयस्य च दीक्षा प्रदत्ता।

ततः श्रीभीमपल्लीसमुदायाभ्यर्थनया श्रीपूज्याः श्रीभीमपल्ल्यां समायाताः। तत्र च सं० १३७१ फाल्गुनशुक्लैकादश्यां श्रीमत्पूज्यैः साधुराजद्वयमलप्रमुखश्रीभीमपल्लीसमुदायकारितः श्रीअमारिघोषणावारितसत्रसंघपूजासाधर्मिकवात्सल्यादिनानाविधप्रोत्सर्पणापूर्वकं सकलजनमनोहारी व्रतग्रहणमालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवः कृतः। तस्मिन्महोत्सवे त्रिभुवनकीर्तिमुनेः, प्रियधर्मा—आशालक्ष्मी—धर्मलक्ष्मीसाध्वीनां च दीक्षा प्रदत्ता।

८५. ततः श्रीपूज्यपादाः श्रीजावालिपुरीयसमुदायगाढतराभ्यर्थनया श्रीजावालिपुरे विहृताः। तत्र च सं० १३७१ ज्येष्ठवदिदशम्यां मं० भोजराज-देवसिंहप्रमुखसकलश्रीजावालिपुरीयसमुदायकारितः सकलस्वपक्ष-परपक्षचेतश्चमत्कारकारी समस्तजनमनोहारी दीक्षामालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवः श्रीपूज्यैः कृतः। तस्मिन् महोत्सवे देवेन्द्रदत्तमुनि—पुण्यदत्तमुनि—ज्ञानदत्त—चारुदत्तमुनीनां पुण्यलक्ष्मी—ज्ञानलक्ष्मी—कमललक्ष्मी—मतिलक्ष्मीसाध्वीनां च दीक्षा प्रदत्ता। ततो म्लेच्छकृतो भङ्गः श्रीजावालिपुरे जातः। ततः श्रीपूज्याः श्रीशम्यानयन—श्रीरुणापुरी—श्रीबब्बेरकादिनानास्थानवास्तव्यसकलसमुदायिनां समाधानमुत्पाद्य श्रीरुणातः श्रीश्रीमालकुलोत्तंसैः श्रीजिनशासनप्रभावकैः सकलसाधर्मिकवत्सलैः साधुमानलपुत्ररत्नैः सा०माहा-सा०धांधूप्रमुखभ्रातृभिः सह सकलसपादलक्षनगरग्रामवास्तव्यसमस्तसुश्रावकशकटशतत्रयमेलापकेन श्रीपूज्यपादैः श्रीफलवर्धिकायां सकलातिशयनिधानस्य म्लेच्छव्याकुलसकलसपादलक्षजनपदक्षारसमुद्रामृतकूपतुल्यस्य श्रीपार्श्वनाथस्य प्रथमो यात्रामहामहोत्सवश्चक्रे। तस्मिन् यात्रामहोत्सवे श्रीविधिसंघसुश्रावकैः श्रीइन्द्रपदादिनानापदग्रहण—अवारितसत्र—श्रीसाधर्मिकवात्सल्य—श्रीसंघपूजादिनानाविधश्रीजिनशासनप्रोत्सर्पणापूर्वकममेयं सौवस्वापतेयं सफली चक्रे। पश्चाच्छ्रीनागपुरसमुदायाभ्यर्थनया श्रीपूज्या नागपुरे विहृताः।

ततः श्रीलोहदेव-सा०लखण-सा० हरिपालप्रमुखश्रीउच्चापुरीयविधिसमुदायानुत्तराभ्यर्थनया नानाम्लेच्छसंकुले महामिथ्यात्वबहुले श्रीसिन्धुमण्डले महाग्रीष्मर्त्तौ प्रवर्तमाने दुर्गममरुस्थल्यां सौवज्ञानध्यानबलशालिभिः श्रीमेघकुमारदेवकृतसान्निध्यैर्युगप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रसूरिभिरनेकसुसाधुपरिवृतैः श्रीधर्मकल्पद्रुमारोपणाय विहारश्चक्रे। ततस्तद्देशालङ्कारे श्रीउच्चापुरीप्रत्यासन्ने श्रीदेवराजपुरे श्रीउच्चापुरीयविधिसमुदायकृतप्रवेशकोत्सवाः श्रीपूज्या महामिथ्यात्वराज्योत्पाटनायावस्थिताः। तत्र च सकलसिन्धुमण्डलसुश्रावकगाढतराभ्यर्थनया सं० १३७३ वर्षे मार्गशीर्षवदिचतुर्थ्यां श्रीआचार्यपदस्थापनाव्रतग्रहणमालारोपणादिमहामहोत्सवाः सकलाज्ञानिलोकसम्यक्त्वोपार्जनहेतवः श्रीपूज्यपादैः प्रारब्धाः। पश्चान्महोत्सवदिनोपरि आरम्भसिद्धिरात्रौ ज्ञानध्यानातिशयसंस्मारितश्रीजिनदत्तसूरियुगप्रवरागमैः श्रीपूज्यैश्चतुर्मासीमध्येऽपि गुरुतरराजविड्वरेण संजायमानशून्यजनपदेषु तस्करादिनानोपद्रवबहुलेष्वपि मार्गेषु सौवज्ञानातिशयबलेन कुशलं परिभाव्य, स.... वीसल—महणसिंहसुश्रावकौ श्रीदेवराजपुराच्छ्रीगूर्जरत्रामुकुटकल्पे

श्रीपत्तने श्रीविवेकसमुद्रमहोपाध्यायानां पार्श्वे लक्षण-तर्क-साहित्यालङ्कार-ज्योतिष्क-स्वसमय-परसमयसारनिष्कनिष्कषणनिकषोपमे समग्राचार्यगुणालङ्कृतमात्रस्य स्वशिष्यरत्नस्य पण्डितराजराजचन्द्रस्य समाकारणाय प्रेषितौ। ततः श्रीउपाध्यायैः सद्गुर्वादेशानुसारेण ताभ्यां सह पुण्यकीर्तिगणिं दत्त्वा पं० राजचन्द्रमुनिः प्रेषितः। ततः श्रीमत्पूज्यगुरुतरध्यानबलार्कर्पिताधिष्ठायककृतसान्निध्यात् तस्कराद्यनेकोपद्रवानवगणय्य कार्तिकचतुर्मासकदिने स्वदीक्षागुरुश्रीपूज्यपादपद्ममहातीर्थं पं० राजचन्द्रमुनिना नमस्कृतम्। ततश्च श्रीमत्पूज्यैः श्रीउच्चापुरीय-श्रीमरुकोट्ट-श्रीक्यासपुरप्रमुखसिन्धुदेशनानानगरग्रामवास्तव्यासंख्यसुश्रावकसंघमहामेलापकेन स्थाने स्थाने प्रेक्षणीयेषु संजायमानेषु, दीयमानेषु तालारासेषु, नृत्यमानेषु युवतीजनेषु, पापठ्यमानेषु वन्दि.......षु दीयमानेषु, श्रे०उदयपाल-श्रे०गोपाल-सा० वयरसिंह-ठ०कुमरसिंहप्रमुखमहर्द्धिकसुश्रावकलोकैः स्वर्णाम्बरदानेषु क्रियमाणेषु अवारितसत्रेषु संजायमानेषु साधर्मिकवात्सल्येषु श्रीआचार्यपदस्थापना-व्रतग्रहण-मालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवश्चक्रे। तस्मिन् महोत्सवे स्वशिष्यरत्नस्य समग्रविद्याबुद्धिपानकुम्भर्पिसमानस्य वाक्चातुरीविनिर्जितसुराचार्यस्य पण्डितराजचन्द्रमुनिवरस्य आचार्यपदं प्रदत्तम्-श्रीराजेन्द्रचन्द्राचार्या इति नामधेयं च कृतम्। ललितप्रभ-नरेन्द्रप्रभ-धर्मप्रभ-पुण्यप्रभ-अमरप्रभसाधूनां दीक्षा प्रदत्ता। अनेकश्रावकश्राविकालोकैर्माला गृहीता, सम्यक्त्वारोपसामायिकारोपश्च कृतः। तस्मिन् महोत्सवे साधुराजयशोधवलकुलप्रदीपेन सा०नेमिकुमारपुत्ररत्नेन श्रीजिनशासनप्रभावकेण सकलसाधर्मिकवत्सलेन सा०वयरसिंहसुश्रावकेण विशेषतः श्रीसाधर्मिकवात्सल्यावारितसत्रामारिघोषणाश्रीसंघपूजानिर्मापणपूर्वकं स्वस्वापतेयं सफलीचक्रे।

८६. ततः पुनः सं० १३७४ फाल्गुनवदि षष्ठीदिने श्रीउच्चापुरीयादिनानानगरग्रामवास्तव्यसकलसिन्धुदेशविधिसमुदायकारितः श्रीपूज्यैर्व्रतग्रहणमालारोपणोत्थापनादिनन्दिमहामहोत्सवः सकलस्वपक्ष-परपक्षचेतश्चमत्कारकारी कृतः। तस्मिन् महोत्सवे दर्शनहित-भुवनहित-[त्रि]भुवनहितमुनीनां दीक्षा प्रदत्ता, श्राविकाशतेन च माला गृहीता। एवं श्रीदेवराजपुरे महामिथ्यात्वतिमिरं चतुर्मासीद्वयेनोन्मूल्य श्रीपूज्याः [सा ?]री० पूर्णचन्द्रसत्पुत्रोदारचरित्रश्रीजिनशासनप्रभावक सारी० हरिपालसार्थवाहसान्निध्येन मरुस्थलवालुकासमुद्रमुल्लङ्घ्य श्रीनागपुरे श्रीसमुदायकृतगुरुतरप्रवेशकमहोत्सवाः समायाताः। ततः श्रीकन्यानयनवास्तव्यश्रीश्रीमालकुलोत्तंसश्रीजिनशासनप्रभावक सा०कालासुश्रावककारिता श्रीकन्यानयनादिसमग्रवागडदेश-सपादलक्षदेश-नगरग्रामवास्तव्यनानासुश्रावकमहासंघमेलापकेन श्रीफलवर्धिकायां श्रीपार्श्वनाथदेवस्य श्रीपूज्यैर्द्वितीयवारं यात्रा कृता। महर्द्धिकसुश्रावकलोकैरवारितसत्रसाधर्मिकवात्सल्यश्रीसंघपूजानिर्मापणपूर्वकं श्रीजिनशासने महती प्रभावना चक्रे।

ततः सं० १३७५ माघशुक्लद्वादश्यां श्रीनागपुरे मन्त्रिदलकुलोत्तंस-ठ०विजयसिंह-ठ० सेढू-सा० रूदाप्रमुखश्रीयोगिनीपुरसमुदायसंघपुरुषमन्त्रिदलीय-ठ०अचलप्रमुखसमग्रडालामऊसमुदाय-श्रीकन्यानयन-श्रीआसिका-श्रीनरभटप्रमुखनानानगरग्रामवास्तव्य-समस्तवागडदेशसमुदाय-मं०कुमरा-मं० भूधराजप्रमुखकोसवाणासमुदाय-नानानगरग्रामवास्तव्यसमग्रसपादलक्षसमुदाय-सा०सुभटप्रमुखश्रीजावालिपुर-श्रीशम्यानयनप्रमुखमारुवत्रासमुदायादिनानाजनपदप्रचुरसमुदायमहामेलापके स्थाने स्थाने संजायमानेष्ववारितसत्रेषु, कार्यमाणेषु महाप्रेक्षणीयेषु, नृत्यमानेषु युवतीजनेषु, दीयमानेषु तालारासेषु, क्रियमाणेषु साधर्मिकवात्सल्येषु, दीयमानेषु महामहर्द्धिकसुश्रावकलोकैः कनककटकरूप्यकटकवस्त्रान्नदानेषु, श्रीवर्धमानस्वामितीर्थप्रवर्तनपरायणैः श्रीपूज्यैः श्रीनागपुरीयसमुदायाभ्यर्थनया स्वपक्ष-परपक्षासंख्यजनमनोहारी सकलमहामिथ्यादृग्लोकमस्तकावधूननकारी श्रीव्रतग्रहणमालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवश्चक्रे। तस्मिन् महोत्सवे सोमचन्द्रसाधोः शीलसमृद्धि-दुर्लभसमृद्धि-भुवनसमृद्धिसाध्वीनां दीक्षा प्रदत्ता। पं० जगच्चन्द्रगणेः सर्वविद्याविलासिनीनाट्यनाट्योपाध्यायकल्पस्य नानाशिष्यरत्ननिष्पादनलब्धिसमुद्रस्य द्विधा स्वसन्तानजस्य परिभावितस्वपट्टलक्ष्मीयोग्यस्य तस्य पण्डितराजकुशलकीर्तिगणेश्च वाचनाचार्यपदम्। धर्ममालागणिनी-पुण्य-

येन कारितः। ततश्चौरचरटाद्युपद्रुतेऽपि मार्गे मण० दुर्लभसाहाय्यात् श्रीभीमपल्ल्यां श्रीपूज्याः समाजग्मुः। ततः श्रीपत्तनीयश्रीकोष्ठिकाश्रीशान्तिनाथविधिचैत्ये श्रीश्रावकपौषधशालासन्निवेशनप्रमुखश्रीधर्मकृत्यपेशलसा० जेसलप्रभृतिश्रीसमुदायाभ्यर्थनया श्रीपत्तने श्रीशान्तिनाथदेवं नमस्कृतवन्तः। ततः श्रीस्तम्भतीर्थीयकोष्ठिकाश्रीअजितनाथदेवविधिचैत्यालयश्रीश्रावकपौषधशालाप्रमुखसद्धर्मकृत्यकुशलेन सा० जेसलेन समामन्त्र्यमाणाः श्रीशेरीषके श्रीपार्श्वनाथदेवं नमस्कृत्य सा० जेसलकारितेन स्वपक्षपरपक्षचमत्कारकेणानुकृतमन्त्रीश्वरश्रीवस्तुपालकारितश्रीजिनेश्वरसूरिमहाप्रवेशकमहोत्सवेन श्रीस्तम्भतीर्थे श्रीपूज्याः श्रीअजितनाथदेवं नमश्चक्रुः।

८३. ततः सं० १३६६ ज्येष्ठ वदि १२, नानावदातख्यातसमुद्धृतसर्वपूर्वजकुलेन साधर्मिकवत्सलेन सा० जेसलसुश्रावकेण मेलितेन श्रीपत्तनीय-श्रीभीमपल्लीय-श्रीवाहडमेरवीय-श्रीशम्यानयनीयसमस्तसंघमेलापकेन स्वकीयवृहद्भ्रातृ सा० तोलियनिवेशितसंघधुर्यपदेन लघुभ्रातृ सा० लासूनिवेशितपच्छेत्राणपदेन विषमदुःषमाकालेऽप्यतुच्छम्लेच्छसंकुलेऽपि देशे श्रीस्तम्भतीर्थाच्छ्रीदेवालयप्रचलनमहोत्सवो विहितः। तेन सह श्रीमत्पूज्या जयवल्लभगणि–हेमतिलकगण्यादिसाध्वेकादशकेन प्र० रत्नवृष्टिगणिन्यादिसाध्वीपञ्चदशकेन च परिवृताः श्रीमहातीर्थनमस्करणाय प्रस्थिताः। ततः स्थाने स्थाने चैत्यपरम्परासु चैत्यपरिपाट्याद्यनेकमहोत्सवेषु श्रीसंघेन क्रियमाणेषु, नानाविधतूर्येषु वाद्यमानेष्वनेकश्रावक(श्राविका?) लोकेन श्रीमद्देवगुरुगुणगणेषु गीयमानेषु, भट्टघट्टैः स्वकीयनव्यकाव्येषु पठ्यमानेषु, क्रमक्रमेण पीपलाउलीग्रामे सर्वोऽपि संघः समायातः। तत्र च श्रीशत्रुञ्जयमहातीर्थपर्वतावलोकमहोत्सवः श्रीसंघेन कृतः। ततोऽपारसंसारपारावारनिमज्जज्जन्तुजातप्रवहणायमाननिःशेषदेशागतजन्तुजातपूज्यमानश्रीशत्रुञ्जयमहातीर्थालङ्कारश्रीदेवाधिदेवश्रीयुगादिदेवपादपद्मनमस्करणयात्राहर्षप्रकर्षप्रादुर्भूताङ्कुरपूरपवित्रितैः श्रीचतुर्विधसंघपरिवृतैः श्रीपूज्यैर्विहिता। तत्र च सा० सलखणपुत्ररत्न सा० मोकलसिंहादिसुश्रावकैः श्रीइन्द्रपदादिमहोत्सवाः सविस्तरा विहिताः। तत्र च ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवः सविस्तरः श्रीसमुदायेन कारितः।

ततः सुराष्ट्रालङ्कारश्रीगिरिनारसंस्थितश्रीनेमिनाथमहातीर्थनमस्करणाय चतुर्विधसंघपरिवृताः श्रीपूज्याः प्रस्थिताः। नेदीयोगच्छदतुच्छम्लेच्छकटकोपद्रुतेऽपि सुराष्ट्रादेशे जगन्नाथश्रीनेमिनाथप्रसादाच्छ्रीअम्बिकासान्निध्याच्छ्रीमत्पूज्यज्ञानबलाच्च सुखंसुखेन श्रीउज्जयन्ततलहट्टिकायां सर्वोऽपि संघः प्राप्तः। ततः श्रीनेमिनाथकल्याणकत्रयपवित्रितश्रीउज्जयन्तमहापर्वतराजालङ्कारभाग्राम्भोधरसौभाग्यसुन्दरनेमिनाथपादपद्ममहातीर्थं श्रीपूज्याः सकलसंघसमन्विता नमश्चक्रुः। तत्र च सा० कुलचन्द्रकुलप्रदीप सा० बीजडप्रमुखसकलसुश्रावकैः श्रीइन्द्रपदादिप्रोत्सर्पणा विहिता। ततः श्रीनेमिनाथदेवं नमस्कृत्य, स्थाने स्थाने नानाप्रभावनां विधाय, श्रीपूज्याः श्रीसंघसमन्विताः श्रीस्तम्भतीर्थे समायाताः। तत्र च सा० जेसलसुश्रावकेण श्रीदेवालयस्य श्रीमत्पूज्यानां च महता विस्तरेण प्रवेशकमहोत्सवश्चक्रे। तत्र च चतुर्मासीं विधाय श्रीस्तम्भनकालङ्कारश्रीपार्श्वनाथदेवतीर्थे मन्त्रिदलीप ठ० भरहपालसुश्रावकसाहाय्याच्छ्रीमत्पूज्या ववन्दिरे।

८४. ततः श्रीबीजापुरे श्रीवासुपूज्यदेवं नमस्कृतवन्तः। तत्र च सं० १३६७ माघकृष्णनवम्यां श्रीमहावीरप्रमुखशैलमयादिबिम्बानां प्रतिष्ठा श्रीमत्पूज्यैर्महता विस्तरेण कृता, मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवश्च जज्ञे। ततः श्रीभीमपल्लीयश्रीसमुदायाभ्यर्थनया श्रीमहावीरदेवं नमस्कृतवन्तः। तत्र च सं० १३६७ फाल्गुनशुक्लप्रतिपदि, सकलश्रीभीमपल्लीय–श्रीपत्तनीय–श्रीप्रह्लादनपुरीयसमस्तश्रीसमुदायमेलापके नानाविधपुण्यांकदानादिप्रभावनापुरस्सरं क्षुल्लकत्रयं क्षुल्लिकाद्वयं च श्रीपूज्याश्चक्रुः। तन्नामानि च परमकीर्त्ति–वरकीर्त्ति–रामकीर्त्ति–पद्मश्री–व्रतश्रीरिति। तस्मिन्नेव च दिने मालारोपणादिनन्दिमहोत्सवः सविस्तरः श्रीसमुदायेन कारितः। पं० सोमसुन्दरगणेर्वाचनाचार्यपदं दत्तम्।

तस्मिन्नेव वत्सरे सा० क्षेमन्धर-सा० पद्मा-सा० साढलकुलावतंसेन निजभुजोपार्जितचारुकमलाकेलिनिवासेन कुङ्कुमपत्रिकादिना दानसन्मानपूर्वकविहितश्रीपत्तन-श्रीप्रह्लादनपुर-श्रीजावालिपुर-श्रीशम्यानयन-श्रीजेसलमेरु-श्रीराणुकोट्ट-श्रीनागपुर-श्रीरुणा-श्रीवीजापुर-श्रीसत्यपुर-श्रीश्रीमाल-श्रीरत्नपुरादिप्रभूतश्रावकसंघमेलापकेन निष्प्रतिमपुण्यपण्यशालिना स्थैर्यगाम्भीर्यादिगुणगणमालिना सत्तीर्थयात्रापवित्रगात्रसा० धनपालनन्दनेन श्रीभीमपल्लीपुरीवास्तव्येन राजमान्येन सद्धर्मकर्मकुशलेन सुश्रावकसाधुसामलेन श्रीतीर्थयात्रा प्रारम्भि । तस्य च सकलसमुदायसहितस्य गाढाभ्यर्थनया प्रचुरम्लेच्छसंकुलेऽपि जनपदेऽविचलसुधवसुश्राविकाभिर्गीयमानेषु धवलमङ्गलेषु, दीयमानासु चच्चरीषु, पठत्सु भट्टघट्टेषु, वाद्यमानेषु प्रवरतूर्येषु, महतोत्साहेन श्रीवर्धमानस्वामिजननोत्सवपवित्रितायां चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां नानातिशयशालिनः श्रीचतुर्विधसंघसहिताः श्रीजगत्पूज्याः श्रीपूज्याः श्रीदेवालयेन सह श्रीभीमपल्लीतः प्रास्थिषत । ततश्च पदे पदे शुभशकुनैः प्रेर्यमाणाः श्रीशङ्खेश्वरे महाप्रभावभवनं श्रीपार्श्वनाथजिनं महता विस्तरेण नमस्कृतवन्तः । तत्र च समस्तसंघेन दिनाष्टकं श्रीपार्श्वनाथमहातीर्थे महान्महोत्सवो व्यधायि । ततः पाटलाग्रामे श्रीनेमिनाथतीर्थे चिरकालीनं नमस्कृत्य श्रीराजशेखराचार्य-जयवल्लभगण्यादिसाधुषोडशक-प्र० बुद्धिसमृद्धिगणिन्यादिसाध्वीपञ्चदशकपरिवृताः सकलप्राग्भारधौरेयेण साधुसामलेन, भण० नरसिंहपुत्रआसा-दुर्लभादिबान्धवन्यस्तसंघरक्षाभारेण भण० पूर्णपुत्ररत्नेन, वर्यौदार्यशालिना भण० लूणाकेन पाश्चात्यपदनिर्वाहिणा समस्तविधिसंघेन च कलिताः, प्रतिपुरं प्रतिग्रामं निःशङ्कं गीतनृत्यवाद्यादिना जिनशासनप्रोत्सर्पणायां विजृम्भमाणायां क्रमक्रमेण सुखंसुखेन श्रीशत्रुञ्जयालङ्कारत्रैलोक्यसारसमस्ततीर्थपरम्परापरिवृतं प्रविहितसुरासुरनरेन्द्रसेवं श्रीनाभेयदेवम्, श्रीउज्जयन्ताचलशिखरमण्डनं समस्तदुरितखण्डनं सौभाग्यकमलानिधानं यदुकुलप्रधानं कल्याणकत्रयादिनानातीर्थावलिविराजमानं श्रीअरिष्टनेमिस्वामिनं च नूतनस्तुतिस्तोत्रविधानपूर्वकं परमभावनया सकलसंघसहिताः श्रीपूज्या महता विस्तरेणावन्दिषत । तत्र च श्रीजावालिपुरवास्तव्यमहाजनप्रधानगुणनिधान सा० देवसीहसुत-सा० थालणनन्दनाभ्यां निजकुलमण्डनाभ्यां सा० कुलचन्द्र-सा० देदासुश्रावकाभ्यां द्वयोरपि महातीर्थयोः प्रचुरस्वापतेयसफलीकरणेन श्रीइन्द्रपदमङ्गीकृतम् । गोष्ठिकयशोधवलपुत्ररत्नेन गोष्ठिकखिरपालेन प्रभूतद्रव्येण श्रीउज्जयन्ते श्रीअम्बिकादेव्या माला गृहीता। अन्यैरपि श्रावकपुङ्गवैः सा० श्रीचन्द्रपुत्र सा० जाल्हण-सा० चाहडपुत्र सा० झाञ्झण-सा० ऊधरण-नवलक्षकनेमिचन्द्र-श्रे० पूना-सा० तिहुणा-भां० पदमपु० भउणा-सा० महणसीह-सा० भीमापु० लूणसीहादिभिः श्रीतीर्थपूजा-संघपूजा-साधर्मिकवात्सल्यावारितसत्रादिषु, अमेयस्वापतेयसफलीकरणेन महत् पुण्यानुबन्धिपुण्यं समुपार्जितम् । एवं च विषमकालेऽपि लोकोत्तरधर्मनिधानेन वरेण्यपुण्यप्रधानेन श्रीविधिसंघेन सज्जनचित्तहारिणी सर्वजनचमत्कारकारिणी श्रीतीर्थयात्रा विहिता निर्विघ्नम् । समस्ततीर्थावलीं महत्या प्रभावनया वन्दित्वा सा० सामलादिसंघसहिताः सपरिवाराः श्रीजिनचन्द्रसूरयः क्षेमेण अषाढचतुर्मासके श्रीवायडग्रामे जीवितस्वामिकां श्रीमहावीरप्रतिमां निष्प्रतिमां महाविस्तरेण नमश्चक्रुः । ततः श्रावणप्रथमपक्षे नृत्यन्तीषु धर्मभाविकासु श्राविकासु, गायन्तीषु नागराङ्गनासु, स्थाने स्थाने विधीयमानेषु प्रेक्षणीयेषु, पठत्सु वन्दिवृन्देषु, श्रावकजनैर्दीयमानेषु महादानेषु, सकलसंघसहितानां लोकोत्तरातिशयशालिनां श्रीजिनचन्द्रसूरीणां श्रीविधिसमुदायेन महाविस्तरेण महत्या प्रभावनया श्रीभीमपल्ल्यां प्रवेशमहोत्सवः कारितः । संघागतेन श्रीदेवगुर्वाज्ञाप्रतिपालनोद्यतेन श्रीसाधर्मिकवत्सलेन भण० लूणासुश्रावकेण श्रीपूज्यपादान्ते श्रीसंघपाश्चात्यपदप्राग्भारनिर्वाहणमहाप्रभावनाकरणसमुपार्जितं पुण्यं सर्वं स्वमातुर्दानशीलतपोभावनोद्यताया भण० धनीसुश्राविकायाः प्रदत्तम् । तया च श्रद्धानपरयाऽनुमोदितम् ।

..............म्यां श्रीभीमपल्लीसमुदायकारितमहामहोत्सवेन प्रतापकीर्त्यादिक्षुल्लकयोर्व्रतोत्थापना क्षुल्लकद्वयं च पूज्यैर्व्यधायि । तन्नामानि तरुणकीर्तिस्तेजःकीर्तिः, राज्यपोथ व्रतधर्मा दृढधर्मेति । तस्मिन्नेव दिने ठ० हांमिउ पुत्ररत्न ठ०

सुन्दरीगणिन्योः प्रवर्तनीपदं च प्रदत्तम्। ततश्च ठ० विजयसिंह–ठ० सेढू–ठ०अचलप्रमुखसमग्रसंघशकटाश्वमहामेलापकेन श्रीफलवर्धिकायां श्रीपार्श्वनाथस्य श्रीपूज्यैस्तृतीयवारं यात्रा कृता। तत्र च जिनशासनप्रभावनाकरणप्रवणेन सर्वसाधर्मिकवत्सलेन मन्त्रिदलकुलोत्तंसेन ठ० सेढूसुश्रावकेण जैथलसहस्रद्वादशप्रदानपूर्वकमिन्द्रपदग्रहणेन, अन्यैः सुश्रावकलोकैरमात्यादिपदग्रहणेन अवारितसत्रसंघपूजासाधर्मिकवात्सल्यस्वर्णरजतकटकवस्त्रादिदानैश्च श्रीजिनशासने महती प्रभावना चक्रे। श्रीपार्श्वनाथदेवभाण्डागारे च जैथलसहस्र ३० समुत्पन्नाः। ततः पुनः श्रीपूज्याः श्रीसंघेन सह नागपुरे समायाताः।

८७. ततः सं० १३७५ वैशाखवद्यष्टम्यां नानावदातव्रातसमुद्धृतसर्वपूर्वजकुलेन निजभुजोपार्जितचारुकमलाकेलिनिवासेन मन्त्रिदलकुलोत्तंस–ठ०प्रतापसिंहपुत्ररत्नेन श्रीजिनशासनप्रभावनाकरणचतुरेण सकलसाधर्मिकवत्सलेन निःप्रतिमपुण्यपण्यशालिना स्थैर्यौदार्यगाम्भीर्यादिगुणगणमालिना सकलराज्यमानेन ठक्कुरराजअचलसुश्रावकेण प्रतापाक्रान्तभूतलपातसाहिश्रीकुतबदीनसुरत्राणफुरमाणं निष्कास्य कुङ्कुमपत्रिकादानसन्मानादिपूर्वं श्रीनागपुर–श्रीरुणा–श्रीकोसवाणा–श्रीमेडता–कडुयारी–श्रीनवहा–झुञ्झणू–नरभट–श्रीकन्यानयन–श्रीआसिका–झरे [?] रोहद–श्रीयोगिनीपुर–धामइना–यमुनापारनानास्थानवास्तव्यप्रभृतसुश्रावकमहामेलापकेन प्रारम्भिते श्रीहस्तिनागपुर–श्रीमथुरामहातीर्थयात्रोत्सवे श्रीवज्रस्वामि–श्रीआर्यसुहस्तिसूरिवत्सर्वातिशयशालिनो जगत्पूज्याः श्रीमत्पूज्या जयवल्लभगणि–पं० पद्मकीर्तिगणि–पं० अमृतचन्द्रगण्यादिसाधुपंचक–श्रीजयर्द्धिमहत्तराप्रमुखसाध्वी........श्रीचतुर्विधसंघसहिताः प्रचुरम्लेच्छावलीसंकुलेऽपि जनपदे अविधवसुधवाभिः सुश्राविकाभिर्गीयमानेषु धवलमङ्गलेषु, दीयमानासु चचरीषु, पठत्सु नानाविधवन्दिवृन्देषु, वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीतूर्येषु, श्रीदेवालयेन सह श्रीनागपुरात् प्रचलिताः। ततश्च पदे पदे शुमशकुनैः प्रेर्यमाणाः सकलसंघकार्यप्राग्भारधुराधौरेयेण निरुपमदानतिरस्कृताशेषकल्पद्रुमेण ठ०अचलसुश्रावकेण, श्रीश्रीमालकुलोत्तंसेन श्रीदेवगुर्वाज्ञाचिन्तामणिविभूषितमस्तकेन अङ्गीकृताशेषसंघपाश्चात्यपदप्राग्भारेण सा० सुराजपुत्ररत्नेन साधुराजरुद्रपालसुश्रावकेण समस्तसंघेन च कलिताः, प्रतिपुरं प्रतिग्रामं निःशङ्कं गीतनृत्यवाद्यादिना श्रीजिनचैत्येषु चैत्यप्र(परि)पाटीकरणपूर्वं श्रीजिनशासनप्रोत्सर्पणायां विजृम्भमाणायां क्रमक्रमेण श्रीनरभटे श्रीजिनदत्तसूरिप्रतिष्ठितं नवफणमण्डितं समग्रातिशयनिधानश्रीपार्श्वनाथमहातीर्थं श्रीसमुदायकारितासमप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीपूज्या नमश्चक्रुः।

ततश्च श्रीनरभटसमुदायेन श्रीचतुर्विधसंघसमन्वितानां श्रीपूज्यानां श्रीसंघपूजादिनिर्मापणेन महती प्रभावना चक्रे।

ततः स्थानात् पुनः श्रीचतुर्विधसंघश्रीदेवालयसमन्विताः श्रीपूज्याः समग्रवागडदेशनगरग्रामवास्तव्यसुश्रावकलोकमनोरथमालां परिपूरयन्तो महतोत्साहेन श्रीकन्यानयने श्रीजिनदत्तसूरिप्रतिष्ठितं सकलतीर्थमुकुटकल्पं सातिशयिनं श्रीवर्धमानस्वामिनं नमश्चक्रुः। मेहर–पद्म–सा० कालाप्रमुखश्रीकन्यानयनसमुदायेन सकलम्लेच्छसंकुलेऽपि नगरे हिन्दुकयारकवत् स्थाने स्थाने संजायमानेषु प्रेक्षणीयेषु, श्रीदेवालयश्रीसंघसमन्वितानां श्रीपूज्यपादानां प्रवेशकमहोत्सवकरणपूर्वकं श्रीसंघपूजासाधर्मिकवात्सल्यनिर्मापणपूर्वकं च श्रीमहावीरतीर्थे भवभवान्तरेणार्जितपापकर्दमलापहारिणी महती प्रभावना चक्रे। तत्र च श्रीसंघेन श्रीवर्धमानस्वाम्यग्रे दिनाष्टकं गुरुतरोत्साहपूर्वकमष्टाह्निकामहामहोत्सवश्चक्रे।

८८. ततः स्थानात् समग्रयमुनापार–वागडदेशसुश्रावकसन्ततुरङ्गमशतचतुष्टय–शकटशतपञ्चक–वृषभशतसमकार्तस्वपलोकमहामेलापकेन वाद्यमानासु ढोल्लपरम्परासु, मार्गेषु स्थाने स्थाने दीयमानासु चचरीषु, वाद्यमानेष्वहर्निशं द्वादशविधनान्दीतूर्येषु, असंख्यम्लेच्छाश्वपरम्परानुगम्यमानाः, ठ० जयनपाल–ठ० विजयसिंह–ठ० सेढू–ठ० कुमरपाल–ठ० देवसिंहप्रमुखनानामन्त्रिदलीय–सुश्रावक–ठ०मोजा–श्रेष्ठि०पद्म–सा०काला–ठ०देपाल–ठ०पूर्ण–श्रे०महणा–ठ०गनू–सा०लूणा–ठ०फेरूप्रमुखानेकश्रीश्रीमालीय–सुश्रावकश्रे०पूनड–सा०कुमरपाल–मं०मेहा–मं०नीन्दा–सा०तान्हण–सा०म-

हिराजप्रमुखऊकेशवंशीयासंख्यसुश्रावकपरम्परैकवितानः श्रीचक्रवर्तिमहासैन्यसमानः, चारुद्रोणीभिर्यमुनामहानदीमुत्तीर्य क्रमक्रमेण निःशङ्कं मन्दमन्दप्रयाणकैः श्रीशान्तिनाथ-श्रीकुन्थुनाथ-श्रीअरनाथतीर्थङ्करचक्रवर्त्तिनां गर्भावतार-जन्म-दीक्षा-ज्ञानकल्याणकचतुष्टयपवित्रितवसुन्धरं हस्तिनापुरं चक्रवर्त्तिसमानश्रीमत्पूज्य-सेनानीसमानठ० अचल-पाश्चात्यपदनिर्वाहक-सा०रुदपालालंकृतः श्रीचतुर्विधोऽपि संघः सम्प्राप्तः।

८९. ततश्च श्रीमत्पूज्यैः श्रीचतुर्विधसंघसमन्वितैर्नूतनकृतस्तुतिस्तोत्रनमस्कारभणनपूर्वं श्रीशान्तिनाथ-कुन्थुनाथारनाथदेवानां भवभवोपार्जितपापपङ्कोच्चारिणी यात्रा चक्रे। श्रीसंघेन च श्रीइन्द्रपदादिग्रहणावारितसत्र-साधर्मिकवात्सल्य-श्रीसंघपूजानिर्मापण-हेमरजतकटकतुरगवस्त्रवितरणपूर्वकं कलिकाले प्रवर्तमानेऽपि श्रीकृतयुगवच्छ्रीवीरशासने स्वपक्ष-परपक्षचेतश्चमत्कारकारिणी महती प्रभावना चक्रे। तत्र च ठ०हरिराजपुत्ररत्नेनोदारचरित्रेण श्रीदेवगुर्वाज्ञाचिन्तामणिविभूषितमस्तकेन ठ०मदनानुजेन ठ०देवसिंहसुश्रावकेण जैथलसहस्रविंशत्येन्द्रपदं गृहीतम्। ठ०हरिराजादिमहर्द्धिकसुश्रावकैरमात्यादिपदानि गृहीतानि। सर्वसंख्यया देवभाण्डागारे जैथललक्ष १ सहस्र ५० समुत्पन्नाः। तत्र च दिनपञ्चकं श्रीजिनशासनप्रोत्सर्पणां विधाय श्रीहस्तिनागपुरात् सर्वोऽपि संघः श्रीमथुरामहातीर्थोपरि प्रचलितः सन् स्थाने स्थाने प्रोत्सर्पणां विदधानः श्रीयोगिनीपुरप्रत्यासन्ने तिलपथस्थाने समायातः। अत्रान्तरे द्रमकपुरीयाचार्येण युगप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रसूरीणामतिशयमसहिष्णुना दुर्जनस्वभावेन स्वर्णच्छत्रधरणसिंहासनोपवेशनादिकं पै[शु]न्यं महाराजाधिराजपातसाहिकुतबदीनाग्रे कृतम्। ततश्च म्लेच्छस्वभावेन पातसाहिना समग्रोऽपि संघस्तत्रावग्रहे कारितः। श्रीपूज्याः सपरिवाराः संघपुरुष-ठ०अचलादिमहर्द्धिकसुश्रावकसमन्विताः स्वपार्श्वे समाकारिताः। ततश्च श्रीमत्पूज्यमुखकमलावलोकनादेव न्यायिमहोदधिना प्रतापाक्रान्तसमग्रभूतलेन श्रीअलावदीनसुरत्राणपुत्ररत्नेन श्रीकुतबदीनसुरत्राणेन कथितम्-'एतेषां श्वेताम्बराणां मध्ये दुर्जनोक्तं वाक्यं न किमपि जायटीति'। पश्चाद् दीपानाग्रे आदिष्टम्-'एतेषां कर्णधारं सम्यगालोच्य येऽन्यायिनो भवन्ति ते शिक्षणीयाः'-इत्युक्त्वा श्रीपूज्या दीपाने प्रेषिताः। ततश्च प्रधानाधिकारिपुरुषैः सम्यङ्न्यायान्यायं परिभाव्य द्रमकपुरीयाचार्यो नष्टोऽपि सन् निष्कासयित्वा राजद्वारे ऊर्ध्वीकृतः। पश्चादालापितः सन् किमपि सत्यमब्रुवत्। श्रीपूज्यानामग्र एव राजद्वारे लक्षसंख्यम्लेच्छ-हिन्दुकप्रत्यक्षं यष्टि-मुष्टि-लकुटादिप्रहारैः कुट्टयित्वा विगोपयित्वा च बन्दी कृतः। श्रीपूज्यानामग्रे कथितम्-'युष्माभिः सत्यभाषिभिर्न्यायैकमहोदधिभिः सत्यश्वेताम्बरैः पातसाहिमेदिन्यां परिभ्रमणं स्वेच्छया करणीयम्, अत्रार्थे शङ्का काऽपि न कार्या'। पश्चाच्छ्रीपूज्यैः साधुराजतेजपाल-साधुराजखेतसिंह-ठ०अचला-ठ०फेरूणामग्र आदिष्टम्-'वयमितः स्थानात् पातसाहिप्रेषिता अपि तदैव व्रजिष्यामो यदाऽस्य द्रमकपुरीयाचार्यस्य दुर्जनस्वभावस्यापि मोचनं विधास्यथाम्'। यतः श्रीवर्धमानशिष्येण श्रीधर्मदासगणिनोपदेशमालायामुक्तमस्ति-

> जो चंदणेण बाहुं आलिंपइ वासिणाइ तच्छेइ।
> संथुणइ जोवि निंदइ महरिसिणो तत्थ समभावा॥ [८१]

अन्यशास्त्रेष्वप्युक्तमस्ति-

> शत्रौ मित्रे तृणे स्त्रैणे स्वर्णेऽश्मनि मणौ मृदि।
> मोक्षे भवे च सर्वत्र निःस्पृहो मुनिपुङ्गवः॥ [८२]

इति श्रीपूज्यानां शत्रुमित्रसमवृत्तीनां समतृणमणिलोष्टुकाञ्चनानां करुणासमुद्राणां गाढतरं मोचनाभिप्रायं विज्ञाय सर्वोऽपि राजलोको नगरलोकश्च मस्तकावधूननपूर्वकं श्रीपूज्यानां गुणग्रहणपरायणो जज्ञे। ततः श्रीपूज्या ......सा०तेजपालादिभिः कारणिकपुरुषान् सम्बोध्य स द्रमकपुरीयाचार्यो मोचयित्वा स्वपौषधशालायां प्रेषितः।

पश्चाच्छ्रीपूज्या अश्वपतिबहुमानिता महाम्लेच्छराजलोकनगरलोक-सा० तेजपाल-सा० खेतसिंह-सा० ईश्वर-ठ० अचलप्रमुखासंख्यसुश्रावकलोकानुगम्यमाना गुरुतरप्रभावनापूर्वकं पा(खां)डासरायस्थाने समायाताः। अस्मिन् प्रस्तावे श्रीपूज्यानां समग्रसंघस्य च श्रीजिनशासनप्रभावकैः सकलराजमान्यैः सर्वकार्यनिर्वाहणसमर्थैः सकलसंघाधारैः श्रीश्रीमालकुलोत्तंसैः सा० तेजपाल-सा० खेतसिंह-सा० ईश्वरसुश्रावकैः सकलसंघधुरन्धरेणोदारचरित्रेण चतुर्दिक्षु विख्यातेन मन्त्रिदलकुलोत्तंसेन ठ० अचलसुश्रावकेण ठ० श्रीवत्सपुत्ररत्नसमन्वितेन च भव्यं साहाय्यं कृतम्। अत्रान्तरे चतुर्मासी लग्ना। ततः श्रीपूज्याः संघविसर्जनं विधाय ठ० अचलादिभिः सुश्रावकैर्वरिवस्यमानाः खण्डकसराजौ चतुर्मासीं चक्रुः।

अत्रान्तरे पुनः श्रीमत्पूज्यैः श्रीसुरत्राणकथनेन श्रीसंघानुरोधेन च 'रायाभियोगेणं गणाभियोगेण०' मित्यादिसिद्धान्तवचनमनुसरद्भिश्चतुर्मासीमध्येऽपि श्रावणमासे संघभारनिर्वाहक-ठ० अचल-पाश्चात्यपदनिर्वाहकसा० रुद्रपालादिसमग्रवागडदेशसुश्रावकसंघमहामेलापकेन श्रीमथुरायां श्रीसुपार्श्व-श्रीपार्श्व-श्रीमहावीरतीर्थकराणां महता विस्तरेण यात्रा कृता। श्रीसंघेन च अवारितसत्रश्रीसाधर्मिकवात्सल्यादिभिर्महती प्रभावना चक्रे। ततः पुनः श्रीयोगिनीपुरे समागत्य पा(खां)डासरायस्थाने श्रीपूज्यैः शेषा चतुर्मासी चक्रे। श्रीजिनचन्द्रसूरिस्तूपे च वारद्वयं सविस्तरा यात्रा कृता।

९०. ततश्चतुर्मास्यनन्तरं श्रीमत्पूज्यैः शरीरे कम्परोगेण साबाधितैः सौवज्ञानध्यानबलेन स्वायुः शेषं परिभाव्य स्वहस्तदीक्षितस्य द्विधास्वसन्तानप्रभवस्य स्वपट्टलक्ष्मीपाणिग्रहणयोग्यलक्षणस्य तर्क-साहित्यालङ्कार-ज्योतिष्कसारविचारचतुरस्य स्वसमय-परसमयाम्भोधितारणतरण्डस्य सशिष्यरत्नस्य वा० कुशलकीर्त्तिगणेः स्वपट्टस्थापनस्वपरिभावितनामकारापणादिसर्वशिक्षासमन्वितचिप्पिकागोलकः श्रीराजेन्द्रचन्द्राणां निमित्तं विश्वासपात्रश्रीदेवगुर्वाज्ञानिरत-ठ० विजयसिंहहस्ते समर्प्य चाहुमानकुलोत्तंसशरणागतवज्रपञ्जरराणकश्रीमालदेवेन गाढतरोपरोधेन समामन्त्र्यमाणैः श्रीयोगिनीपुराच्छ्रीमेडतास्थानकोपरि विहारश्चक्रे। ततो मार्गे धामइना-रोहदप्रमुखनानास्थानसुश्रावकलोकान् वन्दापयन्तः श्रीकन्यानयने श्रीमहावीरदेवं नमश्चक्रुः। तत्रागतैः श्रीमत्पूज्यपादैः तापश्वासादिना घनतरमाबाधितैः श्रीकन्यानयनीयसमुदायप्रत्यक्षं चतुर्विधसंघमिथ्यादुष्कृतदानपूर्वकं पुनः सर्वशिक्षासमन्वितो लेखो विश्वासपात्रप्रवर्तकजयवल्लभगणिहस्ते श्रीराजेन्द्रचन्द्राचार्याणां निमित्तं प्रदत्तः। ततो मासमेकं श्रीकन्यानयनीयसमुदायस्य समाधानमुत्पाद्य श्रीनरभटादिनानास्थानसुश्रावकलोकान् वन्दापयन्तः श्रीमेडतास्थाने समायाताः। तत्रापि राणकश्रीमालदेवाभ्यर्थनया श्रीसमुदायसमाधानाय च चतुर्विंशतिदिनानि स्थित्वा स्वनिर्वाणयोग्यं स्थानं परिभाव्य श्रीकोशवाणास्थाने श्रीपूज्याः समायाताः। तत्रागतैः श्रीमत्पूज्यैः सं० १३७६ आषाढशुक्लनवमीरात्रिप्रथमसार्धप्रहरे...शपथपदि
.... श्रीचतुर्विधसंघमिथ्यादुष्कृतदानमदनकलाङ्कितहस्तकमलैः अखिवा(?)नश्वनहस्तिमल्लैः स्वर्गलक्ष्मीपाणिग्रहणं चक्रे।

ततः श्रीसमुदायेन श्रीवर्धमानस्वामिनिर्वाणसमयशिविकातमानगुरुतमासंख्यमण्डपिकाशोभितविमाननिर्माणपूर्वकं वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीतूर्येषु, उच्छाल्यमानेषु नालिकेरादिफलसमूहेषु, अविधवसुधवाभिः श्राविकाभिर्गीयमानेषु पूर्वमहर्षिगीतेषु, प्रभातसमये नगरलोक-राजलोकमहामेलापकेन निर्वाणमहामहोत्सवः सविस्तरमारेभे।

ज्योतिर्लक्षणतर्कमन्त्रसमयालङ्कारविद्यासमा,
दुःशीला वनिता इवात्रभुवने वाञ्छन्ति हा तुच्छताम् ॥ [८३]

पङ्कापहारनिखिले महीतले गामिनिर्जरतरलितैः ? ।
विधाय येऽस्तं गताः श्रीस्वर्गं येॐ............॥ [८४]

ये तु दीनेपुत्रनिचतवयं मुक्तं मा हत्याकुलं (?),
सद्यस्तत्पथगामिभिः सहचरैः सौराज्यसौभिक्ष्यकैः ।
स्थास्यामोऽपनयः(?) कथं वयमिति ज्ञात्वेव चिन्तातुरैः,
प्रातः श्रीजिनचन्द्रसूरिगुरवः स्वर्गस्थिता मङ्गलम् ॥ [८५]

भाव्यं भूवलये क्षयं कलिपतेर्दुर्भिक्षसेनापते-
र्ज्ञात्वा तन्मथनोद्यताः सुरगुरुं प्रष्टुं सखायं निजम् ।
मन्ये नाधिकमन्त्रधारणयुता भावात् पश्चाद् धृता (?),
राजानो जिनचन्द्रसूरय इति स्वर्गं गता दैवतः ॥ [८६]

पश्चान्मश्रीश्वरदेवराजपौत्रेण मं० माणचन्द्रपुत्ररत्नेनोदारचरित्रेण मं० मून्धराजसुश्रावकेण तस्मिन् स्थाने श्रीमत्पूज्यपादुकासमन्वितं स्तूपं कारितम् ।

——— * ———

९१. ततश्चतुर्मास्यनन्तरं जयवल्लभगणिः श्रीपूज्यप्रदत्तं सर्वशिक्षासमन्वितं लेखं गृहीत्वा श्रीभीमपल्ल्यां श्रीराजेन्द्रचन्द्राचार्याणामन्तिके समायातः । ततः श्रीमदाचार्या जयवल्लभगणिप्रमुखसाधुसमन्विताः श्रीपत्तने विहृताः । तत्र च विषमकाले महादुर्भिक्षे प्रवर्तमानेऽपि स्वज्ञानध्यानबलेन श्रीचतुर्विधस्य संघस्य कुशलं परि...सिद्धिरामावदातैर्निजगुरुश्रीमत्पूज्यादेशप्रतिपालननिमित्तैः श्रीराजेन्द्राचार्यवर्यैः सं० १३७७ ज्येष्ठार्धैकादश्यां कुम्भलग्ने श्रीमूलपदस्थापनामहोत्सवविनिश्चयश्चाकृत । पश्चाच्छ्रीश्रीचन्द्रकुलावतंसेन श्रीजिनशासनप्रभावनाकरणनिरतेनौदार्यैर्विनिर्जित...सा० जाल्हणपुत्ररत्नेन साधुराजतेजपालसुश्रावकेण स्वभ्रातृसा० रुद्रपालपरिवृतेन मूलपदस्थापनामहोत्सवकारापणाय भारं श्रीमदाचार्याणां प्रसादादङ्गीकृत्य, चतुर्दिक्षु श्रीयोगिनीपुर-श्रीउच्चापुर-श्रीदेवगिरि-श्रीचित्रकूट-श्रीस्तम्भतीर्थादर्वाक् समग्रजनपदनगरग्रामवास्तव्यसमग्रविधिमार्गसुश्रावकाणां तद्दिनोपरि समाकारणाय कुङ्कुमपत्रिकां दत्त्वा लेखवाहकाः प्रेपिताः । पश्चात् सर्वस्थानकविधिसमुदायाः प्रमुदितवदना अहमहमिकया महाविषमकाले प्रवर्त्तमानेऽपि तद्दिनोपरि श्रीपत्तने समाजग्मुः । ठ० विजयसिंहोऽपि श्रीपूज्यप्रदत्तं मूलपदयोग्यशिष्यस्थापनशिक्षाचिट्ठिका...कं गृहीत्वा श्रीयोगिनीपुरात् तद्दिनोपरि श्रीपत्तने समायातः । ततः सर्वस्थानकसमुदायसमागमनं ज्ञात्वा स्वप्रतिज्ञातार्थनिर्वाहणाऽनैत्तिभिः (?) श्रीराजेन्द्रचन्द्राचार्यैः श्रीजिनचन्द्रसूरिसद्गच्छावासमूलस्तम्भप्रायसकलविद्यापाठनाद् द्वितीयोपाध्यायश्रीविवेकसमुद्रमहोपाध्याय-प्रवर्तकजयवल्लभगणि-हेमसेनगणि-वाचनाचार्यहेमभूषणगणिप्रमुखसुसाधुत्रयस्त्रिंशन्मेलापके श्रीजयर्द्धिमहत्तरा-प्र० बुद्धिसमृद्धिगणिनी-प्र० प्रियदर्शनागणिनीप्रमुखसाध्वीत्रयोविंशति-सर्वस्थानकसर्वसमुदायमहामेलापके च जयवल्लभगणिहस्तक-श्रीमत्पूज्यस्वहस्तप्रदत्तलेखः, ठ० विजयसिंहहस्तका श्रीमत्पूज्यस्वहस्तप्रदत्ता गोलकमध्यस्था चिट्ठिका च वाचिता । तदाकर्णनात् तत्क्षणादेव चतुर्विधसंघोऽपि नवनिधानप्राप्तिवद्दर्पकल्लोलामृतपूरितो नृत्यं कर्तुमारेभे । पश्चाच्छ्रीमदाचार्यैरस्खलितनिजगुर्वाज्ञाप्रतिपालनोद्यतैः सर्वातिशयशालिभिः श्रीच-

* अत्र पुनः मूलादर्शे २४-२५ अक्षरमितः पङ्क्तिभागः शून्यरूपेण मुक्तोऽस्ति ।

तुर्विधविधिसंघपरिवृतैः साधुराजतेजपालप्रमुखनानास्थानसमुदायैरहमहमिकया स्थाने स्थाने कार्यमाणेषु प्रेक्षणीयेषु, दीयमानेषु स्वर्णरजतकटकतुरगवस्त्रान्नदानेषु, नानाविधकाव्यं परम्पराभिः पठत्सु बन्दिवृन्देषु, क्रियमाणेषु महर्द्धिकसुश्रावकलोकैः श्रीसाधर्मिकवात्सल्येषु, वाद्यमानेष्वहर्निशं द्वादशविधनान्दीतूर्येषु, संजायमानासु संघपूजासु, सर्वशिक्षासमन्वितश्रीपूज्यप्रदत्तगोलकचिट्ठिकालेखानुसारेण सर्वलब्धिवितानसंसारितपूर्वगणधराणामुद्भटभाग्यप्रतापलक्ष्मेश्वराणां स्थैर्यौदार्यगाम्भीर्यादिगुणावलीसमुपार्जितहीराट्टहासराकाशशाङ्ककरनिकरसोदरगोक्षीरधाराहारिहारप्रालेयोज्ज्वलदन्तिदन्तक्षोदसमानयशःकाचकर्पूरपूरवासितत्रिभुवनवलयानां स्वसहाध्यायिनां नवनाट्यरसावतारतात्कालिकसम्पादितनवनवचिच्छित्तिकाव्यपरम्पराविस्मापिताशेषकोविदचक्राणां ज्ञानध्यानातिशयसंसारिसकलपूर्वसूरीणां निखिलविद्यापारीणानां वाक्चातुरीविनिर्जितसुराचार्याणां मन्त्रीश्वरराजकुलप्रदीपमन्त्री ठ० जेसलरत्नकुक्षिधारिणीमन्त्रिणीजयतश्रीपुत्राणां चत्वारिंशद्वर्षप्रमाणानां समग्रयुगप्रवरागमकमलाकेलिनिलयानां वाचनाचार्य.........श्रीशान्तिनाथदेवाग्रे सकल...........श्रीगूर्जरत्रामुकुटकल्पनरसमुद्रश्रीपत्तनवास्तव्यनानामहर्द्धिकस्वपक्ष-परपक्षमहाव्यावहारिकासंख्यलोकगुरुतरानेकराजलोकचेतश्चमत्कारकारी म्लेच्छबहुलेऽपि समग्रजनपदे श्रीश्रेणिक-श्रीसम्प्रति-श्रीकुमारपाल-महाराजाधिराजवारकवत् श्रीयुगप्रधानपदवीसंस्थापनमहामहोत्सवश्चक्रे। श्रीपूज्योपदिष्टश्रीजिनकुशलसूरय इति नामनिर्माणश्रीपूज्यदापितश्रीपूज्यसमवसरणप्रदानपूर्वकं श्रीयुगप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रसूरिदेशप्रासादोपरि महाकलशाधिरोपश्च चक्रे। तस्मिन् महोत्सवे सम्पूर्णाचिन्त्यमनोरथमालेनोदारचरित्रेण साधुराजतेजपालेन सर्वस्थानकवास्तव्यः श्रीचतुर्विधसंघः समग्रोऽपि वस्त्रप्रदानपूर्वं बहुमानितः। अनेकगच्छाश्रिताः शतसंख्या आचार्याः सहस्रसंख्याः साधवश्च वस्त्रादिप्रदानेन रैलिकचित्ताः[1] कृताः। समस्तयाचकाचार्योऽपि सम्पूरितमनोरथः कृतः। साधुराजसामलपुत्ररत्नेन सर्वसाधर्मिकवत्सलेन श्रीभीमपल्लीसमुदायमुकुटकल्पेन पुरुषसिंहेन साधुराजवीरदेवसुश्रावकेण, श्रीश्रीमालकुलोत्तंस-सा० भजलपुत्ररत्नसाधुराजसिंहेन, मन्त्रिदलकुलोत्तंसेन राजमान्येन श्रीदेवगुर्वाज्ञाचिन्तामणिविभूषितमस्तकेन ठ० विजयसिंह-ठ० जैत्रसिंह-ठ० कुमरसिंह-ठ० जवनपाल-ठ० पाहाप्रमुखश्रीमन्त्रिदलीयसमुदायेन, साधुराजसुभटपुत्ररत्न-सा० मोहण-मं० धनू-झांकाप्रमुखश्रीजावालिपुरीय-सा० गुणधरप्रमुखश्रीपत्तनीय-साहु० तिहुणाप्रमुखश्रीबीजापुरीय-ठ० पउमसिंहप्रमुखश्रीआशापल्लीय-गो० जैत्रसिंहप्रमुखश्रीस्तम्भतीर्थीयसमुदायैश्च श्रीसंघपूजा-श्रीसाधर्मिकवात्सल्यावारितसत्रनिर्माणपूर्वकममेयं स्वस्वापतेयं सफलीचक्रे। तस्मिन्नेव दिने श्रीमालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवः श्रीपूज्यैश्चक्रे। ततः श्रीसमुदायेन श्रीशान्तिनाथदेवाग्रे युगप्रधानश्रीजिनकुशलसूरिपट्टनिवेशनसंस्तवनार्थं गुरुतरोत्साहपूर्वकमष्टावष्टाह्निकाः कृताः।

९२. तदनन्तरं श्रीपूज्याः श्रीजिनकुशलसूरयः प्राप्तयुगप्रधानराज्या महामिथ्यात्वशत्रूच्चाटनाय दिग्विजयं कर्तुकामाः साधुवीरदेवसुश्रावककारितगुरुतरप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीभीमपल्ल्यां प्रथमां चतुर्मासीं चक्रुः। ततश्च सं० १३७८ माघशुक्लतृतीयायां साधुवीरदेवप्रमुखसकलश्रीभीमपल्लीसमुदायेन श्रीपत्तनीयसमुदायमहामेलापकेन सकलजनमनश्चमत्कारकारी दीक्षोत्थापना-मालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवः श्रीसाधर्मिकवात्सल्यश्रीसंघपूजादिनानाप्रभावनापूर्वकं कारितः। तस्मिन् महोत्सवे श्रीराजेन्द्रचन्द्राचार्यवर्येण माला गृहीता, देवप्रभमुनेर्दीक्षा दत्ता, वाचनाचार्यहेमभूषणगणेः श्रीअभिषेकपदम्, पं० मुनिचन्द्रगणेर्वाचनाचार्यपदं प्रदत्तम्। तस्मिन्नेव च वर्षे स्वप्रतिज्ञातार्थप्रतिपालनप्रवीणैः श्रीपूज्यैः स्वज्ञानध्यानबलेन सकलगच्छातुच्छवात्सल्यसमुद्यतानां श्रीविवेकसमुद्रोपाध्यायराजानामायुःशेषं विज्ञाय श्रीभीमपल्लीतः श्रीपत्तने समागत्य ज्येष्ठाद्यपक्षचतुर्दशीदिने आरोग्यशरीराणामपि श्रीविवेकसमुद्रमहोपाध्यायानां चतुर्विधसंघेन सह मिथ्यादुष्कृतदानं दापयित्वा, गुरुतरश्रद्धानपूर्वकमनशनं प्रत्याख्यानं च दत्तम्। तदनन्तरं च श्रीपूज्यपा-

---

१ 'रलीयायत' इति।

न्दारविन्दं ध्यायन्तः श्रीपञ्चपरमेष्ठिनमस्कारमहामन्त्रं स्मरन्तो नानाविधाराधनामृतपानं कुर्वन्तः श्रीसमुदायकृतप्रोत्सर्पणाः स्वकर्णाभ्यां श्रीउपाध्याया आकर्णयन्तो ज्येष्ठसुदिद्वितीयायां सकलामरगुरुजयनार्थं स्वर्गं प्राप्ताः । पश्चाच्छ्रीपत्तनीयसमुदायेन गुरुतरविमाननिर्माणपूर्वकसकलजनमनश्चमत्कारकारी निर्वाणमहामहोत्सवः कृतः ।

तदनन्तरं च श्रीपूज्यैः स्वकीयसुगुरुश्रीजिनचन्द्रसूरिस्वसहाध्यायिश्रीराजेन्द्राचार्य-श्रीदिवाकराचार्य-श्रीराजशेखराचार्य-वा० राजदर्शनगणि-वा० सर्वराजाद्यनेकमुनिमण्डलीपाठकानां वारत्रयं भणितश्रीहैमव्याकरणबृहद्वृत्ति-पद्त्रिंशत्सहस्रप्रमाणश्रीन्यायमहातर्कादिसर्वशास्त्राणां सकलगच्छगौरवाणां श्रीविवेकसमुद्रोपाध्यायानां स्तूपं श्रीसमुदायपार्श्वात् कारापयित्वा अषाढशुक्लत्रयोदश्यां महता विस्तरेण वासक्षेपः कृतः । ततः श्रीपत्तनीयसमुदायाभ्यर्थनया श्रीपत्तने द्वितीया चतुर्मासी कृता ।

९३. ततः सं० १३७९ वर्षे मार्गशीर्षवदिपञ्चम्यां नानानगरग्रामवास्तव्यासंख्यमहर्द्धिकसुश्रावकलोकमहामेलापकेन श्रीसाधर्मिकवत्सलेन श्रीजिनशासनप्रोत्सर्पणाप्रवीणेनोदारचरित्रेण दक्षदाक्षिण्यौदार्यधैर्यगाम्भीर्यादिगुणगणमालालङ्कृतसारेण युगप्रवरागमश्रीजिनप्रबोधसूरिसुगुर्वनुजसाधुराजजाल्हणपुत्ररत्नेन स्वभ्रातृ-सा०रुदपालकलितेन साधुराजतेजपालसुश्रावकेण दिनदशकादारभ्य संजायमानेषु महाप्रेक्षणीयेषु, दीयमानेषु तालारासेषु, नृत्यमानेष्वबलावृन्देषु,दीयमानेष्वमेयसत्त्वापतेयेषु, क्रियमाणेषु श्रीसंघपूजाश्रीसाधर्मिकवात्सल्यावारितसत्रेषु, सकलगूर्जरत्रामुकुटभूतश्रीपत्तनीयमहामहर्द्धिकमहाजनलोक-राजलोकमहामेलापकेन महिष्ठजलयात्रापूर्वकं गुरुतराश्चर्यकारी स्वपक्ष-परपक्षचेतोहारी प्रतिष्ठामहामहोत्सवः श्रीशान्तिनाथविधिचैत्ये कारितः । तस्मिन्नेव दिने श्रीशत्रुञ्जयतीर्थोपरि साधुराजतेजपालादिसमुदायकारितश्रीयुगादिदेवविधिचैत्यप्रारम्भः सा०नरसिंहपुत्ररत्नश्रीदेवगुर्वाज्ञाप्रतिपालनोद्यतखींवडसुश्रावकोद्यमेन संजातः । तस्मिन् महोत्सवे श्रीशान्तिनाथप्रमुखश्रीशैलमय-रत्नमय-पित्तलामयबिम्बानां सार्धशतं स्वकीयं मूलसमवसरणद्वयं श्रीजिनचन्द्रसूरि-श्रीजिनरत्नसूरिप्रमुखनानाधिष्ठायिकानां मूर्त्तयश्च श्रीपूज्यैः प्रतिष्ठिताः । तस्मिन् महोत्सवे श्रीभीमपल्लीसमुदायमुकुटकल्पेन सा० श्यामलपुत्ररत्नेनोदारचरित्रेण साधुवीरदेवेन श्रीपत्तनीय-श्रीभीमपल्लीय-श्रीआशापल्लीयसमुदायेन श्रीसंघपूजा श्रीसाधर्मिकवात्सल्यैः साधुसहजपालपुत्रसा० थिरचन्द्र-सा०धीणापुत्रसा० खेतसिंहप्रमुखश्रावकैः श्रीइन्द्रपदादिमहामहोत्सवनिर्मापणादिना महती प्रभावना चक्रे । ततः श्रीवीजापुरीयसमुदायाभ्यर्थनया श्रीपूज्याः श्रीवीजापुरीयसमुदायेन सह श्रीवीजापुरे सकललोकाश्चर्यकारकगुरुतरप्रवेशकमहामहोत्सवपूर्वकं श्रीवासुपूज्यदेवमहातीर्थं नमश्चक्रुः । ततः श्रीवीजापुरीयसमुदायेन सह श्रीत्रिशृङ्गमके विहृताः । तत्र च साधुराजजेसलपुत्ररत्नाभ्यां श्रीजिनशासनप्रभावकाभ्यां-साधुराजजगधर-साधुसलक्षणसुश्रावकाभ्यां सकलजनमनश्चमत्कारकार्यनेकसहस्रसंख्यलोकमहामेलापकेन प्रवेशकमहामहोत्सवः कारितः । ततः स्थानाच्छ्रीआरासणमहातीर्थे श्रीतारङ्गकमहातीर्थे श्रीवीजापुरीयश्रीत्रिशृङ्गमकीयसमुदायेन सह मन्त्रिदलकुलोत्तंसश्रीदेवगुर्वाज्ञाप्रतिपालनोद्यत-ठ०आसपालपुत्ररत्न-ठ०जगसिंहसुश्रावकप्रमुखश्रीसाधर्मिकवात्सल्यश्रीसंघपूजां श्रीअवारितसत्रमहाध्वजारोपादिनानाविधोत्सर्पणापूर्वकं तीर्थयात्रां कृत्वा श्रीपत्तने तृतीयां चतुर्मासीं चक्रुः ।

तदनन्तरं सं० १३८[०] वर्षे कार्तिकशुक्लचतुर्दश्यां श्रीजिनशासनप्रभावनाकरणप्रवीणेन स्वपूर्वजमरुस्थलीकल्पवृक्षसाधुराजयशोधवलयत्नसाधर्मिकवत्सलेन निर्गर्वचूडामणिना साधुश्रीचन्द्रकुलप्रदीपश्रीजिनप्रबोधसूरिसुगुरुचक्रवर्त्यनुजसाधुजाल्हणपुत्ररत्नेन युगप्रवरागमश्रीजिनकुशलसूरिसुगुरुराजपट्टाभिषेककारापणोपार्जितहीराट्टहासहारतुषारहिमकरकरनिकरगोक्षीरधाराधवलवत्पुण्ययशःप्राग्भारेण साधुराजतेजपालसुश्रावकेण स्वानुजसाधुरुदपालपरिवृतेन श्रीशत्रुञ्जयनिष्पद्यमानविधिचैत्ययोग्यमूलनायकश्रीयुगादिदेवबिम्बं सप्तविंशत्यङ्गुलप्रमाणं कर्पूरमयं कारयित्वा, सकलस्थानवास्तव्यसर्वसमुदायान् कुङ्कुमपत्रिकादानपूर्वकं समामन्त्र्य, क्रियमाणेष्ववारितसत्रेषु, दीयमानेष्वमेयेषु स्वसापतेयेषु,

गीयमानेष्वहर्निशमविधयसुधयाभिर्नारीभी रासकवृन्देषु, नृत्यमानेषु खेलकसमूहेषु, सम्पद्यमानेषु श्रीसाधर्मिकवात्सल्येषु, समग्रश्रीपत्तनीयमहामहर्द्धिकव्यवहारिकलोक राजलोकमहामेलापकेन गुरुतरजलयात्रानिर्माणपूर्वकं सकलजनमनश्चमत्कारकारी नानाभवोपार्जितपापसंभारापहारी प्रतिष्ठामहामहोत्सवः सविस्तरतरः कारितः। तस्मिन् महोत्सवे साधुतेजपालकारितश्रीयुगादिदेवप्रमुखानेकशैलमय पित्तलामयबिम्बानां श्रीजिनप्रबोधसूरि-श्रीजिनचन्द्रसूरिमूर्त्तीनां श्रीकपर्दयक्ष-श्रीक्षेत्रपालाम्बिकाद्यधिष्ठायिकानां नानासुश्रावककारितानां प्रतिष्ठा संजाता। श्रीशत्रुञ्जयप्रासादयोग्यदण्डध्वजप्रतिष्ठा च। तस्मिन् महोत्सवे सा० धीणापुत्ररत्नसा० खेतसिंहादिसुश्रावकैरिन्द्रपद-श्रीयुगादिदेवमुखोद्घाटनादिमालाग्रहणपूर्वकममेयं स्वस्वापतेयं सफलीकृतम्। मार्गशीर्षवदिषष्ठ्यां च सविस्तरतरः श्रीमालारोपण-श्रीसम्यक्त्वारोप-सामायिकारोप-परिग्रहपरिमाणादिनन्दिमहामहोत्सवश्च कृतः।

९४. तदनन्तरं सं० १३८० श्रीयोगिनीपुरवास्तव्येन श्रीश्रीमालकुलोत्तंसेन गङ्गाम्बुप्रवाहवत्सुस्वच्छाशयेन श्रीजिनशासनप्रभावनाकरणप्रवीणेन पूर्वं कृतसविस्तरतरश्रीफलवर्धिकामहातीर्थयात्रोत्सवेनोद्भटभाग्यप्रतापलङ्केश्वरेण दानाधःकृतसकलविश्वम्भरादातृवर्गेण साधुहरुपुत्ररत्नेन साधुश्रीरयपतिसुश्रावकेण राजमान्यप्रमानकनिदेशनिख्यातोद्भटचरित्रस्वपुत्ररत्नसाधुराजधर्मसिंहपार्श्वात् पातसाहिश्रीग्यासदीनमहाराजाधिराजफुरमाणं सकलमीरमलिकशिरोधूननकारकं श्रीराजप्रधानश्रीनेबसाहाय्येन निष्कासयित्वा, श्रीपूज्यानां श्रीपत्तनस्थितानां समीपे, श्रीशत्रुञ्जयोज्जयन्तादिमहातीर्थयात्रारणार्थं स्वविज्ञप्तिकादानपूर्वकं मानुषाणि प्रेषितानि।

तदनन्तरं सकलातिशयनिधानैर्ज्ञानध्यानादिगुणगणानुकृतसकलपूर्वयुगप्रधानैः श्रीपूज्यैः श्रीजिनकुशलसूरिभिः सम्यक् परिभाव्य श्रीतीर्थयात्राकरणादेशः प्रदत्तः। तदाकर्णनादेव हर्षाकुलचेतसा साधुश्रीरयपतिसुश्रावकेण प्रभावकोदारचरित्रपुत्ररत्नसाधुमहणसिंह-साधुधर्मसिंह-साधुशिवराज-साधुअभयचन्द्र-पौत्रभीष्म-भ्रातृसाधुजयणपालादिसारपरिवारपरिवृतेन श्रीपूज्योपदिष्टविधिना श्रीयोगिनीपुरसमुदायप्रमुकुटकल्पमन्त्रिदलकुलोत्तंससाधुजयणपाल-श्रीदेवगुर्वाज्ञाप्रतिपालनोद्यतश्रीश्रीमालीयसाधुभोजा-सा० छीतम-ठ० फेरू-धामइनावास्तव्य सा० रूपा-सा० बीजाप्रमुख-पश्चउलीसा० क्षेमन्धरप्रमुख-श्रीलूणीवडीवास्तव्यसमुदायान् श्रीयोगिनीपुरप्रत्यासन्नानेकग्रामसमुदायांश्च मेलयित्वा, स्वपुत्ररत्नसाधुराजधर्मसिंहराजरत्नेन अत्थसंअण(?) श्रीयोगिनीपुरराजमार्गेण वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीतूर्येषु, दीयमानेषु रासकेषु, गीयमानेषु गीतेषु, पठत्सु श्रीसुरत्राणादिमहाराजबन्दिवृन्देषु, दीयमानेषु कनकाश्वपट्टांशुकादिनानाविधेषु दानेषु, अश्वाधिरूढवाद्यमानढोलपरम्परायाधरीकृताशाचक्रेषु, प्रथमवैशाखवदिसप्तम्यां नूतनकारितप्रासादसदृशः श्रीदेवालयस्य चतुर्विधसंघसमन्वितस्य निष्क्रमणमहामहोत्सवः कृतः। तदनन्तर प्रथमदिनादारभ्य प्रतिदिनमवारितसत्रं कुर्वाणो गुर्वाडम्बरेण साधुश्रीरयपतिसुश्रावकः समग्रसंघान्वितः श्रीकन्यानयने समायातः। तत्र च श्रीयुगप्रधानश्रीजिनदत्तसूरिप्रतिष्ठितश्रीमहावीरदेवतीर्थराजस्य यात्रानिर्माणपूर्वकं समग्रम्लेच्छानामपि सम्यक्त्वदायिनी प्रभावना कृता। ततः स्थानाच्च श्रीजिनशासनप्रभावकमल्लोरसधुराधुरीणश्रे० पूना-श्रे० पद्मा-श्रे० राजा-श्रे० रातू-ठ० देपाल-साधुराजकाला-खारद(?)पूनाप्रमुखश्रीसमुदायो गुर्वाडम्बरेण मा० देदाप्रमुखश्रीआसिकासमुदायः श्रीसंघेन सह प्रचलितः। तदनन्तर ग्रामनगरादिषु प्रोत्सर्पणां कुर्वाणः सर्वोऽपि संघः श्रीनरभटे समायातः। तत्र च श्रीजिनदत्तसूरिप्रतिष्ठितं नवफणाविभूषितं सर्वातिशयप्रधानं श्रीपार्श्वनाथदेवाधिदेवं नानाविध ...पूर्वकं सकलसंघेन नमश्चक्रे। ततः स्थानाच्च मा० भीमा-सा० देवराजादिसमुदायः श्रीसंघेन सह प्रचलितः। तदनन्तर खाट्टूवास्तव्यसा० गोपालप्रमुखनानानगरग्रामवास्तव्यानेकश्रावकाः श्रीनवहा-झुञ्झणूवास्तव्यसा० काण्हाप्रमुखनिधिसमुदायादिश्रावकाश्च संघेन सह प्रस्थिताः। ततः पश्चात् श्रीजिनशासनप्रभावना कुर्वाणः सर्वसंघसमन्वितः साधुश्रीरयपतिसुश्रावकः श्रीफलवर्धिकायां श्रीपार्श्वनाथदेवयात्रार्थं समायातः। तत्राऽऽगते साधुश्रीरयपतिसंघसमुद्रे

कुङ्कुमपत्रिकाप्रदानपूर्वं पूर्वमाकारित श्रे० हरिपालपुत्ररत्न श्रे० गोपाल-सा० पासवीरपुत्र सा० नन्दन-सा० हेमलपुत्र सा० कड्या-सा० पूर्णचन्द्रपुत्रप्रभावक सा० हरिपाल-सा० पेथड-सा० चाहड-सा० लाखण-सा० सीवा-सा० सामल-सा० कीकटप्रमुखश्रीउच्चकीय-सा० वस्तुपालप्रमुखश्रीदेवराजपुरीय-श्रीक्यासपुरवास्तव्य सा० मोहणप्रमुखसमुदाय-सा० ताल्हणप्रमुखश्रीमरुकोट्टसमुदायादिसकलसिन्धुनगरग्रामसमुदायाः, सा० लखमसिंहप्रमुखश्रीनागपुरादिसपादलक्षसमुदायाः,-सा० आंबाप्रमुखश्रीमेडतासमुदाय-मं० केल्हाप्रमुखश्रीकोसवाणासमुदाया नदीनां प्रवाहा इव अहमहमिकया प्रविष्टाः। ततः स्थानात् संघः सर्वोऽपि सा० मेल्लप्रमुखश्रीगुडहासमुदायमात्मना सह गृहीत्वा श्रीजावालिपुरे सकलराजलोकनगरलोकसमुदायकृतमहाप्रवेशकोत्सवः समायातः। तत्र च गुर्वाडम्बरेण सकलविपक्षहृदयकीलकानुकारिणी श्रीचैत्यप्रपाट्यादिप्रभावना श्रीसंघेन कृता। ततः स्थानाच सा० महिराज-कोरण्टकवास्तव्यसा० गाङ्गाप्रमुखानेकस्वपक्षपरपक्षीयाः श्रावका यात्रार्थं संघेन सह प्रचलिताः। पश्चात् सर्वोऽपि संघः श्रीश्रीमाले श्रीशान्तिनाथदेवयात्राम्, श्रीभीमपल्ल्यां श्रीरायडे च श्रीमहावीरदेवयात्रां च गुरुतरप्रभावनापूर्वं निर्माय, ज्येष्ठवदिचतुर्दश्यां श्रीगूर्जरत्रामुकुटकल्पे प्रभूतम्लेच्छव्यवहारिकसमूहसंकुले श्रीपत्तने महाराजाधिराजसैन्यलीलां दधान आवासितः। पश्चात् सकलस्वपक्ष-परपक्षाऽऽश्चर्योत्पादनपूर्वकं श्रीदशार्णभद्रमहाराजाधिराजवन्महर्द्ध्या महाभक्त्या च श्रीशान्तिनाथस्थावरतीर्थं युगप्रवरागमसुगुरुचक्रवर्तिश्रीजिनकुशलसूरिचरणारविन्दं जङ्गमतीर्थं च सुवर्णरत्नवृष्टिनिर्माणपूर्वकं साधुराजश्रीरयपति-सा० महणसिंहप्रमुखनानास्थाननगरवास्तव्यसर्वसमुदायैर्नमश्चक्रे। तदनन्तरं श्रीशान्तिनाथपुरतो महामहर्द्ध्याऽष्टाह्निकामहोत्सवं कुर्वाणेन श्रीसंघेन श्रीपत्तनीयदेवालयेषु, *अश्वाधिरूढेषु* वाद्यमानेषु ढोल्लेषु, दीयमानेष्वमेयेषु स्वस्वापतेयेषु, धमधमायमानेषु द्वादशनिघनान्दीतूर्येषु, असंख्यलोकमहामेलापकेन सकलजनचेतश्चमत्कारकारिणी मिथ्यादृशामप्युपबृंहाद्वारेण श्रीमन्यशोपार्जनदायिनी असहिष्णुलोकहृदयशल्यानुकारिणी सविस्तरतरा चैत्यप्रपाटी कृता।

९५. तदनन्तरम्, सकलसंघमुकुटकल्पसंघपुरुषसाधुश्रीरयपति-सकलसंघभारनिर्वाहणप्रवीणसा० महणसिंह-श्रे० गोपाल-सा० जयणपाल-सा० काला-सा० हरिपालप्रमुखश्रीदेशान्तरीयसमुदायमुख्यसुश्रावकैः, साधुराजजाल्हणकुलप्रदीपसकलोत्सवनिर्मापणोपार्जितपुण्यकदम्बकसाधुराजतेजपाल-श्रीश्रीमालकुलोत्तंससाधुगजउज्जल[. ...]कुलावतंसकसाधुश्रीरयपतिसंघाङ्गीकृतपाश्चात्यपदभागभारनिरुपमनिर्वाहणोद्यतसाधुराजराजसिंह-साधुश्रीपतिपुत्ररत्नसाधु कुलचन्द्र-सा० धीणापुत्ररत्नसा० गोसलप्रमुखश्रीपत्तनीय-श्रीहम्मीरपत्तनीयसमुदायमुख्यसुश्रावकैश्च त्यक्तागम्यमार्गामित्यश्चौनाधन्यायालङ्कृतगात्रप्रचण्डकलिकालभूपालभयाकम्पमानैः श्रीपूज्यश्रीजिनकुशलसूरिधर्मचक्रीन्द्रपादा विज्ञप्ताः यद्-'स्वामिन्! प्रत्यासन्नायामपि वर्षायां समागतायाम्, सकलसंघोपरि महत्प्रसादं विधाय अनेकोपद्रवादिमहामदावलिप्तदुष्टकलिकालमहीपालकृतापद्रक्षणाय प्रमथ तीर्थनिजयययात्रायां पादावधारणं क्रियतां येनास्माकं मनश्चिन्तितार्थसम्पत्तयस्तत्क्षणादेव सम्पनीपद्यन्ते'। पश्चाद् दाक्षिण्यैकमहोदधयः परोपकृतिकरणोद्यतादर्निशहृदयः श्रीआर्यसुहस्तिसूरि-श्रीवयरस्वामि-श्रीमदभयदेवसूरि-श्रीजिनदत्तसूरिप्रमुखानेकयुगप्रवरागमावदातानुकारिसंघदाननिर्मापणोपार्जितसत्कीर्तयः श्रीजिनकुशलसूरयः-

> जो अवमन्नइ संघं पावो थोवं पि माणमयलित्तो।
> सो अप्पाणं बोलइ दुक्खमहासागरे भीमे ॥१॥ [८७]
> सिरिसमणसंघआसायणाओ पाविंति जं दुहं जीवा।
> तं साहिउं समत्थो जइ परि भयवं जिणो होइ ॥२॥ [८८]
> तित्थपणामं काउं कहेइ साहारणेण सद्देणं।
> सव्वेसिं सन्नीणं जोयणनीहारिणा भयवं ॥३॥ [८९]

तप्पुव्विया अरहया पूइयपूया य विणयकम्मं च ।
कयकिच्चोऽवि जह कहं कहेइ नमए तहा तित्थं ॥४॥ [९०]

इत्यादिश्रीआवश्यकादिसिद्धान्तानुसारेण;

"यः संसारनिरासलालसमतिर्मुक्त्यर्थमुत्तिष्ठते,
यं तीर्थं कथयन्ति पावनतया येनास्ति नान्यः समः ।
यस्मै तीर्थपतिर्नमस्यति सतां यस्माच्छुभं जायते,
स्फूर्तिर्यस्य परा वसन्ति च गुणा यस्मिन् स संघोऽर्च्यताम् ॥१॥ [९१]
लक्ष्मीस्तं स्वयमभ्युपैति रभसात् कीर्तिस्तमालिङ्गति,
प्रीतिस्तं भजते मतिः प्रयतते तं लब्धुमुत्कण्ठया ।
स्वःश्रीस्तं परिरब्धुमिच्छति मुहुर्मुक्तिस्तमालोकते,
यः संघं गुणसंघकेलिसदनं श्रेयोरुचिः सेवते ॥२॥" [९२]

इत्यादिपूर्वाचार्यवाक्यैश्च श्रीसंघः श्रीतीर्थंकराणामपि मान्यः किमस्मादृशामिति स्वचेतसि परिभाव्य, प्रत्यासन्नभाविनीं चतुर्मासीमप्यवगणय्य, श्रीसंघगाढतराग्रहं च ज्ञात्वा, श्रीपूज्याश्चक्रीन्द्रसमानाः प्रधानसाधुमहद्धासंसेव्यमानचरणारविन्दाः, श्रीजयर्द्धिमहत्तराप्रमुख–पुण्यसुन्दरीगणिनीप्रमुखसाध्व्येकोनविंशतिपरिवृताः, साधुश्रीरयपतिसुश्रावकं श्रीचतुर्विधसंघसैन्ये समग्रसैन्याधिपसेनानीसमानं विधाय, साधुराजसिंहं च संघसैन्यपाश्चात्यपद्प्राग्भारनिर्वाहणपदे निधाय, सा०महणसिंह–सा०जगणपाल–सा०भोजा–सा०काला–ठ०फेरु–ठ०देपाल–श्रे०गोपाल–साधुराजतेजपाल–साधुराजहरिपाल–मा०मोहण–मा०गोसलप्रमुखानेकमहर्द्धिकसुश्रावकमहारथान् सज्जयित्वा शकटपञ्चशती अश्व[ ]शतीसंख्यसुभटपदातिवर्गप्रमाणेन श्रीसंघसैन्येन सह वाद्यमानेषु निःस्वानप्रायेषु अश्वाधिरूढेषु ढोल्लेषु, गुर्वाडम्बरेण कलिकालभूधरनिर्जयार्थं स्वकार्यसिद्ध्यर्थं च ज्येष्ठशुक्लषष्ठीदिने शुभमुहूर्ते स्वगुरुश्रीजिनचन्द्रसूरिराजं ध्यायन्तः प्रचलिताः ।

तदनन्तरम्, प्रतिदिनं संजायमानेष्वनारतसत्रेषु, प्रतिपदं दीयमानेषु रासकेषु, श्रीसंघसैन्योत्थितरजःपरम्परासमाच्छादिताम्बरीशाङ्गणेषु, भविष्यत्क्षुल्लकानां दीयमानेषु प्रतिदिनं महर्द्ध्या पुष्पांकदानेषु, सकलनगरग्रामाधिपमलिक–हिन्दुकादिसमग्रलोकसंसेव्यमानश्रीसंघसैन्याधिपे च श्रीशङ्खेश्वरे श्रीपार्श्वनाथतीर्थराजं नमस्कृत्य, श्रीमहापूजामहाध्वजारोपादिना प्रभावनां निधाय, क्रमक्रमेण दण्डकारण्यप्रायं वालाकदेशमतिक्रम्य, समग्रम्लेच्छाधिपकृतसाहाय्याः श्रीपूज्या निराबाधवृत्त्या सर्वसंघसमन्विताः समग्राधिष्ठायककृतसान्निध्याः श्रीशत्रुञ्जयतलहट्टिकायां प्राप्ताः ।

तत्र च श्रीपार्श्वनाथदेवयात्रां निधाय अषाढवदिषष्ठीदिने सकलतीर्थावलीप्रधानं सर्वातिशयनिधानं शत्रुञ्जयशैलालङ्कारायमाणं श्रीयुगादिदेवतीर्थराजं सकलसंघपरिवृताः श्रीमत्पूज्या नव्यालङ्कारसारनूतनकृतस्तुतिस्तोत्रनमस्कारनिर्माणपूर्वकं नमस्कृतवन्तः । साधुश्रीरयपतिसुश्रावकेण पुत्रकलत्रपरिवृतेन प्रत्येकं प्रत्येकं नवाङ्गेषु हेमटङ्कैः प्रथमा पूजा कृता कारिता च; अन्यैर्महर्द्धिकसुश्रावकैश्च रूप्यटङ्कादिना पूजा कृता । तस्मिन्नेव च दिने श्रीयुगादिदेवपुरतो देवभद्र–यशोभद्रक्षुल्लकयोः सविस्तरतरो दीक्षामहामहोत्सवः कृतः ।

तदनन्तरम्, श्रीजिनशासनप्रभावनाकरणप्रगुणेन श्रीदेवगुर्वाज्ञाप्रतिपालनसमुद्यतेन साधुश्रीरयपतिमहासंघपाश्चात्यपदप्राग्भारनिर्वाहणेनानारताहर्निशदानोपार्जितपुण्ययशःप्राग्भारेण चतुर्विधसुधर्मविशयानुकृतश्रीश्रेणिकस-

हाराजाधिराजराज्यभारनिर्वाहणप्रवीणश्रीअभयकुमारेण श्रीसुराष्ट्रमहीमण्डलभूपालश्रीमहीपालदेवप्रतिशरीरकल्पसमग्रसंघकार्यनिर्वाहणप्रवीणप्रभावकसाधुराजमोखदेवानुजपरिवृतेन श्रीश्रीमालकुलोत्तंससाधुछज्जलकुलप्रदीपेन साधुराजसिंहसुश्रावकेण, वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीतूर्येषु, दीयमानेषु स्वर्णकटकवस्त्राश्वदानेषु, ध्रियमाणेषु मेघाडम्बरछत्रेषु, ढाल्यमानेषु चामरेषु, गीयमानेषु गीतेषु, संजायमानेषु श्रीसाधर्मिकवात्सल्येषु, निष्पाद्यमानेष्ववारितसत्रेषु, संपद्यमानासु सविस्तरतरासु श्रीसंघपूजासु, साधुश्रीरयपतिप्रमुखमहासंघमेलापकेन आषाढाद्यसप्तम्यां जलयात्रानिर्माणपूर्वकमष्टम्यां श्रीयुगादिदेवमूलचैत्ये स्वकारितश्रीनेमिनाथबिम्बप्रमुखानेकबिम्बानां स्वभाण्डागारयोग्यश्रीसमवसरणस्य श्रीजिनपतिसूरि-श्रीजिनेश्वरसूरिप्रमुखसुगुरुमूर्त्तीनां च अनेकमन्त्रोपार्जितपापविध्वंसकः स्वशिष्यलब्धपुरञ्जितयुगप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रसूरिभिः स्वर्गात् समागतैः कैश्चिच्छ्राद्धोच्चैरवलोक्यमानैर्गवेष्यमाणः प्रतिष्ठामहामहोत्सवः समग्रलब्धिनिधानजङ्गमयुगप्रधानश्रीजिनकुशलसूरिहस्तकमलेन कारितः। तस्मिन्नेव च दिने साधुराजजाल्हणकुलप्रदीपायमानेन सर्वधर्मकृत्याराधनानुकृतश्रीवर्धमानपरमसुश्रावकाऽऽनन्द-कामदेवादिश्रावकवर्गेण संप्रीणिताशेषयाचकगणेन साधुराजतेजपालसुश्रावकेण स्वानुजसा० रुदपालसहितेन श्रीपत्तनप्रतिष्ठापितश्रीयुगादिदेवमूलनायकबिम्बस्य श्रीसमुदायसहितेन कारिते नूतननिष्पन्ने प्रासादे समग्रवैज्ञानिकवर्गकनकहस्तशृङ्खलिका-कम्बिका-पट्टांशुकादिवस्त्रसन्मानदानपूर्वकं श्रीसम्प्रतिमहाराजाधिराजसमानसाधुश्रीरयपतिप्रमुखनानास्थानवास्तव्यसर्वश्रावकवितानमेलापकेन स्थापनाप्रासादप्रतिष्ठा च श्रीवज्रस्वाम्यनुकारिश्रीपूज्यहस्तकमलेन कारिता। नवम्यां सविस्तरतरः श्रीमालारोपण-श्रीसम्यक्त्वारोपण-श्रीपरिग्रहपरिमाण-सामायिकारोपनन्दिमहोत्सवः श्रीयुगादिदेवमूलचैत्य एव श्रीपूज्यैर्विहितः। तस्मिन् दिने सुखकीर्तिगणेर्वाचनाचार्यपदं दत्तम्, सहस्रसंख्यश्रावकश्राविकाभिर्नन्द्यारोहणं च कृतम्। तस्मिन्नेव च दिने नूतननिष्पन्ने प्रासादे सविस्तरतरो ध्वजारोपमहोत्सवः संजातः। एवं दिनदशकं यावच्छ्रीशत्रुञ्जयशैलोपरि सदावारितसत्रनिर्माणपूर्वकं मूलचैत्य-स्वचैत्ययोः श्रीमहापूजाकरणपट्टांशुकादिनानावस्त्रसत्कमहाध्वजादानस्वर्णाश्ववस्त्रदानसम्पूरिताशेषयाचकमन्तानेन्द्रपदादिविधानादयो महामहोत्सवाः श्रीश्रीमालकुलोत्तंससाधुराजहरुकुलप्रासादकुम्भायमानश्रीयोगिनीपुराख्याहर्निशनानाविधवस्तुदानाधःकृतकल्पवृक्षसन्तानसाधुश्रीरयपति-साधुमहणसिंह-साधुराजतेजपाल-साधुराजराजसिंहप्रमुखसकलसंघेनाहमहमिकया चक्रिरे। तस्मिन् महोत्सवे श्रीउच्चानगरीवास्तव्यरोहंडहेमलपुत्ररत्नेन सा० कडुयासुश्रावकेण भ्रातृपुत्रश्रीजिनशासनप्रभावकसा० हरिपालसहितेन द्विवल्लद्रम्मशत २६७४ श्रीइन्द्रपदं गृहीतम्, मन्त्रिपदं च सा० धीणापुत्ररत्नेन साधुगोसलेन द्रम्मशतपट्केन गृहीतम्। अन्यान्यपि पदानीन्द्रपरिवारयोग्यानि प्रभृतश्रावकश्राविकाभिर्गृहीतानि। सर्वसंख्यया श्रीयुगादिदेवभाण्डागारे प्रतिष्ठामालोद्घटन-श्रीइन्द्रपदमहोत्सवकलशमण्डनादिना द्रम्मसहस्र ५० समुत्पन्नाः।

९६. तदनन्तरम्, श्रीपूज्याः सर्वसंघपरिवृताः श्रीयुगादिदेवमुत्कलनं विधाय तलहट्टिकायां संघमध्ये समायाताः। ततः स्थानात् म्लेच्छसैन्योपद्रवात् सर्वशून्यायामज्ञातमार्गायामपि सुराष्ट्रायाम्, संप्राप्तायामपि वर्षायाम्, श्रीमेघकुमारदेवकृतमाहात्म्याः श्रीसंघसैन्यमुकुटकल्पप्रचण्डशासनसाधुश्रीरयपतिनिःशङ्कनासंख्यम्लेच्छानुगम्यमानमार्गाः श्रीपूज्यधर्मचक्रवर्त्तपथचतुर्विधसंघसैन्यपरिवृताः पूर्वोक्तरीत्या श्रीपत्तनादिमहानगरराजमार्गवत् सुखेन, अश्वानेकशतादिमहामेलापकेन सुराष्ट्रालङ्कार-राह्नारगढनायकादिमसमग्रराजलोकेन नगरलोकेन च संमुखागमनदत्तबहुमाना रञ्जितराजलोकप्रधानाः श्रीउज्जयन्तमहातीर्थतलहट्टिकायामावासिताः। तत्र च राह्नारगढमध्ये सकलस्वपक्षपरपक्ष-जनचेतश्चमत्कारकारिणीं चैत्यप्रपाटीं संघेन सह विधाय अषाढचतुर्मासकदिने आबालब्रह्मचारिणं राज्य-राजीमतीपरिहारकारिणं श्रीउज्जयन्ताचलमहातीर्थालङ्कारं श्रीनेमिकुमारं नूतनकृतस्तुति-स्तोत्रदानपूर्वकं नमश्चक्रुः। संघाधिपसाधुश्रीरयपतिप्रमुखसुश्रावकैश्च श्रीशत्रुञ्जयवत् सुवर्णटंकादिना पूजा कृता। श्रीशत्रुञ्जयवत् (?) तस्मिन्नेव दिने श्रीमाहल्लउरनगर-

वास्तव्योदारचरित्रप्रभावकनानाभिग्रहग्रहणपूर्वकं वन्दनार्थं समागत सा० जगसिंहपुत्ररत्नसाधुनयतासुश्रावक-खङ्गार-गढवास्तव्यमहर्द्धिकरीहडवंशभूषण-री० रत्नपुत्ररत्नसा० मोखादिसुश्रावकश्राविकाणां श्रीसम्यक्त्वारोप-सामायिकारोप-परिग्रहपरिमाणादिनन्दिमहामहोत्सवः कृतः। साधुश्रीरयपतिप्रमुखसर्वसंघसुश्रावकैः शत्रुञ्जयमहातीर्थेऽष्टदिनचतुष्टयं सर्वादरेण महापूजा महाध्वजारोपादिमहोत्सवा निर्मिताः। परमिन्द्रपदं च श्रीहम्मीरपत्तनवास्तव्येन श्रीजिनशासन-प्रभावकेण सा० धीणापुत्ररत्नेन सा० गोसलसुश्रावकेण द्विचल्लकद्रम्मशत २४७४ गृहीतम्। मन्त्रिपदं च प्रभावक-साधुकालासुश्रावकपुत्ररत्नेन सा० वीजासुश्रावकेण द्रम्मशताष्टकेन गृहीतम्। शेषसुश्रावकैरन्यानि पदानि गृहीतानि। सर्वसंख्यया श्रीनेमिनाथदेवभाण्डागारे द्विचल्लकद्रम्मसहस्र ४० उत्पन्नाः।

तदनन्तरम्, श्रीनेमीश्वरमुत्कलनं विधाय सर्वसंघसमन्विताः श्रीपूज्यराजाधिराजास्तलहट्टिकायां संघमध्ये सम्प्राप्ताः। तत्र च नानाविधोत्सवप्रसरनिर्मापणेन प्रबलप्रचण्डकलिकालभूपालोन्मूलनलब्धप्रकर्षान् स्वस्वामिनो वीक्ष्य निजदानतिरस्कृतचिन्तामणि-कामधेनु कल्पद्रुमचयेन समुपार्जितयशःपुञ्जेन साधुश्रीरयपतिसुश्रावकशेखरेण सा०महणसिंहादिपुत्रपरिवृतेन दिनत्रयं यावदहर्निशं स्वर्णशृङ्खलिकाकटकावपट्टांशुकश्रीकरीचीनांशुकादिवस्तु-कौशल दक्षिणादानेन स्वस्वामिजयसंस्तवनार्थं समग्रसुराष्ट्रादेशमध्यवर्त्यमेययाचकवर्गो यथेच्छं पोषितः। अन्यैरपि साधुराजराजसिंह-साधुराजतेजपाल-सा० हरिपालादिश्रावकैरवारितसत्रनिर्मापणादिना हर्षप्रकर्षाकुलः कृतः।

९७. तदनन्तरम्, ततः स्थानात् प्रस्थाय सम्पादितस्वार्थसम्पत्तयः साहाय्यीभूतयुगप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रसूरि श्री-अम्बिकाप्रमुखनानादेवदेवतानलयो लक्षण-तर्क-साहित्यालङ्कार-नाटक-ज्योतिष्क-मन्त्र-तन्त्र-छन्दोविद्यासंस्फुरता तुरगपद-कोष्ठकपूरण-नानालङ्कार-काव्यकरण-चिन्तितादिनानासमस्यापूरणादिना रञ्जिताशेषकोविदचक्रचूडामणयः अस्खलितैश्वर्यारोपणोपार्जितचन्द्रचन्द्रज्योत्स्नासमानकीर्त्तयः स्वावदातोद्योतितस्वचन्द्रकुलोद्धरानेकपूर्वसूरयो युग-प्रधानश्रीजिनकुशलसूरिसुगुरुचक्रवर्त्तयः श्रीतीर्थयात्राकरणसफलीकृतात्मजन्मानेकापायसमुपार्जितामेयस्वापतेये-नाहर्निशं श्रीजिनशासनापरशासनोद्भवमहापुरुषसमूहैर्वन्दितर्गवत्संस्तूयमानेन नानाविधाभिग्रहप्रविपालनपवित्रीकृ-ताजन्मदेहेन मनोवाञ्छितार्थसम्प्राप्तिसमुद्भूतमहाहर्षनिकसितावनेन साधुश्रीरयपतिप्रमुखसकलनिधिमार्गसंघेन सह निराबाधवृत्त्या वर्षर्तुद्भाविविराधनानिवृत्त्या शून्यमपि सुराष्ट्रादेशं राजमार्गवदतिलङ्घ्य श्रीसंघनिर्मितासु स्थाने स्थाने संजायमानासु प्रभावनासु, सुखं सुखेन श्रीपत्तनोपवने श्रावणशुक्लत्रयोदश्यां समवसृत्य, दिनपञ्चदशकं च यावच्च-तुर्दिग्भ्यः समागतश्रीचतुर्विधसंघस्य महत्समाधानमुत्पादनार्थं श्रीसंघमध्येऽवस्थिताः।

तदनन्तरम्, भाद्रपदवद्येकादश्यां चिन्तितार्थसम्पादनसमर्थेन साधुश्रीरयपतिसुश्रावकेण सा०महणसिंहादि-पुत्रपरिवृतेन साधुतेजपाल-साधुराजसिंहाभ्यां चाहमहमिकया देशान्तरीयसंघसमुदाय-श्रीपत्तनीयसमग्रस्वपक्षपरपक्ष-महाजनलोकमहामेलापकेन दीयमानेषु दानेषु, गीयमानेषु गीतेषु, नृत्यमानेषु खेलखृन्देषु, वाद्यमानेषु द्वादशविध-नान्दीतूर्येषु, अश्वाधिरूढनानाठोल्लवादनविस्मापिताखिललोकेषु, सकलराजलोकनगरलोकचेतश्चमत्कारकारी समस्तदुर्ज-नजनहृदयोद्वेगकारी स्वजनजनमनोऽम्भोजवनविकासनसूर्यानुकारी वचनातिगः श्रीपूज्यराजानां श्रीरामचन्द्र[वत्]प्र-वेशकमहामहोत्सवः श्रीपत्तने संजातः।

९८. तदनन्तरम्, साधुश्रीरयपतिः सुश्रावको द्वितीयवारं श्रीपत्तनीययाचकवर्ग संतोष्य समग्रसंघपरिवृतः श्री-पूज्यराजपादान् मुत्कलाप्य श्रीपत्तनात् प्रस्थाय, आगमनरीत्यैव स्थाने स्थाने प्रभावना कुर्वाणो युगप्रवरागमश्रीजिन-चन्द्रसूरिनिर्वाणपवित्रिते श्रीकोशवाणके समग्रसंघपरिवृतः प्राप्तः। तत्र च श्रीजिनचन्द्रसूरिस्तूपे महाध्वजारोप-महा-पूजास्नानविलेपननिर्मापणावारितसत्रकरणतुरगकनकादिदानादिना प्रोत्सर्पणां विधाय, पुनर्द्वितीयवार श्रीफलवर्द्धि-

कायां यात्रां च कृत्वा, वस्त्रादिदानसन्मानपूर्वकं देशान्तरीयसंघान् स्वे स्वे स्थाने प्रविष्टान् कृत्वा, यथागमनमार्गेण श्रीयोगीनीपुरे प्रभूतम्लेच्छसंकुले सुपुत्ररत्नसाधुराजधर्मसिंहकारितनिर्गमनमहोत्सववत्समधिकतरप्रवेशकमहामहोत्सवेन श्रीदेवालयसमन्वितः साधुश्रीरयपतिसुश्रावकः प्रविष्टः कार्तिकवदिचतुर्थ्याम्।

९९. तदनन्तरम्, पुनः सं० १३८१ वैशाखवदिपञ्चम्यां श्रीपत्तने श्रीशान्तिनाथविधिचैत्ये श्रीयोगिनीपुरसमागतश्रीश्रीमालकुलोत्तंस-सा० रुद्रपाल-सा० नींबा-श्रीजावालिपुरागतमन्त्रिभोजराजपुत्र मं० सलखणसिंह-रत्नाचार्यलख(क्ष)ण-श्रीसत्यपुरागत मं० मलयसिंह-श्रीभीमपल्लीसमागतसाधुराजवीरदेवप्रमुखसमग्रसमुदाय-श्रीस्तम्भतीर्थागतव्य० छाडा-श्रीघोघावेलाकूलागतसा० देपाल-मं० कुमर-सा० खीमडप्रमुखानेकसुश्रावकसमुदायमहामेलापकेन दिनपञ्चदशकादारभ्य संजायमानेषु महाप्रेक्षणीयेषु, वितीर्यमाणेष्वमेयेषु स्वस्वापतेयेषु, दीयमानेषु तालरासेषु, सम्पद्यमानासु सविस्तरतरासु श्रीसंघपूजासु, क्रियमाणेषु श्रीसाधर्मिकवात्सल्यावारितसत्रेषु, भविष्यत्क्षुल्लक-क्षुल्लिकानांसकललोकाश्चर्योत्पादनपूर्वं दीयमानेषु सविस्तरतरेषु पुष्पाङ्कदानेषु, साधुजाह्लणपुत्ररत्नाभ्यां समस्तोत्सवसम्पादनोपार्जितातुल्यपुण्यकदम्बकाभ्यां साधुराजतेजपाल-सा० रुद्रपालसुश्रावकाभ्यां श्रीश्रीमालकुलोत्तंस-सा० आना-सा० राजसिंह-भण० लूणासा० क्षेमसिंह-सा० देवराज-भण० पद्म-मन्नाप्रमुखसमस्तश्रीपत्तनीयसमुदायपरिवृताभ्यां चतुर्थ्यां सविस्तरतमजलयात्राधिवासनानिर्माणपूर्वकं सकलजनमनश्चेतश्चमत्कारकारी भवभवोपार्जितपापहारी समस्तमहाजनलोकप्रत्यासन्नानेकग्रामवास्तव्यलोकमस्तकावधूननकारी प्रतिष्ठामहामहोत्सवः कारितः। तस्मिन् महोत्सवे समग्रलब्धधनुकृतश्रीवज्रस्वामिप्रमुखानेकयुगप्रधानैः स्वगुरुचक्रवर्तिश्रीजिनचन्द्रसूरिकृताहर्निशसाहाय्यैः श्रीजिनकुशलसूरिभिः श्रीजावालिपुरयोग्यश्रीमहावीरदेवबिम्ब-श्रीदेवराजपुरयोग्यश्रीयुगादिदेवबिम्ब-श्रीशत्रुञ्जयस्थितबृहद्वसहीप्रासादजीर्णोद्धारार्थ-सा० छज्जलपुत्ररत्नसाधुराजराजसिंह-साधुमोखदेवकारितश्रीश्रेयांसमुखानेकबिम्ब-श्रीशत्रुञ्जयस्थितस्वप्रासादमध्यस्थभण० लूणाकारिताष्टापदयोग्यचतुर्विंशतिबिम्बप्रमुखशिलमयबिम्बानां सार्धशतद्वयं प्रतिष्ठितम्, पित्तलामयानां संख्यैव नास्ति। श्रीउच्चापुरीयोग्यश्रीजिनदत्तसूरि-जावालिपुर-श्रीपत्तनयोग्यश्रीजिनप्रबोधसूरि-श्रीदेवराजपुरयोग्य श्रीजिनचन्द्रसूरिमूर्तीनां श्रीअम्बिकाद्यधिष्ठायिकानां प्रतिष्ठा कृता। स्वभाण्डागारयोग्यं प्रधानं समवसरणं च प्रतिष्ठितम्। षष्ठ्यां च व्रतग्रहणोत्थापना-मालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवोऽतिशयेन सविस्तरतरः कृतः। तस्मिन् महोत्सवे देवभद्र-यशोभद्रक्षुल्लकयोरुत्थापना कृता। सुमतिसार-उदयसार-जयसारक्षुल्लकानां धर्मसुन्दरी-चारित्रसुन्दरीक्षुल्लिकयोश्च दीक्षा दत्ता। जयधर्मगणेः श्रीउपाध्यायपदं दत्तम्-तन्नामधेयं च श्रीजयधर्मोपाध्याय इति कृतम्। अनेकसाध्वीश्राविकाभिर्माला गृहीता। प्रभूतश्रावकश्राविकाभिः श्रीसम्यक्त्वारोप-सामायिकारोपश्रीश्रावकद्वादशव्रतारोपश्च कृतः।

तदनन्तरम्, श्रीतीर्थयात्राकर्तुकामसाधुराजश्रीवीरदेवप्रमुखश्रीभीमपल्लीसमुदायाभ्यर्थनया श्रीपूज्याः श्रीभीमपल्ल्यां साधुवीरदेवकारितसविस्तरतरप्रवेशकपूर्वकं श्रीमहावीरदेवं वैशाखवदित्रयोदश्यां नमश्चक्रुः।

१००. तदनन्तरम्, तस्मिन्नेव संवत्सरे श्रीजिनशासनप्रभावकेण सकलस्वपक्ष-परपक्षासंख्यलोकमवांर्धसाधनोद्यतमनस्केन सकलभीमपल्लीसमुदायमुकुटकल्पेन निजावदातसंस्मारितस्वपूर्वजसाधुराजखींवड-सा० यशोधवल-साधुराजअभयचन्द्र-सा० सादल-साधु० धणपाल-सा० सामलसुश्रावकप्रमुखस्वपूर्वजकदम्बकेनोदारचरित्रेण दुष्करतगाभिग्रहावलीप्रतिपालनप्रवीणेन साधुराजवीरदेवसुश्रावकेण सा० मालदेव-सा० कुलमसिंहस्वभ्रातृपरिवृतेन प्रतापाक्रान्तभूतलपातसाहिश्रीग्यासदीनसुरत्राणसत्कफुरमाणं निष्कास्य, सर्वदेशेषु कुङ्कुमपत्रिकाप्रदानपूर्वकं नानास्थानसमुदायान् मेलयित्वा, सकलातिशयनिधाना निजावदातसंस्मारितश्रीगौतमस्वामि-श्रीसुधर्मस्वामि-श्रीजम्बूस्वामि-श्रीस्थूलभद्र-

श्रीआर्यमहागिरि–श्रीवज्रस्वामि–श्रीजिनदत्तसूरिप्रमुखानेकयुगप्रधाना युगप्रवरागमश्रीजिनकुशलसूरयः श्रीमहातीर्थ-यात्रोपरि गाढतरनिबन्धेन सर्वस्थानसंघपरिवृतेन सा० वीरदेवश्रावकेण विज्ञप्ताः।

तदनन्तरम्, सूरिचक्रवर्तियुगप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रसूरिशिष्यचूडामणिभिः श्रीपूज्यपादैर्ज्ञानध्यानबलेन सम्यक् परिभाव्य ज्येष्ठाद्यपञ्चम्यां साधुराजवीरदेवश्रावकं सकलश्रीविधिसंघसैन्यमुख्यत्वेन श्रीजिनशासनप्रभावकं सकल-कार्यनिर्वाहणसमर्थं साहुराजदेवपुत्ररत्नं साहुझाञ्झासुश्रावकं साहुपूर्णपाल–साहुसूण्टापरिवृतं श्रीसंघपाश्चात्य-प्राग्भारनिर्वाहणपदे संन्यस्य, पुण्यकीर्तिगणि–वा० सुखकीर्तिगणिप्रमुखसाधुद्वादशक–प्र० पुण्यसुन्दरीप्रमुखसाध्वीवृ-न्दपरिवृताः साधुराजवीरदेवकारितकृतयुगावतारमहारथतुल्यश्रीदेवालये चतुर्विंशतिपट्टकं महदुत्सर्पणापूर्वकं संस्थाप्य, शकट [शत] प्रयानेकाश्ववृन्दोष्ट्रवृन्दनानाज्ञातिसम्मिलिताभेयपदातिवर्गसम्मिलितसर्वस्थानवास्तव्यश्रीविधिसंघेन सार्धं सविस्तरतरश्रीदेवालयनिष्क्रमणमहामहोत्सवपूर्वकं श्रीभीमपल्लीतः श्रीपूज्यपादाः श्रीतीर्थनमस्करणार्थं प्रत्यास-न्नायामपि चातुर्मास्यां गाढतमसर्वसंघोपरोधेन प्रस्थिताः।

तदनन्तरम्, स्थाने स्थाने संजायमानेष्ववारितसत्रेषु, वाद्यमानेष्वश्वाधिरूढेषु ढोल्लेषु, निजशब्दबधिरीकृताम्ब-राशासु भेरीशब्देषु, दीयमानेषु तालारासकेषु, श्रीकरीड(?)मालेन विराजमानः सर्वोऽपि संघः, अन्तरागतश्रीवायड-नगरालङ्कारश्रीमहावीरदेव–श्रीशेरीषकालङ्कारश्रीपार्श्वनाथादिनानास्थानतीर्थेषु दिनद्वयं श्रीमहाध्वजारोपपूजाविशेषा-वारितसत्रनिर्माणपूर्वकं यात्रां विधाय श्रीशिरखिजे महानगरे समग्रलोकाश्चर्यकारकजङ्गमप्रासादकल्पश्रीदेवालयप्र-वेशकमहामहोत्सवपूर्वं प्राप्ताः। तत्प्रत्यासन्नश्रीआशापल्लीनगरीवास्तव्यव्यवहारिकमहणपाल–व्यव०मण्डलिक–सा० वयजलप्रमुखश्रीविधिसमुदायाभ्यर्थनया सर्वसंघसुश्रावकपरिवृतैः श्रीपूज्यपादैः सकलजनाश्चर्यकारकश्रीआशापल्लीसमु-दायकारितप्रवेशकमहामहोत्सवपूर्वकं श्रीआशापल्ल्यां श्रीयुगादिदेवतीर्थं नमस्कृत्य, सविस्तरतो मालारोपणमहामहो-त्सवः कृतः।

तदनन्तरम्, पुनः सर्वसुश्रावकलोकपरिवृताः श्रीपूज्याः श्रीसंघमध्ये समायाताः। तत्पश्चात्, ततः स्थानात् सर्वोऽपि संघो विशेषतो गुरुतराडम्बरेण श्रीस्तम्भनकश्रीपार्श्वनाथयात्राकरणार्थं सकलगूर्जरत्रालङ्कारभूतश्रीस्तम्भ-तीर्थोपरि प्रचलितः सन् मार्गागतसर्वनगरग्रामेषु प्रधानप्रासादसमानश्रीदेवालयस्य प्रवेशकमहोत्सवं कुर्वाणः श्रीस्तम्भतीर्थे प्राप्तः।

१०१. तत्र च निरुपमातिशयशालिश्रीआर्यसुहस्तिसूरि–युगप्रवरागमानुकारिश्रीजिनकुशलसूरिसुगुरूपदेशेन सर्वप्रकारेण श्रीसम्प्रतिमहाराजाधिराजसमानेन सकलबुद्धिनिधानेन साधुराजवीरदेवसुश्रावकेण सकलश्रीस्तम्भतीर्थ-वास्तव्योत्तममध्यमजघन्यलोकाबालगोपालमहामेलापकेन महाम्लेच्छानां पश्यतामपि ढाल्यमानेषु चामरेषु, ध्रिय-माणासु श्रीकरीषु, वाद्यमानासु भेरीपरम्परासु, अश्वाधिरूढढोल्लादिवादित्रनिनादबधिरीकृताम्बराशाचक्रेषु, नृत्यमा-नेषु पदे पदे खेलकवृन्देषु, दीयमानेष्वविधवसुधवाभिर्नारीभी रासकेषु, गीयमानेषु श्रीतीर्थङ्करदेवश्रीयुगप्रधानश्री-संघपुरुषकृतावदातसंस्तवकेषु गीतेषु, पापठ्यमानेषु वन्दिवृन्देषु, दीयमानेष्वमेयेषु रसापतेयेषु, किं बहुना वचना-तिगेषु नानाविधेषु नाटकाद्युत्सवेषु संजायमानेषु, समग्रनगरहट्टशोभातलिकातोरणनिर्माणपूर्वकं हिन्दुगराज्यालङ्कार-मन्त्रीश्वरवस्तुपालकारितयुगप्रवरागमश्रीजिनेश्वरसूरिप्रवेशकमहोत्सववत्महाम्लेच्छराज्यप्रधानालङ्कारभूतसाधुराजजेस-लकारितसमग्रातिशयनिधानश्रीजिनचन्द्रसूरियुगप्रधानमहाप्रवेशकाधिकजङ्गमयुगप्रधानानेकलब्धिनिधानश्रीजिनकुश-लसूरीणां प्रवेशकमहामहोत्सवो हिन्दुकवारकवत्, श्रीरथयात्रानुकारिप्रासादकल्पश्रीदेवालययात्रानिर्माणपूर्वकं नवा-ङ्गवृत्तिकारश्रीमदभयदेवसूरिप्रकटितश्रीस्तम्भनकालङ्कारश्रीपार्श्वनाथविधिचैत्यालयसंस्थितश्रीअजितस्वामितीर्थीयनूत–

नकृतनवनवालङ्कारस्तुतिस्तोत्रभणनपूर्वकं श्रीपूज्यैः सर्वचतुर्विधसंघपरिवृतैः सकलभवोपार्जितपापकश्मलप्रक्षालनप-वित्रा यात्रा कृता।

तदनन्तरम्, दिनाष्टकं यावत् साधुराजवीरदेवप्रमुखदेशान्तरीयमहर्द्धिकसुश्रावकैः श्रीस्तम्भतीर्थवास्तव्यश्री-विधिसमुदायेन च श्रीमहाध्वजारोपश्रीमहापूजा–ऽवारितसत्र–श्रीसंघवात्सल्य–श्रीसंघपूजा–श्रीइन्द्रमहोत्सवामेयस्वा-पतेयोत्सर्पणानिर्माणपूर्वकं सकलस्वपक्षलोकानन्ददायकाः सर्वविपक्षलोकहृदयकीलानुकारका महामहोत्सवाश्च चक्रिरे। इन्द्रपदं च सा०कडुयासुश्रावकपुत्ररत्नेन दो०खांभराजसुश्रावकानुजेन दो०सामलसुश्रावकेण द्विव० द्र० शत १२ गृहीतम्। श्रीमन्त्रिपदादिपदानि चान्यैः सुश्रावकैर्गृहीतानि।

१०२. तदनन्तरम्, श्रीस्तम्भतीर्थात् प्रस्थाय सर्वोऽपि संघः संजायमानेषु राजविधुरेष्वपि सर्वशून्यभूतेषु देशेषु, समप्रोत्साहपूर्वकं श्रीशत्रुञ्जयोपरि प्रचलितः सन्, अन्तरागतश्रीधान्धूकामहानगरे संप्राप्तः। तत्र सकलनगरनायकेन मन्त्रिदलकुलोत्तंसेन ठ०उदयकर्णसुश्रावकेण श्रीसंघवात्सल्यश्रीसंघपूजानिर्माणपूर्वकं महती प्रभावना कृता। ततः पुनः प्रस्थाय, क्रमक्रमेण श्रीशत्रुञ्जयतलहट्टिकायां सम्प्राप्तः। तदनन्तरं श्रीपूज्यपादैः सर्वसंघपरिवृतैः श्रीशत्रुञ्जयशैलोपर्य-ध्यारोहं विधाय भवभयवल्लीप्रोन्मूलनासिलतासमानां द्वितीयवारं श्रीशत्रुञ्जयालङ्कारश्रीयुगादिदेवमहातीर्थयात्रां नाना-मङ्गिबन्धुरसर्वालङ्कारसुन्दरनूतनकृतस्तुतिस्तोत्रप्रदानपूर्वकं कृत्वा, तदनन्तरं दिनदशकं यावत् सकलसंघमुख्यभूतसा-धुराजवीरदेवश्रीसंघपाश्चात्यपदप्राग्भारनिर्वाहक–सा०साहुतेजपाल–सा०नेमिचन्द्र–योगिनीपुरवास्तव्यश्रीश्रीमालसा०रुद्पाल–साहुनींबदेव–मन्त्रिदलकुलोत्तंसठ०जवनपाल–सा०लखमा–श्रीजावालिपुरवास्तव्यसा०पूर्णचन्द्र–सा०महजा–गुडहावास्तव्यसा०वाधूप्रमुखनानास्थानकवास्तव्यमहामहर्द्धिकसुश्रावकैः श्रीमहाध्वजारोपमहापूजावारितसत्र–श्रीसाध-र्मिकवात्सल्य–श्रीसंघपूजा–श्रीइन्द्रपदमहामहोत्सवनिर्माणामेयस्वस्वापतेयैश्च पट्टांशुकादिनानावस्त्रस्वर्णकटकादिवित-रणपूर्वकं श्रीशत्रुञ्जयोपरि श्रीजिनशासनप्रोत्सर्पिका प्रभावना कृता। इन्द्रपदं च श्रीजिनशासनप्रभावनाकरणप्रगुणेन साहुलोहटपुत्ररत्नेन साधुलखमासुश्रावकेण द्विवाल्लि(ल्ल)कद्रम्मशतसप्तत्रिंशद्भिर्गृहीतम्। अमात्यपदं च श्रीयोगिनीपु-रवास्तव्यश्रीश्रीमालसा०सुरराजपुत्ररत्नेन सा०रुद्पालानुजेन साहुनींबदेवश्रावकेण द्विवल्लकद्रम्मद्वादशशतैर्गृहीतम्। शेषपदान्यन्यमहर्द्धिकसुश्रावकसुश्राविकाभिर्गृहीतानि। सर्वसंख्यया श्रीयुगादिदेवभाण्डागारे श्रीविधिसंघेन सहस्रप-ञ्चदशप्रमाणं स्वस्वापतेयं सफलीकृतम्। स्वकीयश्रीयुगादिदेवविधिचैत्ये नूतननिष्पन्नश्रीचतुर्विंशतिजिनालयदेवगृहि-कासु श्रीपूज्यराजैः सविस्तरतरः कलशध्वजारोपः कृतः।

तदनन्तरम्, सर्वसंघपरिवृताः श्रीपूज्याः श्रीयुगादिदेवमुत्कलनं विधाय तलहट्टिकायां समायाताः। ततः सर्वोऽपि संघ आगमनरीत्यैव गुर्वाडम्बरेण व्याघुट्य पुनः शेरीषके श्रीपार्श्वयात्रां विधाय, क्रमक्रमेण श्रीशङ्खेश्वरे समायातः। तत्र च दिनचतुष्टयमवारितसत्र–श्रीसाधर्मिकवात्सल्य–श्रीमहापूजा–महाध्वजारोपनिर्माणपूर्वकं श्रीपार्श्व-नाथप्रत्यासन्नपाडलालङ्कारश्रीनेमीश्वरयोर्नूतनकृतस्तुतिस्तोत्रप्रदानपूर्वकं सकलसंघपरिवृतैः श्रीपूज्यैर्यात्रा कृता। तद-नन्तरं सकलसंघपरिवृताः श्रीपूज्याः श्रीसत्यपुरीयकादम्यां प्रभावकसाधुराजवीरदेवकारितनगरविस्तारप्रवेशकनिर्माण-पूर्वकं श्रीभीमपल्ल्यां श्रीमहावीरदेवं नमश्चक्रुः। देशान्तरीयः सर्वः संघः साधुवीरसुश्रावकेण सन्मानदानपूर्वकं स्वस्थाने प्रहितः।

१०३. तदनन्तरम्, सं०१३८२ वर्षे वैशाखसुदि ५ साधुराजसामन्तपुत्रदीयमानश्रीसंघाधिपत्यगाम्भीर्यादिगुणमेरु-मन्दरपयोनिधिविस्तारगम्भीरमनःप्रमोदस्थापयमानश्रीजिनशासनप्रोत्सर्पणाकारणप्रधानश्रीशत्रुञ्जयादिमहातीर्थयात्राकर-णानुरागिपुण्यनिधानसाधुराजवीरदेवसुश्रावकाग्रेण दीक्षामालारोपणादिनन्दिमहामहोत्सवः श्रीभीमपल्लीय–श्री-

पत्तनीय-श्रीप्रह्लादनपुरीय-श्रीबीजापुरीय-श्रीआशापल्लीयादिनानास्थानसमुदायमहामेलापकेन वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीतूर्येषु, दीयमानेषु तालारासेषु, नृत्यमानासु विविधवसुधवासु नायिकासु, संजायमानासु श्रीसंघपूजासु, क्रियमाणेषु श्रीसाधर्मिकवात्सल्येषु, दीयमानेष्वमेयेषु खल्वापतेयेषु, सम्पद्यमानेष्वगारितसत्रेषु, दिनत्रयममारिघोषणानिर्माणपूर्वकं हिन्दुकवारकवत्सकलजनमनश्चेतश्चमत्कारकारी विपक्षहृदयकीलानुकारी सकलातिशयनिधानैः सर्वलब्धिप्रधानैर्निजावदातसंसारितपूर्वसूरिभिः श्रीजिनकुशलसूरिभिश्चक्रे। तस्मिन् महोत्सवे क्षुल्लकचतुष्टयं क्षुल्लिकाद्वयं कृतम्, तेषां नामानि विनयप्रभ-मतिप्रभ-हरिप्रभ-सोमप्रभक्षुल्लकाः, कमलश्री-ललितश्रीक्षुल्लिके इति। प्रभूतमाध्वीश्राविकाभिर्माला गृहीता। अनेकश्रावकश्राविकाभिः सम्यक्त्वारोप-सामायिकारोपः कृतः, परिग्रहपरिमाणं च गृहीतमिति।

तस्मिन्नेव संवत्सरे श्रीपूज्याः श्रीसत्यपुरीयसमुदायाभ्यर्थनया श्रीसत्यपुरे श्रीसमुदायकारितसविस्तरतरप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीमहावीरदेवतीर्थराजं नमश्चक्रुः। तत्र च मासमेकं श्रीसमुदायस्य समाधानं समुत्पाद्य, श्रीलाटहृदसमुदायाभ्यर्थनया श्रीलाटहृदे श्रीसमुदायविहितसविस्तरतरप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीमहावीरदेवाधिदेवं नमश्चक्रुः। तत्र च पक्षमेकं श्रीसमुदायस्य समाधानं समुत्पाद्य, श्रीवाग्भटमेरवीयसमुदायाभ्यर्थनया श्रीवाग्भटमेरौ श्रीसमुदायकारितसकलस्वपक्ष-परपक्षचेतश्चमत्कारकारिप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीयुगादिदेवतीर्थनाथं नमस्कृत्य चतुर्मासीं चक्रुः।

१०४. पश्चात्, तत्र च सं० १३८३ वर्षे पौषशुक्लपूर्णिमायां श्रीजिनशासनप्रभावनाश्रीसाधर्मिकवात्सल्यादिनानाधर्मकृत्यकरणोद्यतसाधुराजप्रतापसिंहप्रमुखश्रीवाग्भटमेरवीयसमुदायाभ्यर्थनया श्रीजेसलमेरवीय-श्रीलाटहृद-श्रीसत्यपुर-श्रीप्रह्लादनपुरीयादिनानास्थानवास्तव्यमहर्द्धिकसुश्रावकलोकमहामेलापकेन संजायमानेषु श्रीसाधर्मिकवात्सल्य-श्रीसंघपूजादिनानाविधेषु धर्मकृत्येषु, दीयमानेषु तालारासेषु, क्रियमाणेष्वगारितसत्रेषु, अमारिघोषणानिर्मापणपूर्वकं श्रीउत्थापना-मालारोपण-श्रीसम्यक्त्वारोपण-सामायिकारोप-परिग्रहपरिमाणादिनन्दिमहामहोत्सवं चक्रुः।

१०५. ततस्तस्मिन्नेव संवत्सरे श्रीजावालिपुरीयसमुदायगाढतराभ्यर्थनया सकलातिशयनिधानाः समग्रसूरिमालाप्रधानाः श्रीजिनकुशलसूरियुगप्रधानाः श्रीवाग्भटमेरुतः प्रस्थाय समग्रराज्यभारधुराधरणधौरेयस्वकीयपूर्वजनाहिन्नकोद्धरणकारित-श्रीशान्तिनाथमहाबिम्बसमन्वितोत्तुङ्गतोरणनिरुपमगुरुप्रासादशिखरे श्रीलवणखेटकनगरे युगप्रधानागमस्वकीयदीक्षागुरुश्रीजिनचन्द्रसूरिगुरुजन्ममहोत्सवसौनजन्मदीक्षाग्रहणमहामहोत्सवविलोकनपवित्रीभूताखिलस्वपक्ष-परपक्षजनताननाः श्रीशम्यानयने च श्रीशान्तिनाथदेवाधिदेवम्, श्रीसमुदायकारितसविस्तरप्रवेशकमहोत्सवा नमस्कृत्य कियन्ति दिनानि उभयस्थानसमुदाययोः समाधानं च समुत्पाद्य श्रीविविधधर्मकमलकाननप्ररोहसरोवरे श्रीजावालिपुरे नानोत्सवनिर्मापणसमुद्यत श्रीजावालिपुरीयमहासमुदायकारितसविस्तरप्रवेशकमहामहोत्सवाः स्वहस्तकमलप्रतिष्ठितं श्रीजावालिपुरीयसमुदायमनोवाञ्छितार्थपूरणाङ्गीकृतप्रतिज्ञं श्रीमहावीरदेवमहातीर्थराजचरणकल्पद्रुमं नमश्चक्रुः। तत्र च मन्त्रीश्वरकुलधरकुलप्रदीप सं० भोजराजपुत्ररत्न सं० सलखणसिंह-सा० चाहडपुत्ररत्नसा० झाञ्झणप्रमुखश्रीजावालिपुरीयविधिसमुदायाभ्यर्थनया श्रे० हरिपालपुत्ररत्नश्रे० गोपालप्रमुखश्रीउच्चापुरीय-देवराजपुरीयसमुदाय-सकलोत्सवधुराधरणधौरेयधवलसा० जाल्हणपुत्ररत्नसाधुराजजैत्रपाल-सा० स्थिरपालप्रमुखश्रीपत्तनीय-श्रीजेसलमेरवीय-श्रीशम्यानयनीय-श्रीश्रीमालीय-श्रीसत्यपुरीय-श्रीगुडहाप्रमुखनानानगरग्रामवास्तव्यासंख्यश्रीविधिसमुदायश्रावकलोकमहामेलापकेन दिनदशपञ्चदश यावत् संजायमानेषु सविस्तरक्षुल्लकानां सविस्तरेषु पुष्पाङ्कदानमहामहोत्सवेषु, दीयमानेषु तालारासेषु, अनेकमहानर्द्धिकसुश्रावकलोकैः स्वर्णजनकशालङ्कृतैः सुकलीक्रियमाणेष्वमेयेषु स्वस्वापतेयेषु, गीयमानेष्वविधवसुधवाभिर्नारीभिः स्थाने स्थाने गीतेषु, श्रीसंघपूजा-साधर्मिकवात्सल्यागारितसत्रामारिघोषणादिनानाप्रभावनासु प्रवर्तमानासु, सं० १३८३ वर्षे फाल्गुनवदिनवम्यामनिश्चयेन विषमदुःषमाकाले प्रवर्तमाने, सकलस्वपक्षपरपक्षजनमनस्सवदनलोकानां समक्षं स्वाप्यारोहं... दुर्वाणामपि, निरुपम-

सौवज्ञानध्यानबलातिशयादागामिकुशलं परिभावयद्भिः श्रीजिनकुशलसूरिभिः सुषमसुषमावत् सकलस्वपक्ष-परपक्षा-
संख्यम्लेच्छलोकचेतश्चमत्कारकारी विधिधर्मप्रभावनाप्रद्विष्टलोकहृदयकीलतुकारी निर्विघ्नः श्रीप्रतिष्ठा-व्रतग्रहणो-
त्थापना-मालारोपण-श्रीसम्यक्त्वारोपादिनन्दिमहामहोत्सवः सविस्तरतरः कृतः । तस्मिन् महोत्सवे श्रीराजगृहनिवा-
सिसमग्रलोकक्रीडास्थानकश्रीवर्धमानस्वामिचरणकमलन्यास-श्रीगौतमस्वामिप्रमुखश्रीमहावीरैकादशगणधरादिमहामु-
निनिर्वाणपवित्रीकृतश्रीवैभारगिरिशैलोपरि ठ० प्रतापसिंहकुलप्रदीपमन्त्रिदलकुलोत्तंससंघपुरुष ठ० अचलकारितश्री-
चतुर्विंशतिजिनालयोत्तुङ्गतोरणप्रासादमूलनायकयोग्यश्रीमहावीरदेवप्रमुखानेकशिलमय-पित्तलामयाद्यनेकबिम्बानां गु-
रुमूर्तीनामधिष्ठायिकानां च प्रतिष्ठा संजाता । क्षुल्लकपदकं च कृतम्, तन्नामानि न्यायकीर्ति-ललितकीर्ति-सोम-
कीर्ति-अमरकीर्ति-नमिकीर्ति-देवकीर्तिमुनय इति । अनेकाभिः श्राविकाभिर्माला गृहीता नानाश्रावकश्राविकाभिः
श्रीसम्यक्त्वारोप-सामायिकारोप-द्वादशव्रताङ्गीकारश्च कृतः ।

१०६. तदनन्तरम्, सिन्धुदेशालङ्कारश्रीउच्चानगर-श्रीदेवराजपुरवास्तव्यमहर्द्धिकसुश्रावकसमुदायगाढतरोपरोधव-
शात् युगप्रवरागमश्रीआर्यसुहस्तिसूरिलोकोत्तरावदातप्रकटनपरा दुष्करतरनिरतिचारचारित्रशीलप्रतिपालनलोकोत्तरत-
पोविधानाकृष्टकिङ्करीवभूव्यन्तरामरनिकरसततविहितसान्निध्योद्धुराः समाश्रितसौवध्यानातिशयनिरुपमगम्भीरदेविकु-
ञ्जराः सांयात्रिताष्टादशसहस्रशीलाङ्गमहारथनिकरा नवपदत्रिंशिकासूरिगुणजात्याश्वघट्टव्याप्तवसुन्धराः पराजय्यानेक-
मुनिमण्डलीपदातिवर्गसारपरिवारा युगाख्यश्रीजिनकुशलसूरिसुगुरुचक्रीश्वरा महाम्लेच्छकुलाकुलगुरुतरश्रीसिन्धुमण्डलो-
परि महामिथ्यात्वदुर्दान्तभूपालोन्मूलनार्थं स्वाश्रितश्रीविधिधर्मधरणीधवसंस्थापनार्थं चैत्राद्यपक्षे दिग्विजयमुहूर्तं वि-
धाय, स्थाने स्थाने शुभशकुनैः प्रेर्यमाणाः, पुनर्द्वितीयवारं मार्गागतश्रीक्यानयन-श्रीसेरुनगरादिसर्वस्थानेषु स्वाज्ञा-
भूपालसंस्थापनां कुर्वाणाः, क्रमक्रमेण मरुस्थलीजनपदमुखकल्पश्रीजेसलमेरुमहादुर्गमध्यनिवासिसामान्यनराजय्यमहा-
ज्ञानदैत्योत्पाटनाय श्रीराजलोक-नगरलोकमहामेलापकेन वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीतूर्येषु, दीयमानेषु महर्द्धिकसुश्रा-
वकैरमेयेषु स्वस्वापतेयेषु, श्रीविधिसमुदायकारितसकललोकचेतश्चमत्कारकारिप्रवेशकमहोत्सवपूर्वकं स्वहस्तकमलप्रतिष्ठितं
निःशेषविषमालाविनाशनसमुद्यतं श्रीपार्श्वनाथदेवाधिदेवचरणारविन्दद्वंद्वं नमस्कुर्वन्ति स्म ।

पश्चात्तत्र दिनदशपञ्चकैः स्वकीयवाक्चातुरीसङ्कलतयाऽज्ञानदैत्योच्छेदनं विधाय, सर्वजनसुखावहं ज्ञानावबो-
धभूपालं संस्थाप्य, श्रीउच्चकीय-श्रीदेवराजपुरीयसुश्रावकेश्वराः श्रीपूज्यपुङ्गवराः, ग्रीष्मर्तौ प्रवर्तमानायामपि सान्नि-
ध्यकार्यम्बुदामरनिकराः, किङ्करीभूतमरुस्थलीमध्यस्थानेकभूतप्रेतपिशाचनिकराः, शनैः शनैः स्वच्छन्दलीलया
ईर्यासमित्यादिनानासमित्यलङ्काराः, मरुस्थलीमहासमुद्रं श्रीपत्तनगजमार्गवत् समुल्लङ्घ्य, वाद्यमानेषु द्वादशविधना-
न्दीतूर्येषु, समग्रलोकनगरलोकमहामेलापकेन नानाविधस्वर्णपट्टांशुकादिदानपूर्वकं श्रीदेवराजपुरीयसमुदायकारितगुरु-
तरप्रवेशकमहोत्सवाः, स्वहस्तकमलप्रतिष्ठितं श्रीयुगादिदेवतीर्थराजं नमश्चक्रुः ।

१०७. तदनन्तरम्, तत्र चाहर्निशं धर्मकर्मदण्डरत्नविराजमानव्याख्यानसेनाधिपतिना मिथ्यात्वभूपालपक्षपाति-
शुभागमनादिसीमालभूपालान् प्राणिहृदयदुर्गमध्यस्थितान् मार्यकेन निर्धाट्य, श्रीमत्पूज्यमहाराजाधिराजाः श्रीउच्चकी-
यसमुदायगाढतराभ्यर्थनया नानाविधाश्चर्यसक्तिशालिनो दुर्जयमिथ्यात्वारनिपालोन्मूलनार्थं तद्राजधानीममायां
हिन्दुकारके वादीन्द्रद्विपघटापञ्चाननश्रीजिनपतिसूरिसुगुरुचक्रवर्तिचरणाम्भोरुहपवित्रितायां श्रीउच्चायां नगरमध्य-
निवासिचातुर्वर्ण्यम्लेच्छराजलोकासंख्यमेलापकेन वाद्यमानेषु द्वादशविधनान्दीतूर्येषु, महर्द्धिकसुश्रावकैर्दीयमानेषु या-
चकमनोवाञ्छितार्थनिचयेषु, श्रीउच्चकीयमहासमुदायकारितमखिलतरप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीचतुर्विंशतिपट्टकालङ्कार-
श्रीयुगादिदेवं नमस्कृत्य निःशङ्कचित्ता अवस्थिताः । पश्चात् मरुस्थलीलोकासुखावहं प्रचण्डयवनिमिथ्यात्वभूमीधरं
सर्वोत्तमगौरवधर्मगुणाभ्यारोपमात्रेण निर्धाट्य, मासमेकं यावत् स्थिता, स्वपक्षाश्रितं श्रीविधिधर्ममहाराजं पदमूलं सं-

स्थाप्य च पुनश्चतुर्मास्युपरि सकलानार्यसिन्धुदेशजनतानुगम्यमानचरणाः श्रीदेवराजपुरवरे श्रीयुगादिदेवं नमश्चक्रुः।

१०८. पश्चात्तदनन्तरम् ,सं० १३८४ वर्षे माघशुक्लपञ्चम्यां प्रवर्धमानशिष्यसंप्राप्त्याद्यनेकलब्धि–आर्यानार्यदेशजिनधर्मप्रवृत्तिभूपालादिप्रतिबोधनशक्ति–निर्लोभताप्रवचनप्रभावनानिधानश्रीसूरिमन्त्राराधन–नानासमयार्थव्याख्यान–संवेगतासुरासुरवशीकरणता–परवादिनिर्घाटन–सर्वनगरग्रामजिनभुवनबिम्बस्थापनादिनानानिजलब्धिशक्त्यादिसंस्मारितश्रीगौतमस्वामि–श्रीसुधर्मस्वामि–श्रीआर्यसुहस्ति–श्रीवयरस्वामि–श्रीआचार्यमन्त्रप्रकटीकरणप्रवीणश्रीवर्धमानसूरि–श्रीनवाङ्गवृत्तिकारश्रीस्तम्भनकपार्श्वनाथप्रकटीकरणोपार्जितभूरियशःश्रीअभयदेवसूरि–अनेकदेवाराध्य–मरुस्थलीकल्पद्रुमावतारश्रीजिनदत्तसूरि–वादीन्द्रद्विपघटानिद्रावणपञ्चाननश्रीजिनपतिसूरि–नानास्थानसंस्थापितश्रीतीर्थङ्करदेवोत्तुङ्गतोरणप्रासादश्रीजिनेश्वरसूरिप्रमुखानेकसवंशोद्भवगणधरयुगप्रधानमालावदातैः तपःक्रियाविद्याव्याख्यानध्यानातिशयावर्जितकिङ्करीभूतामरमहाम्लेच्छहिन्दुकनरेश्वरमधुकरनिकरसमाश्रितचरणाम्भोजयुगप्रवरागमश्रीजिनचन्द्रसूरिशिष्यराजैर्युगप्रधानपदवीप्राप्त्यनन्तरमत्यन्दप्रवर्धमानप्रतिष्ठा व्रतग्रहण मालारोपण–श्रीमहातीर्थयात्राविधान–समुपार्जितगोक्षीरधाराधवलहीराट्टहासतुषारकरनिकरोज्ज्वलयशःकाचकर्पूरवासितविश्ववलयैः सुगुरुचक्रवर्तिश्रीजिनकुशलसूरिभिः स्थैर्यौदार्यगाम्भीर्यादिनानागुणगणमुक्ताफलालङ्कृतगात्रश्रीदेवगुर्वाज्ञास्खलितप्रतिपालनजात्यजाम्बूनदमुकुटालङ्कृतोत्तमाङ्गश्रीजिनशासनप्रभावनावलीविविधक्रीडाविनोदविधानसमुद्यतश्रे०गोपालपुत्ररत्नश्रे०नरपाल सा०वयरसिंह–सा०नन्दण–सा०मोखदेव–सा०लाखण–सा०आम्बा–सा०कडुया–सा०हरिपाल–सा०वीकिल–सा०चाहडप्रमुखानेकोच्चकीयमहामहर्द्धिकसुश्रावक–श्रीदेवराजपुर–श्रीकियासपुर–श्रीबहिरामपुर–श्रीमलिकपुरप्रमुखनानानगरग्रामवास्तव्यासंख्यसुश्रावक–राणक–राजलोक–नगरलोकगाढतराभ्यर्थनया प्रचुरदिनादारभ्य स्थाने स्थाने संजायमानेषु नानाविधेषु नाटकेषु, दीयमानेषु नानाविधनसुधवाभिर्नारीभिस्तालारासकेषु, हाहाहूहूममानानेकगायनावलीभिर्गीयमानेषु गीतेषु, पाठ्यमानेषु भट्टघट्टवृन्देषु, दीयमानेषु महामहर्द्धिकसुश्रावकैः राजलोकैर्नानाप्रकारस्वर्णरजतकटकतुरङ्गमपट्टांशुकादिवस्त्रान्नदानेषु, संजायमानेषु भविष्यत्क्षुल्लकक्षुल्लिकामालायाः सविस्तरतरेषु पुष्पाङ्गदानेषु, क्रियमाणेषु श्रीसाधर्मिकवात्सल्यश्रीसंघपूजाद्यनेकप्रकारेषु धर्मकृत्येषु, विषमदुःषमकाले प्रवर्तमानेऽपि सुषमावच्छ्रीचक्रवर्तिपट्टाभिषेकमहोत्सवानुकारी महामिथ्यात्वदैत्यविनाशनमधुसूदनानुकारी सकलस्वपक्षमहाजनलोकचेतश्चमत्कारकारी प्रविष्टाखिललोकहृदयकीलानुकारी सौवश्रीविधिधर्मसाम्राज्यसम्प्राप्तिमिथ्यात्वभूपालोन्मूलनश्रीसिन्धुदेशविजययात्राचरणसमुपार्जितपुण्यराज्यलक्ष्मीपाणिग्रहणसंस्तवकः श्रीप्रतिष्ठाव्रतग्रहणमालारोपणादिनन्दिमहोत्सवः सविस्तरतरश्चक्रिरे। तस्मिन् महोत्सवे श्रीराणकोट्टविधिचैत्य–श्रीकियासपुरविधिचैत्यमूलनायकयोग्यश्रीयुगादिदेवबिम्बद्वयप्रमुखानेकशिलमयपित्तलामयबिम्बानां श्रीमत्पूज्यप्रवरतरकीर्तिस्तम्भानुकारिणा प्रतिष्ठा संजाता। नवनिधानानुकारिक्षुल्लकनवकं स्वायत्तं जातम्, क्षुल्लिकात्रयं च–तन्नामानि भावमूर्ति–मोदमूर्ति–उदयमूर्ति–विजयमूर्ति–हेममूर्ति–भद्रमूर्ति–मेघमूर्ति–पद्ममूर्ति–हर्षमूर्ति क्षुल्लकाः इति, कुलधर्मा–विनयधर्मा–शीलधर्मा साध्व्य इति। सप्तमसनिश्राविकाभिर्माला गृहीता। अनेकश्रावकश्राविकालोकैः परिग्रहपरिमाणग्रहण–सामायिकारोप–सम्यक्त्वारोपाः प्रचक्रिरे।

१०९. ततश्च सं० १३८५ वर्षे लक्षणच्छन्दोलङ्कारसारनाटकाप्रमाणप्रमाणप्रसिद्धसिद्धान्ताद्यनवद्यनैविद्यमहापुरवीथीविज्ञेयजनप्रचाररथीभूतकुशाग्रनिशातसौवमतिव्रातातिरस्कृतसुरसूरिभिः श्रीजिनकुशलसूरिभिः श्रीउच्चकीय–श्रीबहिरामपुरीय–श्रीक्यासपुरीयादिश्रीखरतरसमुदायमेलापके फाल्गुनशुक्लचतुर्थीदिने पदस्थापनाक्षुल्लकक्षुल्लिकोत्थापनामालाग्रहणादिनन्दिमहोत्सवः सविस्तरतरश्चक्रे। तस्मिन् महोत्सवे पं०कमलाकरगणेर्वाचनाचार्यपद प्रदत्तम् , नूतनदीक्षितक्षुल्लिकानामुत्थापना कृता। विंशतिश्राविकाभिर्मालाग्रहणं विहितम्। बहुभिः श्रावक–श्राविकाभिः परिग्रहपरिमाण–सामायिकारोप–सम्यक्त्वारोपा विदधिरे।

११०. तदनन्तरम्, सं० १३८६ वर्षे निरुपमाकृत्रिमान्तरदृढतरभक्तिप्राग्भारशृङ्गारसुभगं श्रीदेवगुर्वाज्ञाचिन्तामणिविभूषणभियं भावुकमस्तकश्रीजिनशासनप्रभावनावनीतलसमुल्लासनघनाघनालीसमवायश्रीवहिरामपुरीयखरतरसमुदायघनतरोपरोधवशतः सततविहितसुविहाराः स्वकीयसप्रसरज्योतिर्विसरापसारितान्तरघोरान्धकारा जागरूकीकृतविचित्रचित्रमाङ्गलिक्यप्राग्भाराः स्वीकृतचरणकरणालङ्करणसुश्रावकगणपरिवाराः श्रीजिनकुशलसूरियुगप्रवरा दिवाकरा इव सकलभविककमलकाननप्रबोधनप्रवृद्धादरा मोहान्धकारतिरस्कारकरणार्थं श्रीवहिरामपुरे सा० भीम-सा० देदा-सा० धीर-सा० रूपाप्रमुखसमग्रश्रीवहिरामपुरवास्तव्यश्रीविधिसमुदायविधीयमानसमग्रस्वपक्षपरपक्षचेतश्चमत्कारकारिसविस्तरप्रवेशकमहोत्सवाः संमुखागतास्तोकलोकसमुत्कीर्त्यमानकुन्देन्दुसमानानेकप्रविवेकशमदमसंयमप्रकाराः कमनीयरूपलावण्यादिप्रगुणगुणश्रेणयः स्वमहिमातिशयनिशितपरशुधारालूनविघ्नवल्लीविततयः श्रीपार्श्वदेवविधिमन्दिरे समस्तसमीहितसम्पादनसमर्थसेवं श्रीपार्श्वनाथदेवं नमस्कृतवन्तः ।

तत्र च प्रतिष्ठितं श्रीवहिरामपुरवास्तव्यविधिसमुदायेन श्रीपूज्यपादारविन्दवन्दनार्थमागतनानाग्रामवास्तव्यश्रावकसमुदायेन कौमलकश्रावकैरप्यहमहमिकापर्वं........श्रीसाधर्मिकवात्सल्य-श्रीसंघपूजावारितसत्रनिर्मापणादिप्रभावनासु विधीयमानासु, कार्यमाणेषु नागरिकजननिर्निमेषेक्षणप्रेक्षणीयेषु, संजायमानेषु स्थाने स्थानेऽन्यहं....थकमलयजैलक(?)नर्तनपूर्वकं नागरिकलोकेन श्रीपूज्यगुणग्रामवर्णनेषु, कियन्त्यपि दिनानि स्थित्वा, नोभिगिष्यान्धकारतिरस्कारसमुल्लासश्रीकसत्कृक्षपमहाप्रकाश निवेश्य(?), श्रीवहिरामपुरात् श्रीन्वासपुरीयखरतरसमुदायगाढतरोपरोधेन प्रस्थाप भाग्ययुगप्रवरागमरसपादप्रधारामावरूरिसोभूयमागयानतमस्काण्डर्मा डापुरे(?) श्रीरूपालपुरोपरि निजगुः श्रीपूज्याः।

अत्र च...सा० धीणिग-सा० जेट्ठ-सा० वेला-सा० महाधरप्रमुखश्री........लारवाहणीयसमुदायेन श्रीलारवाहणे म्लेच्छनायकसंमुखानयनपूर्वकम्, वाद्यमानढोल्लनान्दीतूर्यवर्यनिनादेन मुखरीक्रियमाणेषु दिङ्मुखेषु, मिलित्वा...पादाश्च तेमूली(?)व्रातसंमूर्छदतुच्छाम्बुदभ्रमेणाकाण्डताण्डवाडम्बरं कुर्वत्सु मयूरेषु, मन्दिरद्वारेषु बध्यमानासु वन्द[नमालिका]सु श्री...पूज्यानां प्रवेशकमहोत्सवो कारयांचक्रे । तत्र च, श्रावकलोकेन...संजायमानेषु श्रीसाधर्मिकवात्सल्यावारितसत्रेषु, जायमानासु सविस्तरतरासु श्रीसंघपूजासु, दिनाष्टकं......प्रबोधा...... ततः स्थानात् प्रस्थायान्तरालस्थोजायाहनादिषु............मानप्रवेशकोत्सवा........... प्राग्भागसुधर्मकथारसलोकाह्लादनोत्थानजःपुञ्जातन्यसा.. (अत्र कियान् लिपिपाठस्त्रुटितः प्रतिभाति) [।]

१११. तदनन्तरम्, नैसर्गिकसुलग्नगुरुभक्तिप्राग्भारशिलमानमनिश्चधिनिभिमार्गेणः[illegible] श्रीवयागुग्नगामि- भे० मोहण-सा० कुमरसिंह-व्यव० सीमसिंह-सा० नापू-सा० जट्टप्रमुखश्रावकसमुदायेन युगप्रवरागमश्रीजिनकुशलसूरिपादानधारणसमुच्छलदनर्गलनराह्लादपयःपटलैःस्यमानोत्रप्रोत्तम्भभूतरोमाङ्कुरोद्देन [illegible]म्लेच्छनायकास्त्वाद् [illegible] तुरुष्काष्टकं दुष्टलोकनिवारकं नहाराय, राजलोक-जनलोक-सा० [illegible] मेलापके वाद्यमानेष्वधरीकृतमद्रमाद्रपदीयघनगर्जनगम्भीरघोषेषु नान्दीतूर्येषु, दीयमानेषु महादानेषु [illegible] निपमंपधनरत्नेषु [illegible], गीयमानेषु [illegible] [illegible] दर्शनेषु, पाठ्यमानेषु मङ्गलपाठकवृन्देन श्रीपूज्यगुणदर्शनादि [illegible] नेषु [illegible] । पूर्णमनोरथानां [illegible] श्रीमन्दिरद्वारोपभूमिरत्नसौधनिलसिनिनिशुक[illegible] श्रीपूज्यानां [illegible] । [illegible] नि........................[illegible] अहो! अस्माकं [illegible] । अहो! अस्माकं [illegible] अहो! अस्माकं दुर्दम[illegible] । अहो! अस्माकं [illegible] अस्माकं ममोऽद्य सर्वाणि वचनमात्रमहर्घं [illegible]

पा(?)श्चिरं जीवेत्यादिविविधाशीर्वादैराशिष्यमाणाः, अग्रेगच्छदतुच्छश्रीपूज्यपुण्यविलासाहृतप्रभूतकामकलशायमान-कामिनीजनवराङ्गविन्यस्तपूर्णकलशाः, सौवप्रभावातिशयनिशितपरशुप्रलूनप्रत्यूहव्यूहवल्लिविताना:, दुष्टम्लेच्छैरपि सुश्रावकलोकैरिव वन्द्यमानपादारविन्दाः, वादीन्द्रद्विपघटापञ्चाननाः, श्रीजिनपतिसूरिश्रीअजयमेरुमहानगरश्रीपृथ्वी-राजकारितमहाप्रवेशकमहोत्सवानुहारिणा निरवधिविधिमार्गदुष्टलोकमुखमालिन्यनिर्मापणमषीकूर्चकानुकारिणा सवि-स्तरप्रवेशकमहोत्सवेन प्रवेशिताः सार्वकामुकसप्रतिष्ठितश्रीयुगादिदेवपादस्वःपादपयुगं ववन्दिरे ।

तत्र च विधिमार्गीयव्यासपुरवास्तव्यखरतरसमुदायेन कोमलश्रावकैश्च श्रीपूज्यज्ञानध्यानपवित्रचारित्रादिवरेण्य-गुणगणावर्जितैः प्रतिदिनविधीयमानशालिदालिहैयङ्गवीननवीनपक्वान्नव्यञ्जनफलावलिबहुलश्रीसाधर्मिकवात्सल्य-श्री-संघपूजावारितसत्र-रासकप्रदान-खेलक-नर्तन-प्रेक्षणीयकनिर्मापणादिभिर्गुर्वीप्रवचनप्रभावना विरचयाञ्चक्रे । श्री-पूज्याः कौतूहलागततुरुष्कनायकान् स्ववचनचातुरीभिराह्लादयन्तः सुप्रथितमिथ्यात्वान्धकारपूरितबहुललोकहृदयक-न्दरासु बोधिलाभमहोद्योतमुल्लासयन्तः, सुश्रावकभविकक..
....दापयतश्चतुर्मास्युपरि श्रीदेवराजपुरे समस्तसमुदायकारितगुरु-तरप्रवेशकमहोत्सवाः श्रीयुगादिदेवं नमस्कृतवन्तः ।

११२. तदनन्तरम्, सं० १३८७ वर्षे श्रे०नरपाल-सा०हरिपाल-सा०आम्बा-सा०लखण-सा०बीकलप्रमुखश्री-उच्चकीयसमुदायगुरुतराग्रहवशादास्मत्रयोदशाः............(अत्र कियान् पाठो नष्टः) ।

तत्र च मासमेकं पूर्ववत्तीर्थप्रभावनां.......गूर्जरनगर इव प्रकटतयाऽर्हद्धर्मकमलपरिमलं विस्तार्य श्रीउच्चापुरीतः श्रीपरशुरोर[को]ट्टवास्तव्यसा० हरिपाल-सा०रूपा-सा०आसा-सा०सामलप्रमुखसमुदायदृढाग्रहवशात् श्रीजिनकुश-लसूरयश्चैत्यद्वय(?)यात्राकरणप्रवणाः प्रभूतश्रावकानुगम्यमाना नानाग्रामेषु श्रीपूज्यागमनोत्कर्णनोद्धुरप्रमोदाभि-रामेषु श्रावकान् वन्दापयन्तः परशुरोरकोट्टे वाद्यमानढोल्लनिनादभेदक्षिप्रतिनिनादेन गह्वरितेषु दिग्विवरेषु, संमुख-मागच्छत्सु शृङ्गारस्फारेषु नागरेषु, संजातगुरुतरप्रवेशकोत्सवा.................................श्रीबहिरामपुर-श्रीपार्श्वदेवपादारविन्दं नमश्चक्रुः । तत्र च महतीश्रीजिनशासनप्रभावनां पूर्ववद्विरचय्य........... । ततः स्थानात् श्रीव्यासपुरादि.......'ग्रामे एका रात्रिर्नगरे पञ्चरात्र'मित्यनया रीत्या भविकलोकपरोपकाराय .... विहृत्य चतु-र्मास्युपरिश्रीदेवराजपुरवरे श्रीयुगादिजिननरेन्द्रपादारविन्दं प्रणेमुः ।

११३. ततश्च सं० १३८८ वर्षे श्रीविमलाचलचूलालङ्कारहारश्रीमन्मानतुङ्गविहारशृङ्गारश्रीप्रथमतीर्थङ्करप्रमुखा-र्हद्बिम्बनिकरप्रतिष्ठापन संस्थापन-व्रतग्रहण-मालारोपणादिमहामहोत्सवानेकदेशप्रदेशविहाराधयदातप्रातवितत कदली-जातव ....संजातयशःकाचकर्पूरपूरपारीपरिमलत्रिभुवनोदयसूरिभिः श्रीजिनकुशलसूरिभिर्विशिष्टपरिष्ठज्ञानध्यान-बलेन सम्यक् समयं परिभाव्य निजभुजासमुपार्जित......निर्जितपारिजातकल्पद्रुमश्रीउच्चापुरी......क्रिकस्तरको...लितसौवर्णतिलकायमानश्रीविधिसमुदायश्रीबहिरामपुर श्रीक्यासपुर-श्रीसिलारवाहणादिनानानगरग्रामवास्तव्यसमस्तसि-न्धुदेशसमुदायमेलापके प्रभूतदिनेभ्य आरभ्य नरीनृत्यमानेषु खेलकवितानेषु, दीयमानेषु श्रावकलोकेन सकर्णकर्ण-सुधासेकेषु रासकेषु, संजायमानेषु श्रीसाधर्मिकवात्सल्यावारितसत्रश्रीसंघपूजादिषु, दीयमानेषु श्रावकलोकेन सततम-मेयेषु स्वस्वापतेयेषु, वितन्यमानेषु भाविक्षुल्लक-क्षुल्लिकानां पुण्याङ्केषु अ......णायां स्वपक्ष-परपक्षचेतश्चमत्कारकारी पदस्थापन-व्रतग्रहण-मालारोपण-सामायिकारोपण-सम्यक्त्वारोपादिनन्दिमहामहोत्सवो मार्गशीर्षशुक्लदशमीदिने निर्मापयामासे । तस्मिन् महोत्सवे गाम्भीर्यौदार्यधैर्यस्थैर्यार्जवविद्वत्त्वकवित्ववाग्मित्वसत्त्वसौविहित्यज्ञानदर्शनचारित्रवि-शदषट्त्रिंशत्सूरिगुणगणमणिविपणीनां पं० तरुणकीर्तिगणीनामाचार्यपदं प्रदत्तम्-नाम श्रीतरुणप्रभाचार्याः; पं० लब्धि-

निधानगणीनामभिषेकपदं प्रदत्तम्—नाम श्रीलब्धिनिधानोपाध्यायाः; क्षुल्लक-क्षुल्लिकाद्वयं च बभूव, तन्नामानि जयप्रियमुनि-पुण्यप्रियमुनिक्षुल्लकौ जयश्री-धर्मश्रीक्षुल्लिके। दशभिः श्राविकाभिर्मालाग्रहणं कृतम्। अनेकश्रावक-श्राविकाभिः परिग्रहपरिमाण-सामायिकारोप-सम्यक्त्वारोपार्थं नन्द्यारोहश्च। सौवभुजापरिघसमुपार्जितवित्ततनिर्निदानदानोल्लसितदन्तिदन्तमन्युक्तोदक्षीरोदक्षीरडिण्डी.......ट्टहासकाशसंकाशयशःकुसुमसमुच्चयसमन्वितसकलदिग्देवताचक्रवालेन .... बभूवे।

११४. ततश्च चतुर्मासी श्रीदेवराजपुरे श्रीजैनशासनसंस्थानां परमनिदानेऽपूर्वापरिशीलितश्रीस्याद्वादरत्नाकरमहातर्करत्नाकरश्रीतरुणप्रभाचार्य-श्रीलब्धिनिधानमहोपाध्यायानां सूक्ष्मशेमुषीविवरगोचरं कुर्वाणाः, स्वप्रान्त्यसमयमवलोक्य स्वर्गं विरचेय (?) वर्णिनीपाणिपीडनविधौ शुद्धक्षेत्रमवधार्य ते तस्थुः। ततो माघशुक्ल......गाढज्वरश्वासादिरोगाबाधिते स्वनिर्याणसमयं ज्ञात्वा श्रीतरुणप्रभाचार्य-श्रीलब्धिनिधानमहामहोपाध्यायानां श्रीमुखेन स्वकीयपट्टयोग्यपञ्चदशवर्षप्रमाणस्वशिष्यरत्नप्रधानसा० लक्ष्मीधरपुत्ररत्नसाधुराजआम्बा-साध्वीनीकीकानन्दन-युगप्रधानकमलालीलानर्मकेलिलीलालासनश्रीमेरुमहीधरमण्डनश्रीनन्दनाभिधानप्रधानकाननसमानं पद्ममूर्तिक्षुल्लकं स्वकीयपदसंस्थापनविषयां शिक्षां सर्वां दत्त्वा, सं० १३८९ फाल्गुनकृष्णपञ्चम्यां पाश्चात्यप्रहरे श्रीचतुर्विधसंघेन सह दत्तमिथ्यादुष्कृतदानाः समुत्सारिताशनाः नानाराधनामृतपानाः पञ्चपरमेष्ठिश्रेष्ठध्यानसन्धानपञ्चसौगन्धिकताम्बूलास्वादनसुरभिवानना रात्रिप्रहरद्वयोद्देशे स्वर्गकमलापाणिपीडनविधिं विदधुः।

ततः प्रातः समये साम्प्रतिकविषमकालकालरात्र्यन्धकारसमाचारचतुरभास्करप्रकारश्रीमद्विधिसंघमहापारश्रीमज्जिनकुशलसूरियुगप्रवरास्तमनेन विधुरितान्तःकरणेनापि श्रीसिन्धुमण्डलनानास्थाननास्तव्यसुश्रावकसमुदायप्रवरेण श्रीदेवगुरुकार्यकरणप्रगुणेन पञ्चसप्ततिमण्डपिकामण्डितसमुद्दण्डदण्डविडम्बिताखण्डमण्डलविमाननिर्याणविमानविधानपूर्वकं निर्याणमहामहोत्सवश्चक्रे। शरीरसंस्कारश्च सारघनसारागुरुकस्तुरिकाश्रीमलयाचलसारचन्दनप्रमुखसुगन्धिद्रव्यैरेव विरचयाञ्चक्रे। ततश्च संस्कारभूम्यां साधुराजरीहडपूर्णचन्द्रकुलप्रदीप-साधुराजहरिपालसुश्रावकप्रवरेण सत्पुत्रसा० माल्हण-सा० यशोधवलप्रमुखसर्वपरिवारपरिवृतेन समस्तश्रस्तदर्शनजनजाततेनयनसुधापानपारणाकारणप्रवीणरूपं श्रीभरताधिपविनिर्मितं श्रीमदष्टापदशिखरशिखरशेखरायमाणश्रीइक्ष्वाकुकुलवंशीयमुनिमतल्लिकावितानसंस्कारस्थानप्रधानस्तूपस्वरूपमतुच्छम्लेच्छकुलजनव्याकुलश्रीसिन्धुमण्डलमध्यनिवासिश्रावकलोकमनोऽवष्टम्भनादानान्तिरीयं श्रीस्तूपं कारयामास।

११५. ततश्च सं० १३९० वर्षे ज्येष्ठशुक्लषष्ठ्यां सोमवारे मिथुनलग्ने श्रीदेवराजपुरे श्रीयुगादिदेवविधिचैत्ये श्रीतरुणप्रभाचार्यैः श्रीजयधर्ममहोपाध्याय-श्रीलब्धिनिधानमहोपाध्यायप्रमुखत्रिसप्ततिसंख्यसाधुप्रभृति...साध्वीकसाध्वी-नानाजनपदनगरग्रामवास्तव्यासंख्यस्वपक्ष-परपक्षसुश्रावक-श्रावक-प्रमुखक्षत्रिय-राजपुत्र-तुरुष्कनायकानेकमहत्तमसंघ-लोकमहामेलापकेन निर्धीयमानास्वमारिघोषणासु, क्रियमाणासु नानाविधासु प्रोत्सर्पणासु, विरच्यमानेषु चतुर्विधसंघवात्सल्येषु, स्थाने स्थाने दीयमानेषु तालारासकेषु, गीयमानेषु विविधगुणरत्नागारसिद्धान्तमहत्त्वेषु, संवाद्यमानेषु समस्तवादित्रेषु, पुष्कलनर्मसुधारसदानपानवस्त्रभरणसुवर्णसुवर्णकुङ्कुमादिनानाविधमहादानजननयनप्रमोदनृत्याभिषेकेषु प्रेक्षणीयेषु, निजभुजार्जितवित्तपरापरार्जितपुण्यप्रसूनपरिमलवासितभूमिस्वरूपेषु क्रियमाणासु श्रीचतुर्विधसंघनयनाभिरामेषु श्रावककदम्बकेषु, निजभुजार्जितवित्तव्ययपरायणैश्च श्रावकसंघैरभूमिषु ... श्रीजिनकुशलसूरिपट्टपूर्वाचलोदयगिरिदामने संस्थापना विदधे। एवञ्च, श्रीजिनकुशलसूरीणां शिक्षानुसारेण पद्ममूर्तिक्षुल्लकस्य श्रीजिनपद्मसूरिपट्टगिरिदाने संस्थापना विदधे। श्रीजिनपद्मसूरय इति नाम कृतम्। श्रीजिनकुशलसूरीणां पट्टाभिषेकमहोत्सवस्य श्रीरीहडकुलप्रदीप-श्रीहरिपालदेवानुसारेण श्रीजिनपद्मसूरेः ... श्रीजिनशासनप्रभावनाकारणाभिलाषिणा श्रीमत्पुत्रपौत्रप्रपौत्रपरिवारपरिवृत-साधुयशोधवल-साधुहेमलकुमार-साधुपूर्णचन्द्रप्रमुखेन श्रीजिनशासनप्रभावनाकारणाभिलाषिणा श्रीमत्पुत्रपौत्रप्रपौत्रपरिवार-साधुदेवपुत्ररत्न-साधुहेमलकुमार-साधुपूर्णचन्द्रप्रमुखेन श्रीजिनशासनप्रभावकेन ... श्रीसिन्धुदेशविहारक्रमागत-श्रीआचार्यवर्य-श्रीतरुणप्रभाचार्यवारकश्रीजिनचन्द्रसूरि-श्रीजिनकुशलसूरिगुणगणधारक-

पाध्यायसंस्थापनास्वपुत्रिकादीक्षादापनप्रमुखसदन्विदन्तावदातावदातत्रातसंजातसुयशःकुसुमश्रेणीसौरभभरसुरभितसर्व-दिक्कुटुम्बकेन साधुराजहरिपालसुश्रावकेण पितृव्यसाधुकडुक-भ्रातृसाधुकुलधर-सत्पुत्रसाधुझाञ्झण-सा० यशोधवल-प्रमुखसकलपरिवारपरिकलितेन सर्वेषु देशेषु कुङ्कुमपत्रिकाप्रेषणपूर्वं चतुर्दिक्षु सर्वस्थानश्रीविधिसंघान् समामन्त्र्य, मासैकादारभ्य प्रतिदिनं श्रीसाधर्मिकवात्सल्यादिनानाप्रभावनासंघपूजादिमहामहोत्सवेषु स्वभुजोपार्जितानेकसहस्रसंख्यरूप्यटङ्कव्ययेन याचकजनमनःसन्तोषपोषपूर्वकं कारितः।

तस्मिन् महोत्सवे साधुआम्बा-सा० झाझा-सा० भम्मी-सा० चाहड-सा० धुस्सुर-श्रे० मोहण-सा० नागदेव-सा० गोसल-सा० कर्मसिंह-सा० खेतसिंह-सा० बोहिथप्रमुखनानास्थानवास्तव्यमहामहर्द्धिकसुश्रावकैश्च स्वकीयं स्वापतेयं सफलीचक्रे। तस्मिन्नेव महोत्सवे जयचन्द्र-शुभचन्द्र-हर्षचन्द्रमुनीनां महाश्री-कनकश्रीक्षुल्लिकयोश्च श्रीजिनपद्मसूरिभिर्दीक्षा प्रददे। पं० अमृतचन्द्रगणेर्वाचनाचार्यपदं प्रदत्तम्। अनेकश्राविकाभिर्माला गृहीता। अनेकश्रावक-श्राविकाभिः श्रीसम्यक्त्वारोप-श्रीसामायिकारोप-परिग्रहपरिमाणानि गृहीतानि। तदनन्तरं ज्येष्ठशुक्लनवम्यां साधुराजहरिपालकारित-श्रीयुगादिदेवप्रमुखार्हद्बिम्बानां स्तूपयोग्य-श्रीजेसलमेरुयोग्य-श्रीक्यासपुरयोग्य-श्रीजिनकुशलसूरीणां मूर्तित्रयस्य प्रतिष्ठामहोत्सवः पदस्थापनामहोत्सववत् सविस्तरतरः कृतः। तस्मिन्नेव च दिने महता विस्तरेण श्रीचतुर्विधसंघमहामेलापकेन श्रीजिनकुशलसूरीणां मूर्त्तिः स्तूपे संस्थापिता। तदनन्तरं पट्टाभिषेकमहोत्सवोपरि समागतश्रीजेसलमेरवीयश्रीविधिसमुदायगाढतराभ्यर्थनया श्रीउपाध्याययुगलप्रमुखसाधुद्वादशपरिवारपरिवृताः श्रीपूज्याः श्रीजेसलमेरवीयश्रीविधिसमुदायकारितस्वपक्ष-परपक्षातुच्छम्लेच्छानन्दकारिमविस्तरतरप्रवेशकमहामहोत्सवपूर्वकं श्रीपार्श्वनाथदेवाधिदेवं नमस्कृतवन्तः। प्रथमा चतुर्मासी च तत्र कृता।

११६. तदनन्तरम्, सं० १३९१ वर्षे पौषवदिदशम्यां मालारोपादिमहोत्सवं सविस्तरतरं विधाय, लक्ष्मीमालागणिन्याः प्रवर्तिनीपदं दत्त्वा, श्रीपूज्या वाग्भटमेरूपरि विहृताः। तत्र च सा० प्रतापसिंह-सा० सातसिंहप्रमुखश्रीसमुदायेन श्रीचाहमानकुलप्रदीपराणकश्रीशिखरप्रमुखश्रीराजलोकनगरलोकसंमुखानयनपूर्वकं प्रवेशकमहोत्सवं विधाय श्रीयुगादिदेवमहातीर्थं नमस्कारिताः। तत्र च दिनदशकं श्रीसमुदायस्य समाधानं समुत्पाद्य, श्रीपूज्याः श्रीसत्यपुरोपरि विहृताः। श्रीसत्यपुरे च राजमान्यसर्वसंघकार्यनिर्वाहणसमर्थसाधुनिम्बाप्रमुखश्रीसमुदायेन राणकश्रीहरिपालदेवप्रमुखश्रीराजलोक-नगरलोकसम्मुखानयनपूर्वकं प्रवेशकमहामहोत्सवः प्रचक्रे। श्रीमहावीरदेवं च श्रीपूज्या नमस्कृतवन्तः। तत्र च माघशुक्लषष्ठ्यां श्रीसमुदायकारितं सकलजनचेतश्चमत्कारकारकं व्रतग्रहणमालारोपादिमहोत्सवं चक्रुः। श्रीपूज्यैस्तस्मिन् महोत्सवे नयसागर-अभयसागरक्षुल्लकयोर्दीक्षा प्रदत्ता। अनेकश्राविकाभिर्माला प्रगृहीता। श्रीसम्यक्त्वारोपश्च कृतः। तत्र च किंचिदूनं मासमेकं श्रीसमुदायस्य समाधानमुत्पाद्य, पश्चात् श्रीआदित्यपाटके संघपुरुषसा० वीरदेवादिसर्वसमुदायकारितसविस्तरतरप्रवेशकमहामहोत्सवेन श्रीशान्तिनाथमहातीर्थं नमश्चक्रुः। ततो माघशुक्लपूर्णिमायां सा० जाह्णणकुलावतंससा० तेजपालप्रमुखश्रीसमुदायकारितः सविस्तरतरः प्रतिष्ठामहामहोत्सवो निरचयाञ्चक्रे। तस्मिन् महोत्सवे श्रीयुगादिदेवप्रमुखजिनबिम्बपञ्चशत्याः श्रीपूज्यैः प्रतिष्ठा विदधे। ततः फाल्गुनाषष्ठीदिने मालारोपण-श्रीसम्यक्त्वारोपादिमहोत्सवो विरचयामासे।

ततः सं० १३९२ वर्षे मार्गशीर्षवदिषष्ठीदिने क्षुल्लकयोरुत्थापनाश्राविकामालाग्रहणादिमहोत्सवश्चक्रे।

११७. ततः सं० १३९३ वर्षे कार्तिकमासे श्रीपूज्यैर्लघुनयोभिरप्यवश्यकर्तव्यतया साधुतेजपालकारितसविस्तरतरघनसारनन्दिपूर्वकं प्रथमोपधानतपो व्यूढम्। ततः श्रीश्रीमालकुलावतंससा० सोमदेवसुश्रावकस्य श्रीजीरापल्लीमण्डलश्रीपार्श्वनाथजिननिजसांनिहितगाढतराभिग्रहस्य चिरसिकया फाल्गुनाधदशम्यां श्रीपत्तनात् प्रस्थाय, नारउद्रस्थाने

मं० गेहाकेन कारितमहाप्रवेशका दिनद्वयमवस्थाय श्रीआशोटास्थाने श्रीपूज्याः समाययुः। तत्र च साधुश्यामलकुलो-त्तंसेन श्रीशत्रुञ्जयादिमहातीर्थयात्रनिर्माणविश्वविख्यातनानावदातेन सङ्घपुरुषसाधुवीरदेवसुश्रावकेण श्रीविधिसमुदा-यसहितेन राज०श्रीसं(रु?)द्रनन्दनराज०गोधा-सामन्तसिंहादिसकलराजलोकनागरिकसम्मुखानयनपूर्वकं श्रीभीमपल्ली-कारितयुगप्रवरागमश्रीजिनकुशलसूरिप्रवेशकमहोत्सववत् श्रीपूज्यानां सविस्तरतरः प्रवेशकमहोत्सवश्चक्रे। ततश्च साधु-मोखदेवकारितविहारक्रमोपक्रमा विषमकालेऽप्यस्मिन् चौरचरटप्रचारप्रचुरेऽपि मार्गे नगरमार्ग इव निःशङ्काः श्रीपूज्या बूजद्रीस्थाने पादावधारयाञ्चक्रुः। तत्र च साधुछजलविपुलकुलगगनतलसमलङ्करणसहस्रकिरणकल्पेन सा०मोखदेव-सुश्रावकेण सर्वश्रीविधिसमुदायसहितेन चाहमानवंशमानससरोराजहंससमानसवाचाप्रदाननिर्वाहणप्रधानराज० श्रीउ-दयसिंहप्रमुखराजलोकनागरिकलोकसम्मुखानयनेन महाप्रभावनापुरःसरप्रवेशकमहामहोत्सवश्चक्रे।

११८. ततस्तत्रैव वर्षे राज०श्रीउदयसिंहमहाप्रसादमासाद्य साधुराजमोखदेवेन साधुराजसिंहतनय-सा०पूर्णसिंह-सा०धनसिंहादिसकलस्वकीयकुटुम्बसहितेन श्रीअर्बुदाचलादितीर्थयात्रां कर्तुं श्रीपूज्या विज्ञपयामासिरे। श्रीपूज्यैश्च ज्ञानध्यानविधानसमनुकृतसर्वस्वपूर्वजयुगप्रधानपरम्परावदातैर्निर्विघ्नमिति परिभाव्य श्रीतीर्थयात्रामहत्प्रभावनाङ्गं श्री-सम्यक्त्वनिर्मलतानिदानं सुश्रावकाणां कर्तव्यैवेति तद्विधाने समादेशः प्रादायि। ततश्च श्रीसपादलक्षीय-श्रीश्रीमालीय-सा०वीजा-सा०देपाल-सा०जिनदेव-सा०साङ्गाप्रमुखस्वपक्ष-परपक्षश्रावकसङ्घकुङ्कुमपत्रिकाप्रदानेन, मार्गे च सा०मूल-राज-सा०पद्मसिंहाभ्यां सर्वसङ्घस्य शुद्धौ क्रियमाणायां समाकार्य, चैत्रशुक्लषष्ठीदिने आदित्यवारे श्रीपूज्यानां पार्श्वात् श्रीतीर्थयात्रायोग्यनूतनकारितश्रीदेवालये श्रीशान्तिनाथबिम्बस्य संस्थापनावासक्षेपः साधुमोखदेवेन कारयामासे। ततो-ऽष्टाह्निकामहोत्सवान् महाप्रभावनया विधाय चैत्रशुक्लपूर्णिमायां श्रीबूजडीवास्तव्य-सा०काला-सा०कीरतसिंह-सा० होता-सा०मोजाप्रमुखश्रीविधिसंघ-मं०ऊदाप्रमुखान्यश्रावकसंघमेलापकेन श्रीदेवालयप्रचलनमुहूर्त्तं जज्ञे। श्रीपूज्या अपि श्रीलब्धिनिधानमहोपाध्याय-वा०अमृतचन्द्रगणिप्रमुखमुनितल्लिकापञ्चदश-श्रीजयर्द्धिमहत्तराप्रमुखसाध्व्यष्ट-कपरिवृताः श्रीसङ्घेन सह श्रीतीर्थयात्रायां प्रचेलुः।

११९. ततः श्रीबूजद्रीसङ्घः श्रीसपादलक्षीयसङ्घेन सह मिलित्वा श्रीनाणातीर्थे समाययौ। तत्र च सा०हराप्रमुख-श्रावकवृन्दस्वीकृतश्रीइन्द्रपदादिनिर्माणेन महतीं प्रभावनां विधाय, श्रीमोखदेवप्रमुखश्रीसङ्घः श्रीमहावीरमहाप्रासादे रूप्यटङ्क शत २ द्रव्यं सफलीचकार। ततः श्रीपूज्याः शुभशकुनैः प्रोत्साह्यमानाः समस्तश्रीविधिसङ्घेनाहमहमिकया वरिवस्यमानाः श्रीअर्बुदाचलालङ्कारसकललोकमनोपहारविज्ञानवितानसारश्रीविमलविहार-श्रीलूणिगविहार श्रीतेजसिंह-विहारमूलालङ्कारश्रीनाभेय-श्रीनेमीश्वरप्रमुखश्रीतीर्थङ्करवारं भावसारं नमश्चक्रुः। तत्र च सा०मोखदेवप्रमुखश्रीविधिसङ्घेन श्रीशक्रपदामात्यपदादिपदनिर्माणमहाध्वजारोपणावारित्तसत्रादिमहामहोत्सवपरम्परां विरचयता रूप्यटङ्कशत५ प्रमाणं द्रविणं सफलीचक्रे। ततः श्रीप्रह्लादनपुरस्तूपालङ्कारश्रीमज्जिनपतिसूरियुगप्रधानमूर्तिं मुद्रस्थलाग्रामे श्रीपूज्याः सकलस-ङ्घसमन्विताः प्रणेमुः। ततः श्रीजीरापल्ल्यां जाग्रत्प्रभावकमलासनाथश्रीपार्श्वनाथं श्रीपूज्याः श्रीसङ्घसमन्विताः प्रणमन्ति स्म। तत्र च श्रीसङ्घेन श्रीशक्रपदादिमहोत्सवान् विधाय रूप्यटङ्कशत १५०कृतार्थीकृतम्। ततः स्थानात् प्रस्थाय श्रीसङ्घः श्रीचन्द्रावत्यां सकलसङ्घपादावधारणं विदधे। तत्र च श्रीसङ्घस्य साधुझाञ्झण-मं०कूपाप्रमुखनागरिकसुश्रावकलोकेन श्रीसाधर्मिकवात्सल्यश्रीसङ्घपूजादिविधानेन बहुमानप्रदानं प्रचक्रे। श्रीसङ्घेन च तत्रापीन्द्रपदादिविधानेन श्रीयुगादि-देवप्रासादे रूप्यटङ्कशत२ कृतार्थयामासे। ततोऽपि प्रस्थाय श्रीआरासने श्रीनेमीश्वरप्रमुखपञ्चतीर्थीं श्रीपूज्याः श्रीसङ्घेन सह नमन्ति स्म। तत्रापि श्रीसङ्घेन पूर्ववच्छक्रपदादिनिर्माणेन रूप्यटङ्कशत १५० सफलं निर्ममे। ततश्च श्रीतारङ्गके श्रीकुमारपालभूपालकीर्तनं श्रीअजितस्वामिनं श्रीसङ्घः प्रणनाम। तत्र च विशेषतरं श्रीसङ्घेन श्रीशक्रपदादिनिर्माणेन रूप्यटङ्कशते २ सफले विदधाते। ततो व्याघुट्य श्रीसङ्घः श्रीत्रिशृङ्गमके समागमत्। तत्र च मं०साङ्गणपुत्ररत्न-मं०-

मण्डलिक-मं०वयरसिंह-सा०नेमा-सा०कुमरपाल-सा०महीपालप्रमुखत्रिशृङ्गमकसङ्घेन महाराजश्रीमहीपालाङ्गज-महाराजश्रीरामदेवविज्ञपनं कृत्वा, तदीयनिरोपमासाद्य निःस्वानेषु वाद्यमानेषु सविस्तरतरः श्रीसङ्घस्य नगरप्रवेशकमहामहोत्सवश्चक्रे। श्रीपूज्यैश्च सर्वचतुर्विधसङ्घसमन्वितैः सविस्तरा सर्वप्रासादेषु चैत्यप्रपाटी विदधे। श्रीसङ्घश्च श्रीशक्रपदादिनिर्माणेन रूप्यटङ्कशत १५० श्रीपार्श्वनाथप्रासादे कृतार्थीचकार।

१२०. ततः प्रतिदिक्प्रसर्पत्प्रतिनिनादश्रीपूज्यनिरुपमप्रातिभवैभवादिगुणगणसंभवयशोवादसमाकर्णनेन संजातकौतुकसमाजः श्रीरामदेवमहाराजः सा०मोखदेव-मं०मण्डलिकाग्रे प्रतिपादयामास-'युष्मद्गुरूणां लघुवयसामपि महान् प्रज्ञाप्रकर्षः श्रूयते। अतस्तदवलोकनार्थमहं तत्रागमिष्यामि; अथवा तान् मम पार्श्वे समानयत'। ततः सा०मोखदेव-मं०मण्डलिकाभ्यां श्रीपूज्या महताऽऽग्रहेण विज्ञप्यन्ते स्म। ततस्तदाग्रहाच्छ्रीपूज्याः श्रीलब्धिनिधानमहोपाध्यायादिसाधुपरिवृताः श्रीरामदेवमहाराजसभायां पादा अवधारितवन्तः। श्रीरामदेवमहाराजः श्रीपूज्यान् समागच्छतोऽवलोक्य स्वकीयासनात् समुत्थाय श्रीपूज्यपादान् ननाम। श्रीपूज्योपवेशनार्थं चतुष्किकां मोचयामास च। श्रीपूज्यैश्चाशीर्वादः प्रादायि। तत्र चोपविष्टेन श्रीसारङ्गदेवमहाराजव्यासेन स्वोपज्ञं काव्यं व्याख्यायि। तत्काव्ये च श्रीलब्धिनिधानमहोपाध्यायैः क्रियापदे कूटं निरकास्यत। ततः श्रीरामश्चित्ते चमत्कृतः। पुनः पुनः सभायां बभाण-'अहो! अमीषामुपाध्यायानां जाग्रत्समग्रशास्त्ररहस्यानां महाभटवद्वाक्पटुता, येनास्माकमपि सभायां व्यासवचने कूटं निष्कासितम्'। ततः सर्वाऽपि राजपर्षत् मस्तकधूननेन ताण्डवं नाटयन्ती श्रीपूज्यराजश्रीमदुपाध्यायमिश्रगुणवर्णनपरा जज्ञे। ततः श्रीपूज्यैः श्रीराममहाराजवर्णनं तात्कालिकयार्यया विदधे। तथा हि-

> विहितं सुवर्णसारङ्गलोभिनाऽपि त्वयाऽद्भुतं राम!।
> यत्ते लङ्कापुरुषेण ननु ददे श्रीर्वरा सीता॥ [९३]

ततः सर्वाऽपि सभा चमत्कृता। ततः श्रीरामेण श्रीसिद्धसेनप्रमुखाचार्यान् समाकार्य, तत्प्रत्यक्षं श्रीपूज्यपार्श्वात् कायस्थकथितं विकटाक्षरं काव्यमलेख्यत। तच्च श्रीपूज्यैर्नूतनदृष्टराजसभायामपि धाष्टर्यशालिभिर्वारमेकं वाचयित्वोत्पुंस्य च मुखे नाममालामनवच्छिन्नवाण्या गुणयत् सर्वकं समलिख्यत। लोकश्च सर्वोऽपि श्रीपूज्यानां संमुखो बभूव। ततः पुनरप्येकस्यैकस्य श्लोकस्य प्रत्येकमेकमेकमक्षरमाचार्य-व्यास कायस्थपार्श्वाल्लेखयित्वा श्रीपूज्यैरुत्पुंसितम्। एवं द्वितीयवारं तृतीयवारमित्यादि यावत् श्लोकत्रयं सम्पूर्णमजनिष्ट। ततः श्रीपूज्यैर्निष्प्रतिमप्रज्ञोपचितोपशालिभिः सम्पूर्णश्लोकत्रयं पट्टकेऽलेखि। तेन च सुकर्मणा विश्वत्रयेऽपि स्वकीयश्लोकराजहंसः खेलनार्थमप्रेपि। ततः सर्वाऽपि राजसभा-'अद्यापि विषमकलिकालविलुप्तसकलकलास्वपि लोकेषु श्रीजैनशासने विलोक्यन्तेऽतिशायिकलाकलापकलिताः श्रीसूरिवराः'-इति श्रीपूज्यगुणगणवर्णनपरा जज्ञे। श्रीपूज्याश्च सराजराजसभाचेतश्चमत्कारं समुत्पाद्य श्रीसङ्घे पादाववधारयाञ्चक्रुः।

१२१. ततश्चन्द्रावत्यादिमार्गेण श्रीचतुर्विधसङ्घेन वरिवस्यमानाः श्रीपूज्या बूजडीस्थाने पादाववधारयामासुः। तत्र च निर्व्यूढश्रीसङ्घप्राग्भारेण निर्निदानस्वर्णरूप्यवस्त्राश्वप्रमुखवस्तुवितानमहादानप्रदानपवित्रीकृतामेयस्वकीयस्वापतेयसारेण सङ्घपुरुषसाधुमोखदेवसुश्रावकवरेण श्रीउदयसिंहमहाराजप्रमुखराजलोकनागरिकलोकसंमुखागमनेन........ वाद्यमानेषु सर्वेष्वपि वाद्येषु श्रीसङ्घसहितश्रीदेवालयस्य प्रवेशकमहामहोत्सवो विरचयामासे। श्रीपूज्याश्च सपरिवारास्तत्र चतुर्मासीं चक्रुः॥

॥ समाप्तिमगमदत्रेयं गुर्वावली ॥

वृद्धाचार्यप्रबन्धावलिः ।

१.–श्रीवर्द्धमानसूरिप्रबन्धः ।

※

अथ वृद्धाचार्याणां प्रबन्धाः संक्षेपेण कथ्यन्ते–

१. अहन्नया कयाई सिरिवद्धमाणसूरिआयरिया अरन्नचारिगच्छनायगा सिरिउज्जोयणसूरिपट्टधारिणो गामाणुगामं दूइज्जमाणा अप्पडिबंधेण विहारेण विहरमाणा अब्बुयगिरितलहट्टीए कासद्दहगामे समागया। तयणंतरे विमलदंडनायगो पोरवाडवंसमंडणो देसभागं उग्गाहेमाणो सोवि तत्थेव आगओ। अब्बुयगिरिसिहरं चडिओ। सव्वओ पव्वयं पासित्ता पमुइओ चित्ते चिंतेइ–'अत्थ जिणपासायं करेमि'। ताव अचलेसरदुग्गवासिणो जोगी-जंगम-तावस-सन्नासि-माहणप्पमुहा दुट्ठा मिच्छत्तिणो मिलिऊण विमलसाहुं दंडनायगं समीवं आदत्ता। एवं वयासी–'भो विमल! तुम्हाणं इत्थ तित्थं नत्थि। अम्हाणं तित्थं कुलपरंपरायातं वट्टइ। अओ इहेव तत्र जिणपासायं काउं न देमि'। तो विमलो विलक्खो जाओ। अब्बुयगिरितलहट्टीए कासद्दहगामे समागओ। जत्थ वद्धमाणसूरी समोसड्ढो तत्थेव। गुरुं विहिणा वंदिऊण एवं वयासी–'भगवन्! इहेव पव्वए अम्हाणं तित्थं जिणपडिमारूवं वट्टइ त्ति नो वा?'। तओ गुरुणा भणियं–'वच्छ! देवयाआराहणेण सव्वं जाणिज्जइ। छउमत्था अम्हा कहं जाणंति'। तओ तेण विमलेण पत्थणा कया। किं बहुणा वद्धमाणसूरीहिं छम्मासीतवं कयं। तओ धरणिंदो आगओ। गुरुणा कहियं–'भो धरणिंदा! सूरिमंतअधिट्ठायगा चउसट्ठि देवया संति। ताण मज्झे एगोवि नागओ, न य किंचि कहियं, किं कारणं?'–धरणिंदेणुत्तं–'भगवन्! तुम्हाणं सूरिमंतस्स अक्खरं वीसरियं। असुद्धभावाओ देवया नागच्छंति। अहं तवबलेण आगओ'। गुरुणा उत्तं–'भो महाभाग! पुव्वं सूरिमंतं सुद्धं करेहि। पच्छा अन्नं कज्जं कहिस्सामि'त्ति। धरणिंदेणुत्तं–'भगवन्! मम सत्ती नत्थि सूरिमंतक्खरस्स सुद्धासुद्धं काउं तित्थंकरं विणा'। तओ सूरिणा सूरिमंतस्स गोलओ धरणिंदस्स समप्पिओ। तेण महाविदेहखित्ते सीमंधरसामिपासे नीओ। तित्थंकरेण सूरिमंतो सुद्धो कओ। तओ धरणिंदेण सूरिमंतस्स गोलओ सूरीण समप्पिओ। तओ वारत्तयसूरिमंतसमरणेण सव्वे अहिट्ठायगा देवा पच्चक्खीभूया। तओ गुरुणा पुट्ठा–'विमलदंडनायगो अम्हाणं पुच्छइ–अब्बुयगिरिसिहरे जिणपडिमारूवं तित्थं अच्छइ न वा'। तओ तेहिं भणियं–'अब्बुयादेवीपासायवामभागे अदब्भुदआदिनाहस्स पडिमा वट्टइ। अखंडक्खयसत्थियस्स उवरि चउसरपुप्फमाला जत्थ दीसइ, तत्थ खणियव्वं'। इय देवयावयणं सुच्चा गुरुणा विमलसाहुस्स पुरओ कहियं। तेण तहेव कयं। पडिमा निग्गया। विमलेण सव्वे पासंडिणो आहूया। दिट्ठा जिणपडिमा। सामवयणा जाया। तओ पासायं काउमारद्धं विमलेण। तओ पासंडेहिं भणियं–'अम्हाणं भूमिं पूरिऊण दव्वं देहि'। तओ विमलेण भूमिं दव्वेहिं पूरिऊण दव्वं दिन्नं। तओ पासायं। वद्धमाणसूरीहिं तित्थं प[य]डियं न्हवणपूयाइयं सव्वं कयं। तओ गयकालेण मिच्छत्तिणो तस्साधीणा जाया। तओ बावन्नजिणालओ सोवण्णकलसदंडधयसहिओ पासाओ निम्माविओ विमलेण। अट्ठारसकोडी तेवन्नलक्खसंखो दव्वो लग्गो। अज्जवि अखंडो पासाओ दीसइ॥ इय वद्धमाणसूरिप्पबंधो समत्तो॥

जायइ । पच्छा अभयदेवसूरिपोसहसालाए गओ । दिट्ठो सुविहियचूडामणिनिग्गंथो आयरिओ । तस्स सयासे दिक्खा गहिया । कमेण जोगवाहाविऊण गीयत्थो कओ । सव्वसंघअब्भत्थणावसाओ एगारह सउ सतसट्ठे वरिसे अभयदेवसूरिणा सूरिमंतो दिन्नो जिणवल्लहसूरि इइ से नामं विहियं । सव्वत्थ विहरइ विहिपक्खयापगो सुविहियचक्कचूडामणी । संवेगपरायणो विहरंतो मेइणि मेदपाडदेसे चित्तकूडदुग्गे संपत्तो । तओ मिच्छत्तबहुले लोओ जिणधम्मं कोवि न पडिवज्जेइ । तओ सूरी चामुंडादेवीपासाए ठिओ । तओ रयणीसमए चामुंडा आगया । कंपियं पासायं । गुरूणं उवसग्गं काउमाढत्ता । सूरिणा सूरिमंतबलेण खीलिया वसीकया । छागाइजीवबहुवलिं छंडावियं । जिणसासणस्स पभावणा जाया । देवया भणियं–'मम नामेण गच्छनामं कुणह, जहा संतुट्ठा महायं करेमि तुम्हं' । गुरुणा तहेव कयं । सव्वे लोया बोहिया । सम्मत्तं दिन्नं ।

५. अन्नं च–जिणवल्लहसूरिसमीवे एगो सावगो साहारण इइ नामो निद्धणो धम्मिओ चिट्ठइ । गुरुणा तस्स दसकोडिदव्वस्स परिग्गहो दिन्नो । रायपहाणपुत्तेण हसियं लोगममक्खं । एसो दरिद्दी गिहे गिहे भोयणं करेइ । एयस्स दसकोडिदव्वपरिग्गहं पस्सह । गुरुणो वि तारिसा । तओ गुरुणा उत्तं–'भो पहाणपुत्त नो हसियव्वं एयस्स । एसो तव मत्थयाओ [क]कर उत्तारिस्सइ त्ति कट्टु । अन्नया गुरुवयणाओ साधारणसावगेण पंचसयमयणसगडाणि गहियाणि । तम्मज्झे उवरि मयणं मज्झे सुवन्नं । विक्किय धणड्ढो जाओ । रायपहाणपुत्तो रन्ना दंडिओ, बंधिओ । दव्वं नत्थि तस्स सिरे कक्कर दिन्नं । साहारणसावगेण कोडिदव्वं दाऊण छोडाविओ । जिणपासायं कारियं चित्तकूडनगरे । जिणवल्लहसूरिणा पइट्ठियं । सेत्तुंजे संघाहिवो जाओ । साहारणसावगो देवगुरुपयभत्तो परमसुसावगो ।

अन्नं च – वागडदेसे दससहसगेहाणि सिरिमालाणं पडिबोहियाणि जिणवल्लहसूरिणा । पिंडविसुद्धिपगरणं च रइयं ॥ इति जिनवल्लभसूरिप्रबन्धः ॥४॥

५.–श्रीजिनदत्तसूरिप्रबन्धः ।

६. जिणवल्लहसूरिपट्टे जुगप्पहाणा जिणदत्तसूरिणो अणहिल्लपुरपट्टणे विहरिया । तत्थ सिरिनागदेवो नामसावगो परिवसइ । तस्स संसओ जाओ जुगप्पहाणस्स । सव्वे साहुणो अभिमाणवसेण नियनियगच्छे अप्पाणं आयरियं जुगप्पहाणत्तं वयंति । सम्मं न नज्जइ केणावि । तओ नागदेवसावगो गिरनारपव्वए अंबिकादेवीसिहरे गंतूण अट्ठमं तवं कयं । अंबिका पच्चक्खीभूया । तस्स हत्थे अक्खरा लिहिया । एवं वयासी–'भो नागदेवसावगा ! तुह चित्त जुगप्पहाणस्स संसओ अत्थि । गच्छह णं देवाणुप्पिया तुमं अणहिल्लपुरपट्टणे । सव्वाए पोसहसालाए चुलसीगच्छठियाणं आयरियाणं दावेसह नियहत्थं । जो हत्थक्खराणि वाएइ सो जुगप्पहाणो नायव्वो' । तओ देवावयणेण नागदेवो तत्थ गओ । सव्वाए पोसहसालाए आयरियाणं नियहत्थं दरिसियं, न कोवि वाएइ । तओ सो गओ खरतरगच्छाहिवस्स जिणदत्तसूरिणो पोसहसालाए गओ । वंदिओ सूरी दिट्ठो हत्थो । सूरिणा मोणं कयं । महाणुभागा नियगुणथुत्तिं न कुव्वंति, लज्जंति य । तओ सूरिणा तस्स समयोवासगस्स हत्थे वासक्खेवो कओ । गुरूण आएसवसाओ सीसेण इइ अक्खराणि वाइयाणि–

> दासानुदासा इव सर्वदेवा यदीयपादाब्जतले लुठन्ति ।
> मरुस्थलीकल्पतरुः स जीयाद् युगप्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥१॥

तओ नागदेवेण निस्संसएण तिपयाहिणीकरेमाणो वारंवारत्तवंदणेणं वंदिओ । सव्वविक्खाओ जाओ ।

७. अन्नया जिणदत्तसूरी अजयमेरुदुग्गं पइ विहरिओ । तत्थ चउसट्ठिजोगिणीपीठं । जया जिणदत्तसूरी इत्थ चिट्ठिस्सइ, तया अम्हाणं पूयासक्कारो न भविस्सइ त्ति कट्टु, जोगिणीहिं विचिंतिऊण चउसट्ठिनारियारूवं काऊण

वक्खाणमज्झे समागया । दुट्ठा देवीओ छलणत्थं । तओ सूरिणा सूरिमंतधिट्ठायगवसेण सीलिया थंभिया । उट्ठिउं न सक्का । तओ दयावसेण मुक्का । अन्नुन्नं वायाबंधो कओ । जत्थ अम्हे न तत्थ तुम्हे । अट्ठंठपीढे तुमे न गंतव्वं । पढमं एगं उज्जेणीपीढं । बीयं दिल्लीपीढं । तइयं अजयमेरदुग्गे पीढं । अट्ठं भरवच्छे । जोगिणीहिं भणियं–'भो भट्टारगा ! जो तुम्ह सीसो तुम्हं पट्टे सो अम्हाणं पीठे न विहरइ । जइ विहरइ तया वध-बंधादिकट्ठं सहइ'–त्ति नियमो जहा जिणहंससूरी । तओ जिणदत्तसूरीहिं तह त्ति कयं । तओ आयरिया सिंधुमंडले विहरिया । तत्थ इगलक्खासीइसहस्साणि ओसवालाणं गेहाणि पडिबोहियाणि । तओ उच्चनगरे गया । तत्थ मिच्छदिट्ठी हिं एगो माहणो छुहोअरणो रोगघत्थो मुयमाणो जिणालए मुक्को मडओ । तओ संघेहिं जिणदत्तसूरी विन्नत्तो–'भगवन् ! माहणेहिं दुट्ठचं विहियं । किं किज्जइ ?'. तओ गुरुणा परकायप्पवेसविज्जाए जिनालयाओ मडयं माहणं सजीवं काऊण नारायणपासाए खित्तं । माहणा सचिंता जाया । गुरुसमीवे आगया माहप्पं दट्ठूण चरणे पडिया । पुणरवि गुरुणा मडयं सजीवं काऊण सयमेव मसाणभूमीए गंतूण पडिओ । जिणसासणस्स महिमा कया । सव्वे माहणा सावया जाया । मिच्छत्तं परिहरियं । एवं जेसलमेर–राहडमेर–मम्मणवाहण–भरवट्टपमुहनगराणि विहरिऊण ठाणे ठाणे पभावं काऊण पंचनदे पत्ता । जत्थ पंच नईओ मिलियाउ । सोमरो नाम जक्खो पडिबोहिओ । जया जिणवल्लहसूरी सग्गं गओ तया अट्ठायरिया गच्छावासे । एगो आयरिओ पुव्वदिसाए रुद्दओलीनगरे जिणसेखरसूरि इइ नामेण भट्टारगो रुद्दपल्लीगच्छाहिवो जाओ । जिणवल्लहसूरिपदे अन्ने सत्तायरिया जालउरनगरंमि मिलिऊण मंतं इइ कयं । समग्गसंघगच्छपरिवारिया बीयं भट्टारगं करिस्सामि, जिणवल्लहसूरिपट्टे । तओ दक्खिणदेसे देवगिरिनगरे जिणदत्तगणी चउमासी ठिओ अत्थि । तं सपभावगं गीयत्थं पट्टजुग्गं जाणिऊण संघेहि आहूओ । पट्टठावणा दो मुहुत्ता गणिया । तओ संघपत्थणावसाओ जिणदत्तगणी चलिओ । मालवदेसे उज्जेणीनयरीए आगओ विहरंतो । तंमि अवसरे जिणवल्लहदव्वगुरुस्स कचोलायरियस्स अंतकालो वट्टइ । तओ कचोलायरिएण जिणदत्तगणिपासाओ आराहणा गहिया । सुहज्झाणेण मओ । सोहम्मे कप्पे सुरो जाओ । जिणदत्तगणी अग्गे चलिओ । जीहरणिनामनगरउज्जाणे सुण्णदेवालए ठिओ । तत्थ पडिक्कमणं काउमारद्धं । तत्थ कचोलायरियस्स जीवो देवो उद्दंडपयंडपवणलहरीहिं खुब्भमाणो पयडीभूओ । गुरुणा उत्तं–'कोसि ?' । तेणुत्तं–'अहं तुहप्पसायाओ देवत्तं पाविओ' । तओ तेण जिणदत्तगणीणं सत्त वरा दिन्ना । तंजहा–तुह संघमज्झे एगो सड्ढो महड्ढिओ होही, गामे वा नगरे वा.–इय पढमवरो ।१। तुह गच्छे संजईणं रिउपुप्फं न हविस्सइ–बीओ वरो ।२ तुह नामेण विज्जुलिया न पडिस्सइ–तइओ वरो ।३। तुह नामेण आंधीवघूलाइ परिभरो टलिस्सइ–चउत्थो वरो।४। अग्गिथंभो पंचमो ।५। सैन्यजलथंभो छट्ठो ।६। सप्पविसो न पहविस्सइ–सत्तमो वरो ।७। अन्नं च पढमुहुत्ते पट्टे मा उवविससि, तुच्छाऊ भविस्ससि । बीयमुहुत्ते तु जुगप्पहाणजिणसासणप्पभावगो भविस्सइ (०सि) । तुह गच्छे दससयसाहुणो सवगणिप्पमुहा, धम्मदेवगणायरियाइ पयत्था । मत्समया साहुणीणं संपया भविस्सामि । इइ वयणं कहिऊण देवो अदिट्ठो जाओ । तओ गणी बीयमुहुत्ते जालउरदुग्गे एगारहसयइगुणहत्तरे वरिसे जिणदत्तसूरी पट्टे ठविओ सव्वसंघेहिं । जारिसो जाओ । पुणो विहरंतो अजयमेरदुग्गे पत्तो । पडिक्कमणमज्झे विज्जू उज्जोयं करेमाणा थंभिया । जिणदत्तसूरी सव्वाउयं पालित्ता सग्गं गओ । तत्थेव अज्जवि थुंभो वट्टइ ॥ इति संक्षेपेण जिणदत्तसूरिप्रबन्धः ॥५॥

६.–श्री जिनचन्द्रसूरिप्रबन्धः ।

८. जिणदत्तसूरिपट्टे जिणचंदसूरी मणियालो जाओ । तस्स भालयले नरमणी दीपइ । सो वि जेसलमेरदुग्गाओ दिल्लीनयरवासिसंघेण आहूओ । तओ सूरिणा संघस्स लेहो पेसिओ–अम्हाणं तत्थ गए जिणदत्तसूरीणं

जोगिनीपीठे विहारो निसिद्धो तेहिं। तओ ढिल्लीपुरसंघस्स अब्भत्थणावसेण जिणचंदसूरी आगओ जोगिनीपीठे। पवेसमहोच्छवमज्झे जोगिनीहिं छलिओ मओ। अज्जवि पुरातनढिल्लीमज्झे तस्स थुंभो अच्छइ। संघो तस्स जत्ता-कम्मं कुणइ॥ इतिजिनचन्द्रसूरिप्रबन्धः॥६॥

७.–जिनपतिसूरिप्रबन्धः।

९. जिणचंदसूरिपट्टे सिरिजिणपतिसूरी हुत्था। सो वि बारवरिसवइठिओ पट्टे ठाविओ। विहरंतो आसीनगरे समागओ। संघेहिं पवेसमहोच्छओ कओ महाविस्थरेण। पुणो बिंबपइट्ठाकारावणमारद्धं संघेहिं। तयणंरे एगो विज्जा-सिद्धो जोगी आगओ भिक्खट्ठा। विग्गचित्तो संघो कोवि तस्स भिक्खं न देइ। तओ सो रुट्ठो। मूलनायगबिंबो कीलिओ, गओ। पइट्ठालग्गवेलाए सव्वोवि संघो उट्ठावेउं लग्गो परं न उट्ठेइ बिंबो। तओ संघो चिंताउरो जाओ। जो-गिणं पिच्छंति, कत्थवि न लद्धो। तया साहुणीणं मज्झे जा महत्तरी अज्जिया सा आयरियं वंदित्ता एवं वुत्ता समाणा–'भगवन्! संघो हसइ, अम्हाणं भट्टारगो बालो तारिसी विज्जा नत्थि, किं किज्जइ'। तओ जिणपतिसूरी सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठेइत्ता सूरिमंतेण बिंबस्स मत्थए वासक्खेओ कओ। तक्कालं एगेण सावगेण उट्ठाविओ बिंबो। बिंबपइट्ठामहूसवो जाओ। खरयरगच्छे जयजयसद्दो उच्छलिओ। अन्नं च–रायसभाए छत्तीसवादा जिया। जिनपति-सूरिणा पुणो खरयरगच्छसमायारी उद्धरिया। महापभावगो जाओ। जिणवल्लहसूरिकयस्स संघपट्टयपगरणस्स टीका जेण कया। इति जिनपतिसूरिप्रबन्धः॥७॥

८.–जिनेश्वरसूरिप्रबन्धः।

१०. जिनपतिसूरिपट्टे नेमिचन्द्रभंडारी जिणेसरसूरीणो (?) पिया संजाओ। तस्स दो सीसा संजाया। एगो सिरि-मालो जिनसिंहसूरी। बीओ ओसवालो जिणप्पबोहसूरी। अन्नया जिणेसरसूरी पल्हूपुरे नियपोसहसालाए उवविट्ठो संतो सूरिस्स दंडगो अकम्हा तडतडित्ति सद्दं काऊण दुहाखंडो संजाओ'। तओ सूरिणा भणियं–'भो सीसा! एस सद्दो कुओ संजाओ?'। अवलोइऊण सीसेहिं कहियं–'सामि! तुम्ह हत्थदंडओ दुहा संजाओ। तओ चिंतियं आयरिएण–'मम पच्छा दो गच्छा होहंति। तओ सयमेव नियहत्थे गच्छं करिस्सामि'। इत्थेव पत्थावे सिरिमालसंघेहिं मिलिऊण चिंतियं–इत्थ देसे कोई गुरू नागच्छइ। पयलहु गुरुसयासे गुरुं आणेमो। मिलिऊण सयलसंघो गुरुसमीवं गओ। वंदिऊण आयरियं विन्नत्तं सयलसंघेहिं–'भो सामि! अम्ह देसे कोवि गुरू नागच्छइ। तओ अम्हे किं करेमो। गुरुं विना सामग्गी न हवइ'। तेण गुरुणा पुव्वनिमित्तं नाऊण जिणसिंघगणी लाडणुवाउत्ती सिरिमालवंसुब्भवो नियपट्टे ठविओ। नामधेयं कयं जिनसिंघसूरि त्ति। कहियं–'एए सावया तुम्ह मए समप्पिया। गच्छह संघसहिओ'। तओ वंदिऊण गुरुं सावयसहिओ जिनसिंघसूरी समागओ। सव्वसिरिमालसंघेहिं कहियं–अज्जप्पभिइ एस मम धम्माय-रिओ। अओ दो गच्छा संजाया। बारससयअसीए संवच्छरे पल्हूपुरे नयरे जिणेसरसूरिणा जिनसिंघसूरी कओ। पउमावईमंतो उवएसिओ। केवइ वरिसेहिं जिनेसरसूरी देवलोयं गओ॥८॥

९.–जिनसिंघसूरिप्रबन्धः।

११. जिनेसरसूरिपट्टे जिनसिंघसूरी संजाओ। पउमावईमंतसाहणतप्परो निच्चं झाएइ। झाणावसाणे पउमावइए भणियं–'तुह छम्मासाऊ वट्टइ'। तओ सूरिणा भणियं–'मम सीमाणं पयवरीभूया। कहसु मम पट्टे को होही?' तओ पोमावईए भणियं–'गच्छह मोहिलवाडीए नयरीए तांबीगोत्तपवित्तकारगो महाधरनामगो महड्ढिओ सावगो अच्छइ। सप्पुत्तो रयणपालो। तस्स भज्जासेतहदेवीउयरे सुहडपाल इइ नामधेओ सव्वलक्खणसंपन्नो, तुह पट्टे जिणपहसूरी

नामभट्टारगो जिणसासणस्स पभावगो होही। इय वयणं सुचा जिनसिंघसूरी तत्थ गओ। महया महोच्छवेण साव-गेण पुरप्पवेसो कओ। पच्छा महाधरसिट्ठिगिहे गओ सूरी। दट्ठूण आयरियं सचट्टपयं सम्मुहं गच्छइ। वंदिऊण आसणे निमंतिओ–'भगवन्! ममोपरि महप्पसाओ तुमे कओ जेण मम गिहे समागया। परं आगमणप्पयोयणं वयह'। तओ गुरुणा भणियं–'भो महाणुभाव! तुम्ह गिहे सीसनिमित्तं समागओहं। मम एगं पुत्तं वियरह'। तओ तेण तह त्ति पडिवण्णं। तओ तेण अन्ने पुत्ता संसकारं काऊण वत्थादिणा आणीया। कहियं–'एयस्स मज्झे जो तुम्हाणं रोयइ तं गिण्हह'। गुरुणा भणियं–'एए पुत्ता दीहाउया तुम्ह गिहे चिट्ठंतु। परं जो मुहडयालो वालो तं वि-यरह'। तहेव कयं, विहाराविओ, सुमुहुत्ते दिक्खिओ य। तेरहसयछवीसावरिसे दिक्खं सिक्खं दाऊण पउमावईमंतो समप्पिओ। कमेण गीयत्थचूडामणी संजाओ। तेरहसयइकतालवरिसे किढिणाणानगरे जिणसिंघसूरिणा सुमुहुत्ते नियपट्टे थप्पिओ जिणप्पहसूरी। जिणसिंघसूरी देवलोयं गओ। इति जिणसिंघसूरिप्रबन्धः॥९॥

१०.–जिनप्रभसूरिप्रबन्धः।

१२. अहुणा जिणपहसूरिपबंधो भण्णइ–इओ य जिनसिंघसूरिपदे जिणपहसूरी संजाओ। तस्स पुव्वपुण्णवसा पउमावई पचक्खा संजाया। एगया पउमावई पुच्छिया सूरीहिं–'कहसु भगवइ! मम कत्थ नयरे उन्नई भविस्सइ'। तओ पउ-मावइए भणियं–'तुम्ह विहारो जोगिनीपीढे ढीलीनयरे महुच्छओ भविस्सइ, तत्थ तुम्हे गच्छह'। तओ गुरुणा विहारो कओ। कमेण जोगिणीपुरे [स]मागओ वाहि वा(सा ?)हापुरे उत्तिण्णो। एगया सूरी वियारभूमिं गओ संतो, तत्थ अणारिया मिच्छादिट्ठिणो परामरिसं काउमारद्धं लेट्ठुमाईहिं। तओ गुरूहिं भणियं–'पउमावइ! सुट्टु महुच्छओ संजाओ। तओ पउमावईए तस्स वहगस्स लेट्ठुमाईहिं तस्सेव पूया कया। ते अणायरिया पलायमाणा महम्मदसाहिणो समीवे गया। कहियं सूरिन[इ]यर। तओ चमकियचित्तो पुच्छेइ–'कत्थ सो अत्थि पुरिसो ?' तेहिं निवेइयं–'वाहिं पएसे दिट्ठो अम्हेहिं'। तो पहाणपुरिसा आइट्ठा–'गच्छह तुब्भे, तं आणेह इत्थ, जहा तं पस्सामि'। तओ ते गंतूण गुरुसमीवे एवं निवे-इयं–'आगच्छह भो सामि! अम्ह पहुसमीवे। तुमे पयलह'। तओ आयरिया पउलिदुवारे गंतूण ठिया। भिच्चेहिं गंतूण निवेइयं। जाव ते साहिणो निवेययंति, ताव सूरि[हिं] सीसाण कहियं–'अहं कुंभगासणं करोमि। जया साहि समागच्छइ तया तुम्हेहिं कहियव्वं–एस मम गुरू। तओ सो कहिस्सइ–जारिसो आसि तारिसं कुणह। तओ तुब्भे अक्खरत्थं धरिऊण कंधे ठवेह'। इय वुत्तूण गुरू आणमरिसओ। कुंभसमाणो संजाओ। तओ आगंतूण महम्मदसाहि सीसं [जं]पइ–'कत्थ तुज्झ गुरू ?'। तेण कहियं 'अग्गओ दीसइ तुम्हाणं'। तओ साहिणा कहियं–'भो! जारिसो पुव्विं आसि तारिसं कुणह'। तओ सीसेण वत्थं सरसं काऊण सज्जीकया। उट्ठिऊण सूरिणा आसीसा दिन्ना धम्मलाहस्स। तओ वहासंलाओ संजाओ दुन्हवि। तओ साहिणा भणियं–'भो सामि! अम्ह पाणप्पिया बालादे राणी अच्छइ। तस्स वितरो लग्गो आसि। न सा वत्थाणि गिन्हइ नियदेहे, न सुम्भूसा वि कुणइ। तस्स तुम्हे पसिऊण सज्जीकुणह। मए मंतजंततिगिच्छगा आहूया परं जं जं पासइ तं तं लेट्ठु-लट्ठिणा हणइ। अहुणा पसायं काऊण तुम्हे पासह।' गुरुणा भणियं–'तुब्भे गच्छह तस्स समीवे, एवं निवेएह–तुम्हं समीवे जिणप्पहसूरी समागच्छइ'। साहि[णा] गंतूण कहियं तं वयणं। सोऊण सहसा उट्ठिया। कहियं–'दासि! आणेह वत्थं'। तओ चेडीहिं वत्थं आणिऊण परिहावियं। तओ साही चमक्किओ। आगंतूण गुरुस-मीवे साहियं–'आगच्छह तस्स समीवे पासह तं'। तओ गओ सूरी। तं दट्ठूण निवेइयं सूरीहिं–'रे दुट्ठ! कत्थ तुम इत्थ ? गच्छ तुमं अस्स वासाओ'। तेण निवेइयं–'कहं गच्छामि अहं, सुदट्ठु गिहं लद्धं'। गुरुणा भणियं–'अन्नत्थ गिहं नत्थि ?' तेण भणियं–'नत्थि एयारिसो'। तओ गुरुणा मेहनाओ खित्तवालो आहूओ, कहियं–'एयं दूरीकुणसु'। तओ मेहनाएण सो वितरो गाढं पीडिओ। तेण वितरेण एवं निवेइयं–'अहं सुहाउगे मम किंचि मग्गं पयच्छह'। 'किं पयच्छामि ?'।

तओ कहियं तेण–'मम हिंसाईणि पयच्छह' । गुरुणा भणियं–'मम अग्गे एवं मा भणह । अहं तुम्हाणं दढबंधणेण बंधामि' । तओ सूरिणा मंतो जविओ । तओ कहियं–'सामि ! तुमं सव्वजीवदयापालगो ममं कहं पीडेहि' । सूरिणा भणियं–'गच्छ इत्थ ठाणाओ' । तेण कहियं–'किंचिवि ममं पयच्छह' । तओ भणियं–'किं पयच्छामि ?' । घियगुड-सहियं चुन्नं पयच्छह मम' । तओ साहिणा कहियं पयच्छामि । गुरूहिं भणियं–'कहं जाणामि तुमं गओ ?'. कहियं तेण–'मम गच्छंतस्स असुगपिप्पलस्स साहा पडिस्सइ, तओ जाणिज्जाहि' । तओ रयणीसमए तं चेव जायं । पभाए सज्जीजाया चालादेराणी । दट्ठूण साहिणो म[हा]हरिसो जाओ । निवेइयं तस्स–'पिए तुमं कत्थ आसि जओ न एस महाणुभागो आगओ हुंतो' । तओ एवं सोऊण भणियं तीई–'सामि ! एस मम पियासारिसो, जया एस महप्पा आगच्छइ तुम्हपासे तया तुमं एयस्स आगइसागई करिस्ससु, अद्धासणे निवेसेह' । तओ तेण तह त्ति पडिवण्णं । एस राया गुरुसमीवे गच्छइ । गुरुं नियगिहे आणेइ । अद्धासणं दलइ । एवं सुहंसुहेणं वच्चइ कालो । तओ सव्वपासंडाण पवेसो जाओ ।

१३. इत्थ पत्थावे वाणारसीओ समागओ राघवचेयणो बंभणो चउदसविज्जापारगो मंतजंतजाणओ । सो आगंतूण मिलिओ भूवं । साहिणा बहुमाणो कओ । सो निच्चमेव आगच्छइ रायसमीवे । एगया पत्थावे सहा उवविट्ठा । सूरि–राघवचेयणपमुहा कहाविणोयं चिट्ठंति । तओ राघवचेयणेण चिंतियं दुट्ठसहावं एयं जिणप्पहसूरिं दोसवंतं काऊण निवारयामि इत्थ ठाणाओ । एवं चिंतिऊण साहिहत्थाओ अंगुलीयं विज्जाबलेण अवहरिऊण जिणप्पहसूरिरयहरणमज्झे पक्खित्तं, जहा सूरी न जाणइ । तओ पउमावईए निवेइयं सूरिस्स । तुम्हाणं तक्करीदाउकामो राघवचेयणो । साहिपासाओ मुद्दारयणं गहिऊण तुम्ह रयहरणमज्झे ठविओ । सावहाणा हवह तुब्भे । तओ सूरिणा तं मुद्दारयणं गहिऊण राघवचेयणस्स सीसवत्थे पक्खित्तो जहा सो न जाणइ । तओ महम्मदसाहि पासइ, मुद्दारयणं नत्थि । पच्छा अग्गओ पासइ । न पासइ तं मुद्दारयणं । साहिणा निवेइयं–'इत्थ मम मुद्दारयणं आसि, केण गहियं ?' । तओ राघवेण निवेइयं–'साहि ! एयस्स सूरिसमीवे अच्छइ' । सूरिं पइ साहि मग्गिउं लग्गो । सूरिणा भणियं–' साहि एयस्स समीवे अच्छइ' । तेण नियवत्थाणि दंसियाणि । सूरिणा भणियं–'साहि अस्स सीसे अच्छइ' । तओ मुद्दा अवलोइया । गहियं साहिणा । कहियं राघवचेयणस्स–'धन्नोसि णं तुमं सच्चवाई । सयं गहिऊण जिणपहसूरिस्स दूसणं देसि'. तओ सामसुहो संजाओ । नियगिहं पत्तो ।

१४. अन्नया चउसट्ठिजोगिणी सावियारूवं काऊण सूरिसमीवे छलणत्थमागया । ता सामाइयं गहिऊण वक्खाणं निसुणंति । पउमावइए निवेइयं सूरिस्स–'तुम्ह छलणत्थं एयाओ चउसट्ठिजोगिणीओ समागयाओ' । सूरीहिं अवलोइयाओ ताओ । पासंति अणमिसनयणं सूरिगयदिट्ठीओ वक्खाणरसलुद्धाओ । तओ सूरीहिं कीलियाओ ताओ सव्वाओ । उवएसपच्छा सव्वे सावया सावियाओ वंदिय नियगिहे पत्ताओ । ताओ आमणाओ जओ उवविट्ठंति तओ आसणसहियं लग्गं पासंति । पासिचा पुणरवि उवविट्ठाओ । पुणरवि सूरीहिं भणियं–'साविया ! रिसिणो वियारभूमि-विहारभूमिवेला संजाया । तुब्भे वंदह' । तओ तेहिं भणियं–'सामि ! अम्हे तुम्ह छलणत्थमागया । परं तुब्भे अम्हे छलिया । कुणह पसायं, मोयह अम्हाणं' । सूरिणा भणियं–'जइ मम वाया दलह तओ मुचामि तम्हा' । 'वयह का वाया ?' । 'जइ मम गच्छाहिवइणो तुम्ह जोगिणीपीठे वचंति तेसिं तुब्भे न उवद्दवं कुणह, तओ मुंचामि' । तेहिं तह चि पडिवन्नं । ताओ उक्कीलियाओ नियनियठाणं गयाओ । तओ आयरिया सव्वत्थ गच्छंति । न उवद्दवो जायइ तस्स । ताओ नियवायावद्धाओ चिट्ठंति ।

१५. अन्नया सहाउवविट्ठो सूरी । गुरुसाणाओ भविओ एगो कलंदरो समागओ । तेण आगंतूण नियकुलहं उत्तारेऊण गयणे रिक्खियाओ । कहियं महम्मदसाहिणो–'साहि ! मो कोवि अत्थि तुम्ह सहाए, जो एयं उत्तारेइ ?'

साहिणा सहा अवलोइया । तओ सूरी महम्मदसाहिं पइ एवं वयासी—'पस्सह राया जं मए एयस्स कायव्वं'। तओ सूरिहिं आगासे रयहरणं खिविओ । गंतूण तस्स कुल्लहस्स मत्थए पाडियाओ । तओ तेण कलंदरेण पुणरवि एगाए इत्थीए जलघडयमाणीयमाणं सीसे आगासे थंभियं अंतलिक्खे । कहियं साहिस्स । पुणरवि सूरीहिं तं घडयं भंजिऊण जलं कुंभायारं कयं । साहिणा भणियं—'जलस्स कणफुमियं कुणह' । तेण तहेव कयं । कलंदरस्स अहंकारो गओ । पुणरवि सहोवविट्ठेण साहिणा भणियं—'अज्ज मे महोरविट्ठा जाणया कहसु, पभाए केण मग्गेण अहं वच्चामि रेवाडीए ?' । तओ सव्वेहिं नियनियबुद्धीए चिंतिऊण लिहिऊण य दिन्नं चिट्ठीए साहिस्स । साहिणा भणियं—'सूरि ! तुम्हमवि दलह' । सूरिणा वि नियबुद्धीए चिट्ठी दत्ता । तओ सव्वाओ नेऊण नियउत्तरिए बद्धाओ । साहिणा चिंतियं—जहा एए सव्वे असच्चवाइणो हुंति तहा करेमि । एवं चिंतिऊण चंदर(ण ?)ुरजाओ भंजिऊण निग्गओ । गंतूणं साहिं कीडा कया । एगट्ठाणोवविट्ठा सूरिपमुहा सव्वे आहूया । कहियं च तेसिं—'वायह नियनियलिहियं' । तेहिं सव्वेहिं नियनियलिहियं वाइयं । सूरिस्स कहियं—'नियलेहं वायह'। तओ वाइयं आयरिएण—'चंदण(र ?)ुरजाओ भंजिऊण कीडं काऊण वडपायवस्स अहे निस्सामं काही'—एवं निसुणिऊण चमक्करिओ साही—'भो एस आयरिओ परमेसरसारिसो । एयस्स सेवं देवा वि कुणंति' । तओ साहिणा भणियं—'जिणप्पहसूरि ! एस बटो सीयच्छाओ मणोहरो तहा करेह जहा मम सह गच्छइ' । तहेव कयं । तओ पंचकोसमाणंतरं सूरिणा भणियं—'साहि ! एयं तरुं विसज्जेह । जहा नियठाणं गच्छइ' । साहिणा विसज्जणं कयं तस्स रुक्खस्स ।

१६. अन्नया कन्नाणापुरस्स महावीरो मिच्छेहिं नेऊण साहिपोलिदुवारे पाडिओ अहोमुहं । तस्सोवरि लोया आयंति जंति । तओ जिणपहसूरी समागच्छइ । पासइ तदवत्थं पडिमं । मज्झे गंतूण साहिस्स निवेइयं सूरीहिं—'साहि ! एगं पत्थयामि तुम्ह समीवं, जइ दलह' । तओ साहिणा भणियं—'मग्गह जं देमि' । तओ पओलिदुवारट्ठिओ मग्गिओ महावीरो । तओ साहिणा नियसमीवे आणाविओ महावीरो । अहो सं पासइ अच्चुयपरं चिराहं । सूरिं पइ एवं भणइ—'नो दाहामि तुम्हाणं' । तओ सूरीहिं भणियं—'अम्हाणं आगमणं निरत्थयं जायं' । तओ साहिणा कहियं—'जइ एयं मुहं बुल्लावेह तया दाहामि' । सूरीहिं भणियं—'जइ एयस्स पूयासक्कारं कुणह तओ भासइ' । साहिणा तहाकयं । पुप्फोवयारं काऊण हत्थे जोडिऊण भणइ—'सामिय पसायं वयह' । तओ दाहिणहत्थो पसारिऊण एवं भणइ महावीरो—

विजयतां जिनशासनमुज्ज्वलं, विजयतां सुधाधिपवाङ्मया ।
विजयतां भुवि साहि महम्मदो, विजयतां गुरुसूरिजिनप्रभः ॥१॥

तओ गुरुमुहाओ अत्थं आयन्निऊण तुट्ठो साही—'भयवं एयस्स किं दलामि ?' । सूरीहिं भणियं—'साहि ! एस देवो सुरहिदव्वेहिं तूसइ' । तओ साहिणा भणियं—'इमं गामं दिन्नं, नगर-मसाटो' । तं सावया पासमूहं नेऊण थुवो साहंति सया । सुलताणेण तस्स पासाओ कारविओ । सायरविंधसंभूओ जिओ । सुलताणस्स करमुद्दियाइसएण रायचेयणस्स सीसे ठाविओ । संघस्स दरिसियं । एसो सुलताणो सेनुंजे नेऊण संपाविओ कओ । सायलिरक्खो दुद्देहि वरिसाविओ । अमावसिनिसीहाउ पुण्णिमानिसी कया ।

गंदेलपुरे नयरे तेरस्सए पउत्ताले । जंगलया सिरमत्ता ठविया जिणसासणे धम्मे ॥१॥

१६. तेसिं च मज्झं मज्झ—एगा खंडेल्लवालकुला सिंधुसमा दव्वं मग्गिउं गुरुवंदाववसए कुमाला चिट्ठंति । वाराए कुणंताणं बहुया वानरा आया । गुरु बहुपत्ते ठिओ । तस्स महुरयपट्टं गेहवा अणुकारिया । तओ मज्झं कारिऊण विविणियं लग्गा । तेसिं मउयसत्ता विक्खाया । तेहिं य गुरुउवएसा मज्झरकागे गओ । एवं पुण तं परिमत्तुं भमता तं चेव ववहारमाणा ठिया । तओ जिणप्पहसूरी पत्तावखंडरण्णा पडिबोहिओ उंगलपुरो ॥

॥ इति श्रीजिनप्रभसूरिप्रबन्धः ॥१८॥

खरतरगच्छगुर्वावलीगतविशेषनाम्नां सूचिः ।

गुर्वावलीगतनृपति-मन्त्रि-दण्डनायकादि-सत्ताधारिजनानां नाम्नां पृथक् सूचिः ।

गुर्वावलीसमुपलब्धस्थलादिज्ञापकानां विशेषनाम्नां पृथक् सूचिः।

गुर्वावलीस्थितानामवतरणरूपपद्यानामनुक्रमः ।